# इकाई 1.
# मानवाधिकार का सम्प्रत्य, प्रकृति एवं क्षेत्र
# Unit.1 Concept, Nature and Scope of Human Right

**1.1 प्रस्तावना**

**1.2 उद्देश्य**

**1.3 मानवाधिकारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि-**

**1.4 मानवाधिकारों का सैद्धान्तिक स्वरूप-**

**1.5 मानवाधिकार की परिभाषाऐं-**

**1.6 मानवाधिकारों की प्रकृति-**

**1.7 अभ्यास प्रश्न**

**1.8 मानवाधिकारों का क्षेत्र-**

**1.9 सारांश-**

**1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-**

**1.11 संदर्भ सूची-**

**1.12 निबन्धात्मक प्रश्न-**

## 1.1 प्रस्तावना

मानवाधिकारों की अवधारणा मानव सभ्यता के विकास के साथ निरंतर विकसित होती रही है। यद्यपि "मानवाधिकार" शब्द आधुनिक काल की देन है, तथापि इसके मूल तत्व प्राचीन काल से ही मानव चिंतन का अभिन्न अंग रहे हैं। मानव गरिमा, न्याय, समानता और करुणा जैसे मूल्यों की अभिव्यक्ति प्राचीन मिस्र, मेसोपोटामिया, भारत, चीन तथा यूनान की सभ्यताओं में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। भारतीय परंपरा में वैदिक साहित्य, उपनिषद, बौद्ध एवं जैन दर्शन ने अहिंसा, समता और करुणा जैसे सिद्धांतों के माध्यम से मानवाधिकार चेतना को सुदृढ़ आधार प्रदान किया। सम्राट अशोक के शिलालेखों में धार्मिक सहिष्णुता और प्रजा-कल्याण की भावना मानव गरिमा के संरक्षण का प्रारंभिक उदाहरण प्रस्तुत करती है। इसी प्रकार यूनानी दार्शनिकों तथा रोमन 'प्राकृतिक विधि' की अवधारणा ने मानवाधिकारों के बौद्धिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

मध्यकाल में यद्यपि मानवाधिकारों का विकास अपेक्षाकृत सीमित रहा, तथापि 1215 ई. की मैग्ना कार्टा, पिटीशन ऑफ राइट (1628) तथा बिल ऑफ राइट्स (1689) ने शासकीय निरंकुशता पर नियंत्रण स्थापित कर व्यक्तिगत स्वतंत्रताओं को विधिक मान्यता प्रदान की। आधुनिक युग में अमेरिकी स्वतंत्रता घोषणा (1776) और फ्रांसीसी मानव एवं नागरिक अधिकारों की घोषणा (1789) ने स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों को सार्वभौमिक रूप में प्रस्तुत किया। बीसवीं शताब्दी के विश्व युद्धों ने मानवाधिकारों के अंतर्राष्ट्रीय संरक्षण की आवश्यकता को स्पष्ट किया, जिसके परिणामस्वरूप संयुक्त राष्ट्र की स्थापना और 1948 में मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को अंगीकृत किया गया। इसके पश्चात मानवाधिकारों का स्वरूप नैतिक, विधिक, सार्वभौमिक और बहुआयामी बनता गया। आज मानवाधिकार न केवल व्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करते हैं, बल्कि राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा सामूहिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को भी समाहित करते हैं। इस प्रकार मानवाधिकार आधुनिक लोकतांत्रिक और न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की आधारशिला के रूप में स्थापित हो चुके हैं।

## 1.2 उद्देश्य-

इस इकाई के अध्ययन के बाद शिक्षार्थी –

1. मानवाधिकारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि समझ सकेंगे।
2. मावनाधिकार का अर्थ, परिभाषा एवं मानवाधिकारों के स्वरूप को जान पाऐंगे।
3. मानवाधिकार के सिद्वान्त एवं प्रकृति को स्पष्ट कर सकेंगे।
4. मानवाधिकार के क्षेत्रों की पहचान कर सकेंगे।
5. मानवाधिकार पर चर्चा एवं वाद-विवाद कर सकेंगे।

## 1.3 मानवाधिकारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि-

प्राचीन काल में मानव गरिमा और न्याय के विचार मिस्र, मेसोपोटामिया, भारत, चीन तथा यूनान की सभ्यताओं में देखने को मिलते हैं। भारत में वैदिक साहित्य, उपनिषद, बौद्ध और जैन दर्शन में अहिंसा, करुणा और समानता के सिद्धांत मानवाधिकार चेतना के प्रारंभिक रूप माने जा सकते हैं। सम्राट अशोक के शिलालेखों में धार्मिक सहिष्णुता और प्रजा-कल्याण की भावना स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। यूनान में प्लेटो और अरस्तू तथा रोम में 'प्राकृतिक विधि' (Natural Law) की अवधारणा ने मानव अधिकारों के बौद्धिक आधार को सुदृढ़ किया।

मध्यकाल में मानवाधिकारों का विकास सीमित रहा, किंतु 1215 ई. की **मैग्ना कार्टा** को एक महत्वपूर्ण पड़ाव माना जाता है, जिसने शासक की निरंकुश शक्ति पर विधिक नियंत्रण स्थापित किया और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के सिद्धांत को मान्यता दी। इसके पश्चात इंग्लैंड में **पिटीशन ऑफ राइट (1628)** और **बिल ऑफ राइट्स (1689)** ने नागरिक अधिकारों के संरक्षण को बल प्रदान किया।

आधुनिक युग में मानवाधिकारों की अवधारणा को निर्णायक दिशा **अमेरिकी स्वतंत्रता घोषणा (1776)** और **फ्रांसीसी मानव एवं नागरिक अधिकारों की घोषणा (1789)** से प्राप्त हुई। इन घोषणाओं ने स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व जैसे सिद्धांतों को सार्वभौमिक रूप में प्रस्तुत किया और राज्य की वैधता को नागरिकों के अधिकारों से जोड़ा।

बीसवीं शताब्दी में प्रथम और द्वितीय विश्व युद्धों के भीषण अनुभवों ने मानवाधिकारों के अंतर्राष्ट्रीयकरण की आवश्यकता को स्पष्ट किया। इसके परिणामस्वरूप 1945 में संयुक्त राष्ट्र की स्थापना हुई और 1948 में **मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा** को अंगीकृत किया गया। यह घोषणा मानवाधिकारों के इतिहास में एक मील का पत्थर सिद्ध हुई, जिसने नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को वैश्विक मान्यता प्रदान की।

इसके पश्चात 1966 में **नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संधि** तथा **आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संधि** को अपनाया गया। वर्तमान में मानवाधिकारों की अवधारणा क्षेत्रीय संधियों, संवैधानिक व्यवस्थाओं और अंतर्राष्ट्रीय न्यायिक संस्थाओं के माध्यम से निरंतर विकसित हो रही है।

## 1.4 मानवाधिकारों का सैद्वान्तिक स्वरूप-

मानवाधिकारों का नैतिक सिद्धांत प्रत्येक व्यक्ति के लिए न्यूनतम गरिमापूर्ण एवं सुखमय जीवन की अनिवार्य परिस्थितियों की पहचान से संबद्ध है। यह सिद्धांत उन मौलिक आवश्यकताओं को रेखांकित करता है, जिनकी पूर्ति के बिना मानव गरिमा की रक्षा संभव नहीं है। इस संदर्भ में मानवाधिकार न केवल नकारात्मक दायित्वों- जैसे यातना, दमन अथवा अमानवीय व्यवहार से मुक्ति-को रेखांकित करते हैं,

बल्कि सकारात्मक दायित्वों- जैसे स्वास्थ्य-सेवाओं, शिक्षा एवं सामाजिक सुरक्षा तक पहुँच को भी सम्मिलित करते हैं। इस प्रकार मानवाधिकारों का उद्देश्य न्यूनतम सुखमय जीवन हेतु आवश्यक आधारभूत स्थितियों की नैतिक पहचान करना है।

मानवाधिकारों की यह अवधारणा विगत पाँच दशकों के दौरान विकसित अंतर्राष्ट्रीय घोषणाओं एवं विधिक समझौतों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। इसकी औपचारिक अभिव्यक्ति मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948 से प्रारंभ होती है, जिसे आगे चलकर यूरोपीय मानवाधिकार सम्मेलन, 1954 तथा नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संधि, 1966 द्वारा सुदृढ़ किया गया। ये तीनों दस्तावेज संयुक्त रूप से मानवाधिकारों के एक ऐसे नैतिक ढाँचे का निर्माण करते हैं, जिसे अनेक विद्वान समकालीन अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के लिए एक प्रकार के 'अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार विधेयक' के रूप में देखते हैं।

हालाँकि, मानवाधिकारों का सिद्धांत स्वयं को एक सर्वसमावेशी या पूर्ण नैतिक दर्शन के रूप में प्रस्तुत नहीं करता। यह सिद्धांत नैतिकता के समस्त पक्षों को समाहित करने का दावा नहीं करता, बल्कि इसका क्षेत्र मुख्यतः सार्वजनिक और मौलिक नैतिक मानदंडों तक सीमित है। उदाहरणस्वरूप, मानवाधिकार यह निर्धारित नहीं करते कि झूठ बोलना स्वभावतः अनैतिक है या नहीं, अथवा व्यक्तिगत संबंधों में नैतिक दायित्वों की सीमा क्या होनी चाहिए। अतः मानवाधिकारों का महत्व एक व्यापक नैतिक संहिता प्रदान करने में नहीं, बल्कि उन न्यूनतम नैतिक मानकों को स्पष्ट करने में निहित है, जो सार्वजनिक जीवन और संस्थागत संरचनाओं के लिए अनिवार्य हैं।

जैसा कि जेम्स निकेल द्वारा प्रतिपादित किया गया है, मानवाधिकारों का केंद्रीय उद्देश्य व्यक्तियों के लिए न्यूनतम सुखी जीवन हेतु आवश्यक परिस्थितियों की सुनिश्चितता है। सामान्यतः यह माना जाता है कि राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय सार्वजनिक प्राधिकरण इन परिस्थितियों को उपलब्ध कराने की सर्वोत्तम स्थिति में होते हैं। इसी कारण मानवाधिकारों का सिद्धांत उन बुनियादी नैतिक गारंटियों का प्रमुख आधार बनता है, जिनकी अपेक्षा व्यक्ति न केवल एक-दूसरे से, बल्कि विशेष रूप से उन संस्थाओं से भी करते हैं, जिनके निर्णय उनके जीवन और हितों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं।

मानवाधिकारों का सिद्धांत समकालीन, तथाकथित उत्तर-वैचारिक, भू-राजनीतिक व्यवस्था को एक साझा नैतिक ढाँचा प्रदान करने की आकांक्षा रखता है, जिसके माध्यम से सभी व्यक्तियों के लिए न्यूनतम गरिमापूर्ण जीवन हेतु आवश्यक आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक स्थितियों को परिभाषित किया जा सके। यद्यपि मानवाधिकारों के संरक्षण और संवर्धन की व्यावहारिक प्रभावशीलता को राष्ट्र-राज्यों द्वारा इन्हें विधिक मान्यता दिए जाने से बल मिलता है, तथापि मानवाधिकारों की अंतिम वैधता को केवल इस मान्यता पर निर्भर नहीं माना जा सकता। मानवाधिकारों का नैतिक औचित्य राष्ट्रीय संप्रभुता की अवधारणा से पूर्ववर्ती है।

मानवाधिकार सिद्धांत की एक अंतर्निहित आकांक्षा ऐसे सार्वभौमिक मानदंडों का निर्माण करना है, जिनका अनुपालन सभी राष्ट्र-राज्यों के लिए नैतिक रूप से अनिवार्य हो। राष्ट्रीय संप्रभुता का सिद्धांत

राष्ट्र-राज्यों को उनके मौलिक मानवाधिकार-आधारित दायित्वों से स्थायी रूप से विमुख होने का वैध औचित्य प्रदान नहीं कर सकता। इस प्रकार मानवाधिकारों का सिद्धांत व्यक्तियों को समकालीन राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक तथा आर्थिक सत्ता-संरचनाओं की वैधता का नैतिक मूल्यांकन करने का एक प्रभावी साधन उपलब्ध कराता है। यही तथ्य मानवाधिकारों के सिद्धांत के समकालीन नैतिक और राजनीतिक महत्व को स्पष्ट रूप से रेखांकित करता है।

## 1.5 मानवाधिकार की परिभाषाऐं-

जैक्स के शब्दों में- 'मानवीय पूर्णता ही मानवता का लक्ष्य होना चाहिए। जैसे यंन्त्रवाद यन्त्रों की निपुणता को लक्ष्य बनाता है, उसी प्रकार व्यक्ति को कुशलता ही मानवाधिकार का लक्ष्य होना चाहिए।'

**संयुक्त राष्ट्र (संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त कार्यालय के अनुसार)**- मानवाधिकार वे सार्वभौमिक अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को केवल मानव होने के नाते प्राप्त होते हैं। ये अधिकार जाति, लिंग, भाषा, धर्म, राष्ट्रीयता या किसी अन्य आधार पर किसी भी प्रकार के भेदभाव के बिना सभी को समान रूप से प्राप्त होते हैं।

**मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948 के संदर्भ में**- मानवाधिकार वे मौलिक अधिकार और स्वतंत्रताएँ हैं, जो प्रत्येक मानव व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता और समानता की रक्षा के लिए आवश्यक हैं तथा जिनकी मान्यता अंतर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा की गई है।

**जेम्स निकेल (James Nickel) के अनुसार**- मानवाधिकार वे न्यूनतम नैतिक दावे हैं, जो प्रत्येक व्यक्ति को एक गरिमापूर्ण और न्यूनतम सुखमय जीवन जीने के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ सुनिश्चित करते हैं।

मानवाधिकारों की अवधारणा का विकास एक दीर्घ ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है, जिसकी जड़ें प्राचीन सभ्यताओं, धार्मिक परंपराओं, दार्शनिक विचारों तथा आधुनिक राजनीतिक संघर्षों में निहित हैं। यद्यपि "मानवाधिकार" शब्द आधुनिक है, किंतु इसके मूल तत्व प्राचीन काल से ही विद्यमान रहे हैं।

## 1.6 मानवाधिकारों की प्रकृति-

मानवाधिकारों की प्रकृति से आशय उन मूलभूत विशेषताओं से है, जो मानवाधिकारों को अन्य अधिकारों से भिन्न और विशिष्ट बनाती हैं। मानवाधिकार न केवल विधिक अवधारणाएँ हैं, बल्कि गहन नैतिक, सामाजिक और राजनीतिक मूल्यों पर आधारित हैं। इनकी प्रकृति को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है—

1. **सार्वभौमिक प्रकृति**- मानवाधिकार सभी व्यक्तियों को बिना किसी भेदभाव के समान रूप से प्राप्त होते हैं। जाति, लिंग, धर्म, भाषा, राष्ट्रीयता या सामाजिक स्थिति के आधार पर इनमें कोई

अंतर नहीं किया जा सकता। प्रत्येक व्यक्ति केवल मानव होने के कारण इन अधिकारों का अधिकारी है।

2. **जन्मसिद्ध एवं अविच्छिन्न प्रकृति-** मानवाधिकार जन्म से ही व्यक्ति को प्राप्त होते हैं और इन्हें उससे छीना नहीं जा सकता। राज्य इन्हें प्रदान नहीं करता, बल्कि केवल मान्यता देता है। यही कारण है कि इन्हें अविच्छिन्न अधिकार कहा जाता है।
3. **मानव गरिमा पर आधारित-** मानवाधिकारों की मूल आधारशिला मानव गरिमा की अवधारणा है। इनका उद्देश्य व्यक्ति को गरिमापूर्ण जीवन प्रदान करना और उसे अपमान, शोषण तथा अत्याचार से संरक्षण देना है।
4. **नैतिक एवं विधिक दोनों स्वरूप-** मानवाधिकारों की प्रकृति द्वैध है। एक ओर ये नैतिक दावे हैं, जो न्याय और मानवता की भावना पर आधारित हैं, वहीं दूसरी ओर अंतर्राष्ट्रीय संधियों और राष्ट्रीय संविधानों के माध्यम से ये विधिक अधिकार का स्वरूप भी ग्रहण करते हैं।
5. **सार्वजनिक एवं मौलिक प्रकृति-** मानवाधिकार मुख्यतः सार्वजनिक जीवन और राज्य की शक्ति के प्रयोग से संबंधित हैं। इनका उद्देश्य व्यक्ति और राज्य के संबंधों को नियंत्रित करना तथा सत्ता के दुरुपयोग को रोकना है।

## 1.7 अभ्यास प्रश्न-

**प्रश्न 1.** सम्राट अशोक के शिलालेखों में मुख्यतः किस सिद्धांत का उल्लेख मिलता है?

(क) राजनीतिक विस्तार

(ख) आर्थिक सुधार

(ग) धार्मिक सहिष्णुता और प्रजा-कल्याण

(घ) सैन्य संगठन

**प्रश्न 2.** शासक की निरंकुश शक्ति पर विधिक नियंत्रण स्थापित करने वाला ऐतिहासिक दस्तावेज कौन-सा है?

(क) बिल ऑफ राइट्स, 1689

(ख) पिटीशन ऑफ राइट, 1628

(ग) मैग्ना कार्टा, 1215

(घ) फ्रांसीसी घोषणा, 1789

**प्रश्न 3.** आधुनिक युग में मानवाधिकारों की अवधारणा को निर्णायक दिशा किसने प्रदान की?

(क) अमेरिकी स्वतंत्रता घोषणा और फ्रांसीसी मानव एवं नागरिक अधिकारों की घोषणा

(ख) प्राकृतिक विधि का सिद्धांत

(ग) औद्योगिक क्रांति

(घ) संयुक्त राष्ट्र चार्टर

**प्रश्न 4.** मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को किस वर्ष अंगीकृत किया गया?

(क) 1945

(ख) 1948

(ग) 1954

(घ) 1966

**प्रश्न 5 .** जेम्स निकेल के अनुसार मानवाधिकारों का मुख्य उद्देश्य क्या है?

(क) आदर्श नैतिक जीवन की स्थापना

(ख) धार्मिक कर्तव्यों का निर्धारण

(ग) न्यूनतम गरिमापूर्ण एवं सुखमय जीवन हेतु आवश्यक परिस्थितियों की सुनिश्चितता

(घ) केवल राजनीतिक अधिकारों की रक्षा

## 1.8 मानवाधिकारों का क्षेत्र-

मानवाधिकारों का क्षेत्र उन विविध आयामों को समाहित करता है, जिनमें मानवाधिकारों की अवधारणा लागू होती है। मानवाधिकार केवल व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और सामूहिक जीवन के समस्त क्षेत्रों को प्रभावित करते हैं। समय के साथ मानवाधिकारों का क्षेत्र निरंतर विस्तृत होता गया है।

1. **नागरिक अधिकारों का क्षेत्र-** नागरिक अधिकार मानवाधिकारों का एक प्रमुख क्षेत्र हैं, जिनका संबंध व्यक्ति की स्वतंत्रता और सुरक्षा से है। इनमें जीवन का अधिकार, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, समानता, विधि के समक्ष समानता, विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, धर्म की स्वतंत्रता तथा यातना से मुक्ति का अधिकार सम्मिलित हैं। ये अधिकार व्यक्ति को राज्य की मनमानी सत्ता से संरक्षण प्रदान करते हैं।
2. **राजनीतिक अधिकारों का क्षेत्र-** राजनीतिक अधिकार व्यक्ति को शासन-प्रक्रिया में भागीदारी का अवसर प्रदान करते हैं। इनमें मताधिकार, चुनाव लड़ने का अधिकार, राजनीतिक दलों के गठन की स्वतंत्रता, शांतिपूर्ण सभा और संगठन बनाने का अधिकार सम्मिलित है। यह क्षेत्र लोकतांत्रिक व्यवस्था के सुचारु संचालन हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण है।
3. **आर्थिक अधिकारों का क्षेत्र-** आर्थिक अधिकार मानवाधिकारों के उस क्षेत्र को दर्शाते हैं, जो व्यक्ति की आजीविका और आर्थिक सुरक्षा से संबंधित है। इनमें कार्य का अधिकार, उचित वेतन, समान कार्य के लिए समान वेतन, बेरोज़गारी से संरक्षण तथा सामाजिक सुरक्षा का अधिकार शामिल है। ये अधिकार व्यक्ति को आर्थिक शोषण से बचाने में सहायक होते हैं।
4. **सामाजिक अधिकारों का क्षेत्र-** सामाजिक अधिकार व्यक्ति को समाज में सम्मानजनक जीवन जीने की परिस्थितियाँ प्रदान करते हैं। इनमें शिक्षा का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, आवास का अधिकार, स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार तथा सामाजिक सुरक्षा के अधिकार आते हैं। यह क्षेत्र सामाजिक न्याय और समान अवसरों की स्थापना में सहायक है।
5. **सांस्कृतिक अधिकारों का क्षेत्र -** सांस्कृतिक अधिकार व्यक्ति और समुदाय को अपनी भाषा, संस्कृति, परंपराओं और विरासत के संरक्षण एवं विकास का अधिकार प्रदान करते हैं। इसमें सांस्कृतिक जीवन में भागीदारी, मातृभाषा के प्रयोग तथा सांस्कृतिक पहचान की रक्षा का अधिकार शामिल है। यह क्षेत्र बहुसांस्कृतिक समाजों में विशेष महत्व रखता है।

6. **सामूहिक (समूहगत) अधिकारों का क्षेत्र-** आधुनिक मानवाधिकार चिंतन में सामूहिक अधिकारों को भी मान्यता दी गई है। इनमें आत्मनिर्णय का अधिकार, विकास का अधिकार, शांति का अधिकार तथा स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार सम्मिलित हैं। ये अधिकार व्यक्तियों के साथ-साथ समुदायों और राष्ट्रों से भी संबंधित होते हैं।
7. **कमजोर एवं वंचित वर्गों से संबंधित क्षेत्र-** मानवाधिकारों का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र महिलाओं, बच्चों, वृद्धों, दिव्यांगों, अल्पसंख्यकों, आदिवासियों और शरणार्थियों जैसे कमजोर वर्गों के अधिकारों से संबंधित है। इनके लिए विशेष अंतर्राष्ट्रीय संधियाँ और राष्ट्रीय कानून बनाए गए हैं, ताकि समानता और संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके।
8. **अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों का क्षेत्र-** मानवाधिकारों का क्षेत्र केवल राष्ट्रीय सीमाओं तक सीमित नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त राष्ट्र, क्षेत्रीय मानवाधिकार न्यायालय तथा विभिन्न संधियाँ मानवाधिकारों के संरक्षण में भूमिका निभाती हैं। राष्ट्रीय स्तर पर संविधान, न्यायपालिका और मानवाधिकार आयोग इस क्षेत्र को क्रियान्वित करते हैं।

## 1.9 सारांश-

मानवाधिकारों की अवधारणा का विकास एक दीर्घ ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है, जिसकी जड़ें प्राचीन सभ्यताओं में निहित हैं। प्राचीन मिस्र, मेसोपोटामिया, भारत, चीन और यूनान में मानव गरिमा और न्याय के विचार देखने को मिलते हैं। भारत में वैदिक साहित्य, उपनिषद तथा बौद्ध जैन दर्शन में अहिंसा, करुणा और समानता के सिद्धांत मानवाधिकार चेतना के प्रारंभिक रूप माने जाते हैं। सम्राट अशोक के शिलालेख धार्मिक सहिष्णुता और प्रजा-कल्याण का स्पष्ट उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। मध्यकाल में 1215 ई. की मैग्ना कार्टा तथा बाद में पिटीशन ऑफ राइट और बिल ऑफ राइट्स ने शासकीय सत्ता पर नियंत्रण और नागरिक अधिकारों को सुदृढ़ किया। आधुनिक युग में अमेरिकी स्वतंत्रता घोषणा (1776) और फ्रांसीसी मानव एवं नागरिक अधिकारों की घोषणा (1789) ने स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को सार्वभौमिक स्वरूप प्रदान किया। बीसवीं शताब्दी में विश्व युद्धों के पश्चात मानवाधिकारों का अंतर्राष्ट्रीयकरण हुआ और 1948 में मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को अंगीकृत किया गया। इसके बाद 1966 की अंतर्राष्ट्रीय संधियों ने मानवाधिकारों को विधिक आधार प्रदान किया। सैद्धान्तिक रूप से मानवाधिकार न्यूनतम गरिमापूर्ण जीवन हेतु आवश्यक नैतिक और विधिक मानदंडों का समूह हैं, जो सार्वभौमिक, जन्मसिद्ध, गरिमा-आधारित और परस्पर संबद्ध होते हैं। इनका क्षेत्र नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा सामूहिक अधिकारों तक विस्तृत है और इनका उद्देश्य व्यक्ति की गरिमा की रक्षा तथा न्यायपूर्ण समाज की स्थापना करना है।

## 1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1. सही उत्तर: (ग) 2. सही उत्तर: (ग) 3. सही उत्तर: (क)4.  सही उत्तर: (ख) 5. सही उत्तर: (ग)

## 1.11 संदर्भ सूची-


1. वर्मा, एस. के. — *मानवाधिकार : सिद्धांत और व्यवहार*। नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. अग्रवाल, आर. सी. — *मानवाधिकार और भारतीय संविधान*। इलाहाबाद : सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन्स।
3. दीक्षित, सुशील — *मानवाधिकार : अवधारणा और विकास*। नई दिल्ली : अटलांटिक पब्लिशर्स।
4. शुक्ला, वी. एन. — *संविधानिक विधि*। लखनऊ : ईस्टर्न बुक कम्पनी।
5. तिवारी, डी. डी. — *मानवाधिकार एवं विधि*। नई दिल्ली : दीप एंड दीप पब्लिकेशन्स।
6. निकेल, जेम्स — *मेकिंग सेंस ऑफ ह्यूमन राइट्स*। ऑक्सफोर्ड : ब्लैकवेल पब्लिशिंग। (हिन्दी अनुवाद/संदर्भ रूप में प्रयुक्त)
7. डोनेली, जैक — *यूनिवर्सल ह्यूमन राइट्स इन थ्योरी एंड प्रैक्टिस*। इथाका : कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. संयुक्त राष्ट्र — *मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948*। (हिन्दी संस्करण) संयुक्त राष्ट्र सूचना केन्द्र, नई दिल्ली।
9. संयुक्त राष्ट्र — *नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संधि, 1966*। (हिन्दी संस्करण) संयुक्त राष्ट्र प्रकाशन।
10. संयुक्त राष्ट्र — *आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संधि, 1966*। (हिन्दी संस्करण) संयुक्त राष्ट्र प्रकाशन।
11. शर्मा, रामअवतार — *राजनीतिक सिद्धांत और मानवाधिकार*। जयपुर : रावत पब्लिकेशन्स।
12. बासु, दुर्गादास — *भारतीय संविधान का परिचय*। नागपुर : वाधवा एंड कम्पनी।
13. सेन, अमर्त्य — *विकास के रूप में स्वतंत्रता*। (हिन्दी अनुवाद) नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
14. मानवाधिकार आयोग, भारत — *मानवाधिकार : अवधारणा एवं संरक्षण*। नई दिल्ली : एनएचआरसी प्रकाशन।
15. IGNOU — *मानवाधिकार अध्ययन सामग्री* (एम.ए./बी.ए. पाठ्यक्रम)। नई दिल्ली : इग्नू।


## 1.12 निबन्धात्मक प्रश्न-

**प्रश्न 1.** मानवाधिकारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का क्रमबद्ध विवेचन कीजिए।

**प्रश्न 2.** मानवाधिकारों के सैद्धान्तिक स्वरूप की व्याख्या कीजिए।

**प्रश्न 3.** मानवाधिकार की विभिन्न परिभाषाओं का समालोचनात्मक अध्ययन कीजिए।

**प्रश्न 4.** मानवाधिकारों की प्रकृति का विवेचन कीजिए।

**प्रश्न 5.** मानवाधिकारों के क्षेत्र का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत कीजिए।

# इकाई -2

# Human Rights and fundamental duties in the Indian Constitution

# भारतीय संविधान में मानव अधिकार एवं मौलिक कर्तव्य

**2.1 प्रस्तावना**

**2.2 उद्देश्य**

**2.3 मानव अधिकार का अर्थ एवं परिभाषाएँ**

**2.4 मानव अधिकारों की विशेषताएं**

**2.5 मानव अधिकार के प्रकार**

**2.6 मानव अधिकार एवं भारतीय संविधान**

**2.7 मौलिक कर्तव्य का अर्थ**

**2.9 भारतीय संविधान में मौलिक कर्तव्य**

**2.10 मौलिक कर्तव्यों की विशेषताएं**

**2.11 मौलिक कर्तव्यों का महत्व**

**2.12 सारांश**

**2.13 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर**

**2.14 सन्दर्भ ग्रंथ सूची**

## 2.1 प्रस्तावना

मानवाधिकार एक वैश्विक शब्द है, जिसे हम अक्सर सुनते हैं, आखिर मानवाधिकार है क्या? “अधिकार” वे चीज़ें हैं जिन्हें हमें केवल मानव होने के नाते, करने या पाने की अनुमति है। व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं गरिमा से सम्बन्ध रखने वाले अधिकार मानव अधिकार कहलाते हैं। अधिकार सभ्य समाज की परिकल्पना है। व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास के लिए अधिकार अपरिहार्य है। ऐसे अधिकार जिनका सम्बन्ध व्यक्ति की स्वतंत्रता, समानता एवं गरिमा से है, वे मानव अधिकार हैं। मानव अधिकार हर व्यक्ति के समग्र विकास के लिये अपरिहार्य हैं । मानवाधिकार वे अधिकार हैं जो हमें सिर्फ़ इसलिए प्राप्त हैं, क्योंकि हम मनुष्य हैं - ये किसी राज्य द्वारा प्रदान

नहीं किए जाते। ये सार्वभौमिक अधिकार हम सभी में निहित हैं, चाहे हमारी राष्ट्रीयता, लिंग, राष्ट्रीय या जातीय मूल, रंग, धर्म, भाषा या कोई अन्य स्थिति कुछ भी हो। **भारतीय संविधान के मूल कर्तव्य** उस राष्ट्र के नागरिकों के लिए निर्धारित कर्तव्यों के एक समूह को संदर्भित करते हैं। ये कर्तव्य **नागरिकों को यह याद दिलाते हैं** कि अधिकारों के आनंद के अलावा, उन्हें उस राष्ट्र के प्रति कुछ कर्तव्यों का भी पालन करना है जिसमें वे रहते हैं। मौलिक कर्तव्य किसी देश के सभी लोगों के लिए विशेष नियमों की तरह होते हैं। ये नियम हमें बताते हैं कि हमें अपने देश को बेहतर बनाने के लिए क्या करना चाहिए ? अपने कर्तव्यों का पालन करना ज़रूरी है क्योंकि इससे हमें शांति और सद्भाव से रहने में मदद मिलती है। जब हर कोई अपना योगदान देता है, तो देश मज़बूत और खुशहाल बनता है। उदाहरण के लिए, अपने आस-पास की सफाई रखना एक साधारण कर्तव्य है जिसे हम हर दिन निभा सकते हैं। प्रस्तुत ईकाई में हम भारतीय संविधान के अंतर्गत मानव अधिकारों एवं मौलिक कर्तव्यों का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

## 2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत ईकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- मौलिक अधिकार का अर्थ एवं परिभाषाओं को स्पष्ट कर पाएंगे ।
- मौलिक अधिकार के प्रकारों की व्याख्या कर सकेंगे ।
- भारत के संविधान द्वारा भारत में नागरिकों और अन्य व्यक्तियों को प्रदान किए गए अधिकारों को जान पाएंगे ।
- संविधान में निहित मौलिक कर्तव्यों को समझ सकेंगे।

## 2.3 मानव अधिकार का अर्थ एवं परिभाषाएँ

मानव अधिकार वह अधिकार हैं, जो हमारी प्रकृति या स्वभाव में निहित हैं। इसके अभाव में हम मानव के रूप में अपना जीवन नहीं जी सकते। मानव अधिकार अर्थात वो अधिकार जो मनुष्य को जन्म से प्राप्त हैं।ये अधिकार किसी भी राष्ट्रीयता, लिंग, धर्म, जाति या अन्य स्थिति से परे हैं, और जीवन, स्वतंत्रता, और सुरक्षा जैसे बुनियादी अधिकारों को सुनिश्चित करते हैं। किसी भी व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता, समानता और प्रतिष्ठा का अधिकार ही मानव अधिकार है। ये अधिकार सभी व्यक्तियों को समान रूप से प्राप्त होते हैं । मानव अधिकार मनुष्य को प्राप्त है तभी वह मनुष्य है । मानव अधिकार समाज में ऐसा वातावरण उत्पन्न करते हैं जिसमें सभी व्यक्ति समानता के साथ बिना डरे हुए गरिमा के साथ अपना जीवन यापन कर पाते हैं । ये अधिकार मानव के व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास के लिए आवश्यक हैं । मानवाधिकार सबसे मौलिक और बुनियादी अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को

जन्म से ही प्राप्त होते हैं और मृत्यु तक बने रहते हैं। किसी भी व्यक्ति के मानवाधिकारों को उससे नहीं छीना जा सकता, चाहे वह किसी भी धर्म, जाति या आस्था को मानता हो। हालाँकि, मानवाधिकारों पर एक सीमा तक प्रतिबंध लगाया जा सकता है। मानवाधिकार न्याय पाने का मार्ग हैं। मानवाधिकारों को सुनिश्चित करने और उनका पालन करने के लिए संयुक्त राष्ट्र ने 'मानवाधिकार आयोग' की नियुक्ति की और इसे मानवाधिकारों के बुनियादी सिद्धांतों का मसौदा तैयार करने की जिम्मेदारी सौंपी। लगभग तीन साल की कड़ी मेहनत के बाद मानवाधिकार आयोग ने 'मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा' का मसौदा तैयार किया।

10 दिसंबर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने कुछ संशोधनों के साथ इस प्रारूप को अपनाया और उसी दिन मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा जारी की गई। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग **10 दिसंबर** को मानवाधिकार दिवस भी मनाता है। मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (UDHR) पत्र में 30 धाराएं हैं। ये सुरक्षात्मक कानून हैं। जिनमें नागरिक और राजनीति अधिकारों के साथ-साथ आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों को भी शामिल किया गया है।" इसकी प्रस्तावना में संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य देशों से यह आग्रह किया गया है, कि वे इस घोषणा में वर्णित अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं को मान्यता प्रदान करें तथा उन्हें बिना किसी भेदभाव के अपने-अपने क्षेत्रों में लागू करें। फलस्वरूप विश्व समुदाय द्वारा न केवल इस घोषणा को मान्यता दी गयी बल्कि अपने-अपने संविधानों में स्थान देकर विधिक स्वरूप भी प्रदान किया गया।

**परिभाषाएँ -** मानवाधिकारों को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है।

"सभी मनुष्य स्वतंत्र पैदा होते हैं, और सम्मान और अधिकारों में समान होते हैं। उन्हें तर्क और विवेक से संपन्न किया गया है और उन्हें एक-दूसरे के प्रति भाईचारे की भावना से कार्य करना चाहिए।" सार्वभौमिक घोषणा।

"मानव अधिकार" सभी मनुष्यों के अंतर्निहित अधिकार हैं, चाहे हमारी राष्ट्रीयता, निवास, लिंग, लैंगिक अभिविन्यास और लैंगिक पहचान, राष्ट्रीय या जातीय मूल, रंग, धर्म, भाषा या कोई अन्य स्थिति कुछ भी हो। हम सभी बिना किसी भेदभाव के अपने मानवाधिकारों के समान रूप से हकदार हैं" ।

भारतीय संविधान की परिभाषा –"मानव अधिकार वे अधिकार हैं , जो सभी नागरिकों के लिए उनके जीवन, स्वतंत्रता और गरिमा के लिए आवश्यक हैं।"

हंट के अनुसार "मानवाधिकार मानवीय विचारों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति है, जो सैद्धांतिक अभिमूल्यों की आधार शिला है। जिससे मानव उन्नति के शिखर पर अग्रसर होता है।"

हैराल्ड लास्की के अनुसार "अधिकार मानव जीवन की ऐसी परिस्थितियाँ हैं, जिनके बिना सामान्यतः कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं

कर सकता ।"

एल.के.ओड. के अनुसार "मानववाद का दर्शन मनुष्य तथा उसके हित को सर्वोपरि मानता है मानवाधिकार की रूचि न तो काल्पनिक ईश्वर में है, न तो अमूर्त शाश्वत चिंतन में उसकी रूचि तथा चिंतन का एकमात्र केन्द्र मनुष्य तथा उसकी स्थिति है । उसकी आशाएं तथा आकांक्षाएं, उसके आदर्श उसकी उपलब्धियाँ तथा दुर्बलताएं चिंतन की इसी श्रेणी में आती हैं। कुल मिलाकर रक्त मांस के बने हुए इस सांसारिक मनुष्य के बारे में चिंतन ही मानवाधिकार का विषय क्षेत्र है ।

लास्की के अनुसार "अधिकार सामाजिक जीवन की वे परिस्थितियां हैं जिनके अभाव में सामान्यतः कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास नहीं कर पाता है।"

## 2.4 मानव अधिकारों की विशेषताएं

**आवश्यक एवं मौलिक** - मानवाधिकारों के अभाव में समाज दयनीय स्थिति में होगा। चारों ओर अराजकता होगी। मानव उत्थान के लिए मानवाधिकार आवश्यक हैं। ये अधिकार मौलिक हैं।

**सार्वभौमिक** - ये अधिकार लोगों के साथ भेदभाव नहीं करते। ये अधिकार लोगों के बीच विभिन्न अंतरों को ध्यान में रखे बिना सभी लोगों को समान रूप से उपलब्ध हैं। मानवाधिकार हर मनुष्य को समान रूप से प्राप्त होते हैं, चाहे व्यक्ति किसी भी जाति, धर्म, लिंग, राष्ट्रीयता, का हो या उसकी आर्थिक स्थिति कैसी भी हो, उसे ये अधिकार प्राप्त होते हैं। 1948 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा अपनाए गए मानवधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा इस अवधारणा की पुष्टि करती है कि मानवधिकार सभी मनुष्यों के लिए समान हैं।

**सीमाएँ** - मानवाधिकार कभी भी निरपेक्ष नहीं होते। प्रत्येक अधिकार की अपनी सीमाएँ होती हैं जो सार्वजनिक स्वास्थ्य, व्यवस्था और नैतिकता के लिए अनिवार्य हैं। ये अधिकार निरंकुश नहीं हैं।

**अविभाज्य-** मानवाधिकार स्वभाव से अविभाज्य हैं। कोई भी किसी व्यक्ति को इन अधिकारों से वंचित नहीं कर सकता। इसके अलावा, मानवाधिकार अविभाज्य हैं क्योंकि इन्हें अधिकारपूर्वक छीना नहीं जा सकता। इन्हें दिया या जब्त नहीं किया जा सकता।

**अन्योन्याश्रित-** मानवाधिकार अन्य अधिकारों पर अन्योन्याश्रित हैं। उदाहरण के लिए, यदि हमारे सामाजिक या नागरिक मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है, तो इसका प्रभाव अन्य अधिकारों जैसे राजनीतिक या सांस्कृतिक मानवाधिकारों पर भी पड़ेगा ।

**गतिशील-** ये अधिकार स्थिर नहीं हैं। इन्हें मौजूदा परिस्थितियों के अनुसार संशोधित

किया जा सकता है। राज्य के भीतर सामाजिक-पर्यावरण-सांस्कृतिक और राजनीतिक विकास के साथ मानव अधिकारों का विस्तार होता है।

**सांस्कृतिक रूप से तटस्थ-** मानवधिकार किसी एक संस्कृति,विचारधारा या दुनिया के किसी हिस्से को दूसरे पर तरजीह नहीं देते। इन्हें निष्पक्ष और हर जगह लागू होने के लिए डिजाइन किया जाता है, चाहे आप किसी भी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से हों। किसी भी विशेष संस्कृति के प्रति पक्षपाती हुए बिना, पूर्वाग्रह से बचना । इसमें सभी सांस्कृतिक प्रथाओं और मान्यताओं के साथ निष्पक्ष व्यवहार करना और किसी विशेष सांस्कृतिक समूह को बढ़ावा या हतोत्साहित करने से बचना शामिल है। अतः मानवाधिकार सांस्कृतिक रूप से तटस्थ होते हैं।

**मानव अधिकार मानव गरिमा से जुड़े हैं-** मानवाधिकार की इस तथ्य से यह साबित होता है कि यह मानव की गरिमा से जुड़े हैं क्योंकी वह पुरुष हो या महिला, अमीर या गरीब सभी के लिए समान अधिकार प्राप्त होते है। ये मानवाधिकार समाज में रहने वाले व्यक्तियों की गरिमा से गहराई से जुड़े हैं।

**मानवाधिकार अपरिवर्तनीय हैं-** मानवाधिकार अपरिवर्तनीय हैं क्योंकि उन्हें किसी शक्ति या अधिकार द्वारा नहीं प्राप्त किया जा सकता है क्योंकि ये अधिकार मनुष्य के समाज में मनुष्य के सामाजिक स्वभाव के साथ ही उत्पन्न होते हैं और वे केवल एक व्यक्ति के होते हैं क्योंकि वह एक इंसान है।

**जीवन के उद्देश्य की पूर्ति के लिए मानव अधिकार आवश्यक हैं-** "मानव अधिकार" उन शर्तों पर लागू होता है जो इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक हैं। किसी भी सरकार के पास उन अधिकारों को कम करने या हटाने की शक्ति नहीं है जो पवित्र, अदृश्य और अपरिवर्तनीय हैं।

**सर्वोच्चता-** मानव अधिकारों को सर्वोच्च इसलिए माना जाता है,क्योंकी राज्य द्वारा जनहित के आधार पर इन अधिकारों का अतिक्रमण नहीं किया जा सकता है।विश्व के प्रत्येक देश में इन अधिकारों को संवैधानिक एवं कानूनी आधार पर संरक्षण प्रदान किया जाना अनिवार्य होता है ।

**राज्य सत्ता की सीमा के रूप में-** मानवाधिकार राज्य की सत्ता की सीमा के रूप में कार्य करते हैं, क्योंकि वे यह निर्धारित करते हैं कि राज्य, नागरिकों के साथ कैसे व्यवहार कर सकता है और उसके कार्यों पर कई तरह की सीमाएं लगाते हैं। ये अधिकार राज्य को अमानवीय कार्यों से रोकते हैं, यह सुनिश्चित करते हैं कि राज्य अपनी मनमर्ज़ी से काम न करे, और नागरिकों को कुछ स्वतंत्रताएँ और सुरक्षा प्रदान करते हैं, जैसे कि भाषण की स्वतंत्रता और एक वकील का अधिकार आदि।

## 2.5 मानव अधिकार के प्रकार

मानवाधिकार सभी मनुष्यों में अंतर्निहित हैं, चाहे उनकी राष्ट्रीयता, नस्ल, लिंग, धर्म, भाषा या यौन

अभिविन्यास कुछ भी हो। मानवाधिकारों की अवधारणा भले ही नई न हो, लेकिन समय के साथ इसमें महत्वपूर्ण बदलाव आए हैं। अतीत में, केवल विशेषाधिकार प्राप्त समूहों के अधिकारों का ही सम्मान किया जाता था। 1948 में, नवगठित संयुक्त राष्ट्र महासभा ने मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (UDHR) को अपनाया। अंतर्राष्ट्रीय कानून, राष्ट्रीय संविधान और अन्य सम्मेलन UDHR का समर्थन और विस्तार करते हैं। मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा ने मानवाधिकारों को कई अधिकारों में बाँटा है। यूडीएचआर और अन्य दस्तावेज़ पाँच प्रकार के मानवाधिकारों की व्याख्या करते हैं। आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, नागरिक और राजनीतिक। आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों में काम करने का अधिकार, भोजन और पानी का अधिकार, आवास का अधिकार और शिक्षा का अधिकार शामिल हैं। 1976 में स्थापित आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय वाचा जैसे दस्तावेज़ इन अधिकारों की रक्षा करते हैं। बाल अधिकार सम्मेलन जैसे सम्मेलन विशिष्ट समूहों के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की रक्षा करते हैं। सभी प्रकार के मानवाधिकारों की तरह, राज्य की ज़िम्मेदारी आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की रक्षा, संवर्धन और कार्यान्वयन करना है।

1. सामाजिक या नागरिक मानवाधिकार (Social or Civil Human Rights)
2. राजनीतिक मानव अधिकार (Political Human Rights)
3. आर्थिक मानव अधिकार (Economic Human Rights)
4. सांस्कृतिक मानव अधिकार (Cultural Human Rights)
5. विकास उन्मुख मानव अधिकार (Development Oriented Human Rights)

**सामाजिक या नागरिक मानवाधिकार**

वे अधिकार हैं जो एक व्यक्ति को समाज और राज्य के भीतर सम्मान, स्वतंत्रता और समानता से रहने में सक्षम बनाते हैं, जिनमें जीवन, अभिव्यक्ति, धर्म, संपत्ति, सभा और संघ की स्वतंत्रता शामिल है। ये अधिकार समाज के सुचारू संचालन को नियंत्रित करते हैं। विवाह करने और परिवार बसाने का अधिकार, निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार आदि सामाजिक अधिकारों का हिस्सा हैं।

**राजनीतिक मानव अधिकार**

इनमें नागरिक और राजनीतिक अधिकार शामिल हैं, जो किसी व्यक्ति के अपने समुदाय के नागरिक और राजनीतिक जीवन में बिना किसी भेदभाव या उत्पीड़न के भाग लेने के अधिकारों को संदर्भित करते हैं। इनमें मतदान का अधिकार, निजता का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और यातना से मुक्ति जैसे अधिकार और स्वतंत्रताएँ शामिल हैं। इनमें अभिव्यक्ति, सभा और संघ बनाने का अधिकार, सरकारी कामकाज में भागीदारी का अधिकार शामिल है। इसमें सार्वभौमिक और समान मताधिकार और राष्ट्रीयता का अधिकार भी शामिल है। विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, आस्था, विवेक और धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार।

**आर्थिक मानव अधिकार**

आर्थिक और सामाजिक अधिकार मानवाधिकार हैं, जो सम्मानपूर्वक जीवन जीने और समाज में पूर्ण भागीदारी करने की हमारी क्षमता से संबंधित हैं । इनमें कार्यस्थल, सामाजिक सुरक्षा, और आवास, भोजन, पानी, स्वास्थ्य देखभाल और शिक्षा तक पहुँच से संबंधित अधिकार शामिल हैं। हममें से प्रत्येक व्यक्ति कुछ आर्थिक मानवाधिकारों का हकदार है जैसे –

- सामाजिक सुरक्षा का अधिकार
- काम करने का अधिकार और समान काम के लिए समान वेतन का अधिकार
- ट्रेड यूनियन बनाने का अधिकार
- आराम और अवकाश का अधिकार
- भोजन, स्वास्थ्य और पर्याप्त जीवन स्तर का अधिकार
- समुदाय के सांस्कृतिक जीवन में भाग लेने का अधिकार
- कला का आनंद लेने और वैज्ञानिक उन्नति और उसके लाभों में हिस्सा लेने का अधिकार
- किसी भी वैज्ञानिक, साहित्यिक और कलात्मक उत्पादन से उत्पन्न नैतिक और भौतिक हितों की सुरक्षा का अधिकार, जिसका लेखक व्यक्ति है।
- एक सामाजिक और अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था का अधिकार, जिसमें सार्वभौम घोषणा में दिए गए मानवाधिकारों को पूरी तरह से महसूस किया जा सके।

**सांस्कृतिक मानव अधिकार**

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, इसलिए ये अधिकार आवश्यक माने जाते हैं। सभी को सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार है। इन अधिकारों का हनन मानवाधिकारों का उल्लंघन है जो कानून के विरुद्ध है। किसी विशेष सांस्कृतिक, धार्मिक, नस्लीय या भाषाई पृष्ठभूमि वाले सभी व्यक्तियों को उस पृष्ठभूमि के अन्य व्यक्तियों के साथ समुदाय में अपनी संस्कृति का आनंद लेने, अपने धर्म की घोषणा करने और उसका पालन करने तथा अपनी भाषा का उपयोग करने के अधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। सांस्कृतिक अधिकार व्यक्तियों को उनकी सांस्कृतिक विरासत, पहचान और प्रथाओं को बनाए रखने और उनका पालन करने का अधिकार देते हैं। भारत का संविधान और अंतर्राष्ट्रीय समझौते इन अधिकारों की रक्षा करते हैं जिसमें कला, विरासत, ज्ञान, और पारंपरिक प्रथाओं को बनाए रखना शामिल है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 29 और 30 भी नागरिकों को अपनी भाषा और संस्कृति को बनाए रखने का अधिकार देते हैं।

**विकास उन्मुख मानव अधिकार**

विकास उन्मुख मानवाधिकार से तात्पर्य है, कि प्रत्येक व्यक्ति को आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विकास में भाग लेने और उसका आनंद लेने का हक है, जो विकास की प्रक्रिया के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है, और यह सुनिश्चित करता है कि विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने में मानवाधिकारों का संरक्षण और संवर्धन किया जाए। विकास एक मानवाधिकार है जो हर किसी व्यक्ति का है, व्यक्तिगत और मिलकर । 1986 में घोषित विकास के अधिकार पर UN के

अहम घोषणा में कहा गया है,कि "हर किसी को आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विकास में हिस्सा लेने, योगदान देने और उसका आनंद लेने का हक है, जिसमें सभी मानव अधिकार और बुनियादी आज़ादी पूरी तरह से हासिल की जा सके।

## 2.6 मानव अधिकार एवं भारतीय संविधान

भारत की अपनी प्राचीन परम्परा है। इस परम्परा का निर्माण अनेक विश्वासों एवं धर्मों के सम्मिश्रण से हुआ है। प्राचीन भारत में शस्त्र सम्मत मूल्यों का अनुपालन प्रत्येक व्यक्ति करता था। ये आदर्श मान्यताएँ एवं आस्थाएँ हमारे सांस्कृतिक मूल्यों से निरंतर पोषित एवं नियंत्रित होती रही हैं। भारत एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है, धार्मिक सहिष्णुता भी राष्ट्रीय अखण्डता एवं एकता की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण है । भारत में मानवाधिकारों का विकास प्राचीन काल से ही देखा जा सकता है लेकिन उस समय मानवाधिकार अपने आधुनिक स्वरुप में नहीं थे । भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के समय ,मानवाधिकार एक केन्द्रीय मुद्दा बन गया । जिसमें लोकतांत्रिक भारत में मानवाधिकार को आवश्यक माना गया है। संविधान में परिभाषित ये अधिकार नस्ल, जन्मस्थान, जाति, धर्म या लिंग के भेद के बिना सभी को प्राप्त हैं। लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के साथ-साथ मानव अधिकारों के दायरे में निरन्तर अभिवृद्धि हो रही है। न्यायपालिका द्वारा समय-समय पर नए-नए मानव अधिकारों की व्याख्या और संरक्षण की दिशा में अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह कई महत्वपूर्ण फैसले प्रदान करके किया गया है और किया जा रहा है। आज उन सभी अधिकारों को मानव अधिकार माना जाने लगा है, जो एक सम्मानजनक अथवा मानव गरिमायुक्त जीवनयापन के लिए आवश्यक है। भारत के संविधान में भी सभी नागरिकों को समान रूप से सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय दिलाने की व्यवस्था है। सरकार की मान्यता है कि राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ आधार तब ही प्रदान किया जा सकता है जब समस्त नागरिकों में भाषा, जाति, धर्म, लिंग एवं क्षेत्रीयता की संकीर्णता समाप्त हो जायेगी ।

मानवाधिकार' शब्द का प्रयोग 20वीं शताब्दी में शुरू हुआ, जबकि इससे पहले इन्हें 'प्राकृतिक अधिकार' या 'व्यक्ति के अधिकार' कहा जाता था। 17वीं शताब्दी में प्रसिद्ध विचारकों ग्रोशियस, हॉब्स और लॉक ने प्राकृतिक अधिकारों की अवधारणा को प्रस्तुत किया। उनका मानना था कि प्राकृतिक कानून प्रत्येक व्यक्ति को दूसरे के जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति का सम्मान करने का निर्देश देते हैं। इसके अतिरिक्त, 1776 में अमेरिकी स्वतंत्रता की घोषणा में कहा गया था कि "सभी मनुष्य समान पैदा होते हैं और सृष्टिकर्ता ने उन्हें जीवन, स्वतंत्रता और सुख की खोज जैसे अधिकार प्रदान किए हैं।" 1789 में फ्रांस के मानव और नागरिक अधिकारों के घोषणापत्र ने भी इन्हीं विचारों की पुनः पुष्टि की। इन घोषणाओं के अनुसार, ये अधिकार नागरिकों को राज्य के आधार पर नहीं, बल्कि उनके मानव होने के नाते दिए गए थे। द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद 1948 में 48 देशों के समूह ने समस्त मानव-जाति के मूलभूत अधिकारों की व्याख्या करते हुए एक चार्टर पर हस्ताक्षर किये थे। इसमें माना गया था कि व्यक्ति के मानवाधिकारों की हर कीमत पर रक्षा की जानी चाहिए । भारत ने

भी इस पर सहमति जताते हुए संयुक्त राष्ट्र के इस चार्टर पर हस्ताक्षर किए। हालाँकि देश में मानवाधिकारों से जुड़ी एक स्वतंत्र संस्था बनाने में 45 वर्ष लग गए और तब कहीं जाकर 1993 में NHRC अर्थात् राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग अस्तित्व में आया जो समय-समय पर मानवाधिकारों के हनन के संदर्भ में केंद्र तथा राज्यों को अपनी अनुशंसाएँ भेजता है।

इस प्रकार हम देखते हैं, कि भारत ने मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 के तहत राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन और राज्य मानवाधिकार आयोगों के गठन की व्यवस्था करके मानवाधिकारों के उल्लंघनों से निपटने हेतु एक मंच प्रदान किया।

मानव अधिकार और हमारे संविधान में प्रदत्त अधिकारों की तुलना विश्व के अनेक देश मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के बाद ही स्वतंत्र हुए थे और उन्होंने अपने-अपने देश के संविधानों में इनमें से अनेक अधिकारों को शामिल किया है। भारतीय संविधान के अनुसार हमारे मानव अधिकार इस तरह है।

- स्वतंत्रता और जीवन का अधिकार
- स्वतंत्रता और विचार की आज़ादी
- समानता
- महिलाओं के अधिकार
- धर्म और आध्यात्मिक स्वतंत्रता
- स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति का अधिकार
- अनुसूचित जातियों और जनजातियों के हितों का संरक्षण
- समाज सुधार के अधिकार
- न्याय
- शिक्षा
- स्वस्थ जीवन
- अनुसंधान के अधिकार
- पर्यावरण के अधिकार

- ये मानव अधिकार भारतीय संविधान में उल्लेखित होते हैं।

भारतीय संविधान में अत्यन्त महत्वपूर्ण मानवाधिकारों को मौलिक अधिकारों के रूप में अनु. 12 से लेकर अनु. 35 में सम्मिलित किया गया और इनकी रक्षा का दायित्व न्यायपालिका को सौंप कर इन्हें गारन्टीकृत भी किया गया।" [6] तथा "कतिपय कम महत्वपूर्ण मानवाधिकारों को नीति निर्देशक तत्वों के रूप में अनु. 36 से लेकर अनु. 51 में सम्मिलित किया गया है।"

भारतीय संविधान में, मानव अधिकारों का आधार अनुच्छेद 14 से 32 तक है। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण अधिकार हैं-:

- जीवन का अधिकार (Article 21) - हर व्यक्ति को जीवन के लिए अधिकार है। इसके अन्तर्गत, किसी व्यक्ति को मृत्यु के दंड से पहले कुछ नहीं किया जा सकता है।
- स्वतंत्रता का अधिकार (Article 19) - सभी व्यक्तियों को अपने विचार और विचारों का आदान-प्रदान करने, शांतिपूर्ण रूप से संगठित होने, संघ बनाने और संघ के साथ गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार है।
- समानता का अधिकार (Article 14) - सभी व्यक्तियों को समान रूप से विचार और न्याय का अधिकार है। किसी व्यक्ति को उसकी जाति, लिंग, धर्म, राजनीतिक या सामाजिक स्थिति के कारण न्याय के बिना छोड़ दिया जाना गलत है।
- धर्म स्वतंत्रता का अधिकार (Article 25) - सभी व्यक्तियों को अपने धर्म और धर्मानुयायी के साथ उसकी धर्म के अनुसार अभ्यास करने और उसे पालन करने का अधिकार है।
- मौलिक स्वतंत्रता का अधिकार (Article 19) - सभी व्यक्तियों को विचार, धारणा, अभिव्यक्ति, विश्वास और धर्म के प्रति मौलिक स्वतंत्रता का अधिकार है।
- संघर्ष का अधिकार (Article 19) - सभी व्यक्तियों को शांतिपूर्ण ढंग से संघर्ष करने का अधिकार है। यह संघर्ष अपने हितों की रक्षा के लिए हो सकता है या समाज की समस्याओं के समाधान के लिए हो सकता है।
- विवेकानुसार धर्म का अधिकार (Article 25) - सभी व्यक्तियों को विवेकानुसार अपने धर्म का अनुसरण करने का अधिकार है।
- शिक्षा का अधिकार (Article 21A) - सभी बाल वर्ग के व्यक्तियों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार है।
- समाज कल्याण का अधिकार (Article 38) - सरकार को समाज के समस्याओं के समाधान के लिए कार्य करना चाहिए।
- स्वस्थ वातावरण का अधिकार (Article 21) - सभी व्यक्तियों को स्वस्थ वातावरण का अधिकार है।
    - न्याय का अधिकार (Article 14-18) - सभी व्यक्तियों को समान न्याय का अधिकार है। इसके तहत किसी व्यक्ति को निष्कासित नहीं किया जा सकता बिना किसी वैधानिक कारण के।
    - संघ और राज्य के अधिकार (Article 246-255) - संघ और राज्यों के बीच कानून बनाने और कानूनों की प्रणाली को वितरित करने का अधिकार है।
    - संवैधानिक अधिकार (Article 32) - सभी व्यक्तियों को संवैधानिक अधिकार है, जिसके तहत वे संवैधानिक उल्लंघनों के खिलाफ न्याय की मांग कर सकते हैं।
    - भाषाई मानदंडों का अधिकार (Article 347-350) - संघ और राज्यों में

अलग-अलग भाषाओं को मान्यता देने का अधिकार है।

- नागरिकता का अधिकार (Article 5-11) - सभी भारतीय नागरिकों को नागरिकता का अधिकार है। इसके तहत वे भारत में रहने के लिए अधिकार हासिल कर सकते हैं।

भारतीय संविधान में सभी लोगों को समान अधिकार मिलते हैं, जो उन्हें एक स्वतंत्र, समान और अधिकृत भारत के नागरिक के रूप में रखते हैं। ऐसे मानव अधिकार जिनका संविधान में विर्निदिष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया गया है, उन्हें उच्चतम न्यायालय द्वारा कुछ विद्यमान मौलिक अधिकारों, जैसे- अनुच्छेद 24, 14 तथा 19 में ही उल्लेखित मौलिक अधिकारों के भाग या प्रसार के रूप में मान्यता दी गई है, जैसे- प्रेस की स्वतन्त्रता, जानने का अधिकार, शिक्षा का अधिकार, आहार पाने का अधिकार, जीविकोपार्जन का अधिकार आदि। संविधान द्वारा सर्वोच्च न्यायालय को इन अधिकारों के रक्षक के रूप में नामित किया गया है। कुल मिलाकर, भारतीय संविधान के विभिन्न प्रावधान स्वस्थ व समाज निर्माण हेतु जनता के मानवाधिकारों को सम्पूर्ण रखने में पूर्णतः सक्षम है।

**स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न**

1. NHRC अर्थात् राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग कब अस्तित्व में आया?
2. जीवन का अधिकार कौन से अनुच्छेद में है ?
3. भाषाई मानदंडों का अधिकार कौन से अनुच्छेद में है?
4. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग , मानवाधिकार दिवस कब मनाता है।

## 2.7 मौलिक कर्तव्य का अर्थ

मौलिक कर्तव्य वे नैतिक दायित्व हैं, जो भारत के प्रत्येक नागरिक को संविधान द्वारा सौंपे गए हैं। ये कर्तव्य नागरिकों में देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता और भाईचारे की भावना को बढ़ावा देने, सकारात्मक नागरिकता को प्रोत्साहित करने और संविधान के मूल्यों को बनाए रखने के लिए निर्धारित किए गए हैं। मौलिक कर्तव्य, जो प्रकृति में अनिवार्य हैं, नागरिकों में अपने कर्तव्यों के प्रति दायित्व और अनुशासन की भावना पैदा करते हैं।वे नागरिकों को याद दिलाते रहते हैं कि अधिकारों और कर्तव्यों के बीच संतुलन बना रहे। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी ने सभी नागरिकों की आर्थिक और सामाजिक जिम्मेदारियों पर ज़ोर देते हुए कहा था: “अधिकार का सच्चा स्रोत कर्त्तव्य है यदि हम सभी अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते हैं, तो अधिकारों की तलाश करना दूर नहीं होगा। अगर कर्तव्यों को पूरा न करें और हम अधिकारों के पीछे दौड़ते हैं, तो वे हमें नहीं मिलेंगे, जितना अधिक हम उनका पीछा करेंगे, वे उतनी ही दूर उड़ते चले जाएँगे"।

## 2.8 भारतीय संविधान में मौलिक कर्तव्य

सरदार स्वर्ण सिंह समीति मूल कर्तव्यों से सम्बंधित है। इस समीति का गठन 1976 में किया गया था। इसे 1975- 77 के आपातकाल के दौरान मूल कर्तव्यों के महत्त्व के संबंध में संस्तुति देनी थी। इस समीति ने सिफारिश की कि संविधान में मूल कर्तव्यों का एक अलग पाठ होना चाहिए और नागरिकों को अधिकारों के प्रयोग के साथ-साथ अपने कर्तव्यों को निभाना भी आना चाहिए। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51(A) में 11 मौलिक कर्तव्यों का वर्णन किया गया है, स्वर्ण सिंह समीति की सिफारिश पर 1976 में 42 वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा **अनुच्छेद 51-A** के तहत संविधान के **भाग IV-A में दस मौलिक कर्तव्य** जोड़े गए। और बाद में, वर्ष 2002 में 86 वें संविधान संशोधन द्वारा 11वां कर्तव्य जोड़ा गया। भारतीय संविधान में मौलिक कर्तव्यों को शामिल करने का विचार रूस के संविधान (तत्कालीन सोवियत संघ) से प्रेरित था। इसका उद्देश्य सभी नागरिकों पर देशभक्ति की भावना को बढ़ावा देने और भारत की एकता को बनाए रखने के लिए "नैतिक दायित्व" लागू करना है। सभी ग्यारह कर्तव्य संविधान के अनुच्छेद 51-A (भाग- IV-A) में सूचीबद्ध हैं।

अनुच्छेद -51 (A) के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होगा कि वह –

- संविधान का पालन करें और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्र ध्वज और राष्ट्र गान का सम्मान करें।
- स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखें और उनका सम्मान करें।
- भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करें और उसे अक्षुण्ण रखें।
- देश की रक्षा करें और युद्ध इत्यादि की स्थिति में आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करें।
- भारत के सभी लोगों में समरसता और भाईचारे की भावना का निर्माण करें जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग आधारित सभी भेदभाव से परे हों तथा ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं।
- हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझें और उसका परिरक्षण करें।
- पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करें और उसका संवर्धन करें तथा प्राणीमात्र के प्रति दया भाव रखें।
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करें।

- सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखें और हिंसा से दूर रहें।
- व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करें जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊचाइयों को छूने में सक्षम हो।
- 6 से 14 वर्ष तक की उम्र के बीच अपने बच्चों को शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराएं (यह कर्तव्य 86वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2002 के द्वारा जोड़ा गया)

## 2.9 मौलिक कर्तव्यों की विशेषताएं

भारतीय संविधान के मौलिक कर्तव्य की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं-

- मौलिक कर्तव्यों को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है: नागरिक कर्तव्य और नैतिक कर्तव्य।
- नागरिक कर्तव्य: संविधान, राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रगान का सम्मान करना।
- नैतिक कर्तव्य: स्वतंत्रता संग्राम के महान आदर्शों को संजोए रखना।
- मौलिक कर्तव्य केवल भारतीय नागरिकों पर लागू होते हैं; वे विदेशियों पर लागू नहीं होते, जबकि मौलिक अधिकार नागरिकों और विदेशियों दोनों पर लागू होते हैं।
- राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों की तरह, मौलिक कर्तव्य भी गैर-न्यायसंगत हैं। अर्थात नागरिकों द्वारा अपने मौलिक कर्तव्यों का पालन न करना दंडनीय नहीं है।
- ये कर्तव्य नागरिकों के व्यवहार और आचरण का मार्गदर्शन करते हैं और एक जिम्मेदार और कानून का पालन करने वाले समाज के निर्माण के लिए नैतिक दिशाबोध के रूप में कार्य करते हैं।
- ये कर्तव्य न्याय योग्य नहीं हैं, अर्थात ये न्यायपालिका के माध्यम से कानून द्वारा लागू नहीं किए जा सकते। यद्यपि, ये नागरिकों के लिए नैतिक दायित्वों और मार्गदर्शक सिद्धांतों के रूप में कार्य करते हैं।
  - इनमें से कुछ नैतिक कर्तव्य हैं जैसे- राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के महान आदर्शों को संजोना, जबकि
  - अन्य नागरिक कर्तव्य हैं जैसे संविधान का सम्मान करना।
  - मौलिक कर्तव्य नागरिकों को भारतीय संस्कृति और विरासत की रक्षा करने और उसे आने वाली पीढ़ियों तक पहुंचाने के लिए प्रेरित करते हैं।
  - मौलिक कर्तव्य नागरिकों को पर्यावरण की रक्षा करने और प्रदूषण को रोकने के लिए प्रेरित करते हैं।
  - मौलिक कर्तव्य नागरिकों को आतंकवाद और हिंसा के खिलाफ लड़ने और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व

- को बढ़ावा देने के लिए प्रेरित करते हैं।

## 2.10 मौलिक कर्तव्यों का महत्व

**नागरिक चेतना को बढ़ावा देना-** ये कर्तव्य नागरिकों में राष्ट्र और समाज के प्रति नागरिक चेतना और जवाबदेही की भावना पैदा करते हैं।

**शिक्षा और संस्कृति को बढ़ावा देना -** कुछ मौलिक कर्तव्य शिक्षा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और वैज्ञानिक ज्ञान के विकास के महत्त्व पर बल देते हैं, साथ ही साथ भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को भी संजोते हैं।

**अधिकारों के साथ सामंजस्य -** ये कर्तव्य संविधान में निहित मौलिक अधिकारों के पूरक हैं। यद्यपि मौलिक अधिकार नागरिकों को कुछ प्राप्त करने का अधिकार देते हैं, मौलिक कर्तव्य उन्हें समाज और राष्ट्र के प्रति उनके पारस्परिक दायित्वों की स्मरण कराते हैं।

**लोगों की भागीदारी को बढ़ावा देना -** ये नागरिकों में यह भावना पैदा करते हैं, कि वे केवल दर्शक नहीं बल्कि राष्ट्रीय लक्ष्यों को प्राप्त करने में सक्रिय भागीदार हैं।

**राष्ट्रीय एकता और अखंडता का संरक्षण-** ये कर्तव्य संविधान के आदर्शों का सम्मान करने और व्यक्तिगत हितों से परे देश के कल्याण के लिए एक साझा प्रतिबद्धता को बढ़ावा देने के महत्व पर बल देते हैं।

**नैतिक और सदाचार मूल्यों का समावेश -** ये कर्तव्य ईमानदारी, सत्यनिष्ठा और दूसरों के सम्मान को बढ़ावा देकर नागरिकों में नैतिक और सदाचार मूल्यों के विकास को प्रोत्साहित करते हैं।

**लोकतांत्रिक मूल्यों को बढ़ावा देना -** मौलिक कर्तव्य मौलिक अधिकारों के पूरक हैं और अधिकारों और दायित्वों के बीच संतुलन बनाते हैं। ये नागरिकों में अनुशासन और जवाबदेही को बढ़ावा देते हैं और लोकतांत्रिक मूल्यों को फलने-फूलने में मदद करते हैं। ये कर्तव्य नागरिक जुड़ाव और जिम्मेदार नागरिकता के माध्यम से लोकतंत्र के सिद्धांतों को सुदृढ़ करते हैं, जो एक जीवंत लोकतंत्र के कामकाज के लिए आवश्यक हैं। मौलिक कर्तव्य मौलिक अधिकारों के पूरक हैं और अधिकारों और दायित्वों के बीच संतुलन बनाते हैं। ये नागरिकों में अनुशासन और जवाबदेही को बढ़ावा देते हैं और लोकतांत्रिक मूल्यों को फलने-फूलने में मदद करते हैं।

**सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देना -**ये कर्तव्य नागरिकों को सद्भाव और समान भाईचारे की भावना को बढ़ावा देने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, जिससे सामाजिक सद्भाव और समावेशिता को बढ़ावा मिलता है।

**कानूनी और संवैधानिक ढांचा-** ये कर्तव्य विधायकों और नीति निर्माताओं के लिए समाज की बेहतरी के लिए कानून और नीतियां बनाने में मार्गदर्शक सिद्धांतों के रूप में काम करते हैं।

**न्यायपालिका की सहायता-** सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के अनुसार किसी भी कानून की संवैधानिकता का निर्धारण करते समय, अगर न्यायपालिका को यह महसूस होता है कि विचाराधीन कानून किसी मौलिक कर्तव्य को लागू करने का प्रयास करता है, तो वह ऐसे कानून को अनुच्छेद 14 (कानून के समक्ष समानता) या अनुच्छेद 19 (छह स्वतंत्रताएं) के संबंध में 'उचित' मान सकती है। वे न्यायपालिका को किसी कानून की संवैधानिक वैधता की जांच और निर्धारित करने में सहायता करते हैं।

**वैश्विक मान्यता -**मौलिक कर्तव्यों को शामिल करने से वैश्विक पटल पर भारत की स्थिति मजबूत होती है क्योंकि यह लोकतांत्रिक मूल्यों और संवैधानिक सिद्धांतों के प्रति उसके नागरिकों के समर्पण को दर्शाता है।

**पर्यावरण संरक्षण**

पर्यावरण संरक्षण का दायित्व सतत विकास के प्रति भारत की प्रतिबद्धता को रेखांकित करता है।

**स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न**

**5.** भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51(A) में मौलिक कर्तव्य कितने हैं ?

6. कौन से संविधान संशोधन के अंतर्गत 11 वां मौलिक कर्तव्य जोड़ा गया है।

7. कौन सी समीति मौलिक कर्तव्यों से सम्बंधित है ?

## 2.11 सारांश

प्रस्तुत ईकाई में हमने मानव अधिकार के विषय में विस्तृत रूप से अध्ययन किया, तथा यह जाना की किसी भी व्यक्ति को सम्मान तथा गौरव पूर्ण जीवन जीने के जो भी अधिकार प्राप्त हैं वो मानवाधिकार हैं। ये अधिकार हमें केवल मनुष्य होने के नाते प्राप्त हैं । प्रत्येक वर्ष 10 दिसंबर को **विश्व मानवाधिकार दिवस** मनाया जाता है। मानवाधिकार किसी व्यक्ति को दुर्व्यवहार या भेदभाव से बचाता हैं क्योंकि सभी को शारीरिक और बौद्धिक रूप से विकसित होने का समान अवसर मिलना चाहिए ।अतः मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण हैं। मानवाधिकारों की विशेषताएं तथा भारतीय संविधान में मानवाधिकार का स्वरुप कैसा होता है इस पर चर्चा की । इसके अतिरिक्त मौलिक कर्तव्यों को जाना की भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51(A) में 11 मौलिक कर्तव्य हैं। उसके विषय में विस्तृत रूप से अध्ययन किया। यदि अधिकारों के साथ कर्तव्य न जुड़े हों तो अधिकार निरर्थक हो जाते हैं । यदि हम एक नागरिक के रूप में अपने कर्तव्यों का पालन नहीं करते हैं तो अन्य

लोग अपने अधिकारों का सुख नहीं ले सकते हैं। जिससे की सरकार भी हमारी आवश्यकताओं जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य ,पानी ,आवास आदि को पूरा करने में अपने दायित्वों का ठीक तरह से पालन नहीं कर पाएगा अतः भारतीय संविधान में मौलिक कर्तव्यों को शामिल किया जाना अनिवार्य प्रतीत हुआ।

## 2.13 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. 1993,
2. Artical-21,
3. Artical 347-350,
4. 10,
5. 11,
6. 86 वें संविधान संशोधन
7. सरदार स्वर्ण सिंह समीति

## 2.13 सन्दर्भ ग्रंथ सूची


1. डॉ. जयकुमार मिश्र: भारत का संविधान-एक पुनर्दृष्टि
2. डॉ. कुलदीप फड़िया: संयुक्त राष्ट्र संघ एवं प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय संगठन
3. डॉ. डी.डी.बसु: भारत का संविधान-एक परिचय
4. तिवारी, एम.के. भारत का संविधान
5. **https://www.ohchr.org/en/development/development-and-humarights**
6. **https://www.who.int/news-room/fact-sheets/detail/human-rights-and-health**
7. **https://papers.ssrn.com/sol3/papers.cfm?abstract_id=5289013**
8. **https://lawbhoomi.com/human-rights-in-the-indian-constitution/**


## 2.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मानवाधिकार से आप क्या समझते हैं ? इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. भारतीय संविधान में मानवाधिकारों का वर्णन कीजिए।

3. मानवाधिकारों के प्रकार का वर्णन कीजिए।
4. भारतीय संविधान के अंतर्गत मौलिक कर्तव्यों का वर्णन कीजिए।
5. मौलिक कर्तव्यों के महत्व तथा विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

# इकाई -3

# मानवाधिकार आयोग (NCSC/ST, NCM, NCW)
# Human Rights Commission (NCSC/ST, NCM, NCW)

**3.1 प्रस्तावना**

**3.2 उद्देश्य**

**3.3 मानवाधिकार आयोग**

**3.4 राष्ट्रीय अनुसूचित जाति/जन जाति आयोग (NCSC/ST)**

**3.5 राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग (NCM)**

**3.6 राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW)**

**3.7 सारांश**

**3.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर**

**3.9 सन्दर्भ ग्रंथ सूची**

**3.10 निबन्धात्मक प्रश्न**

## 3.1 प्रस्तावना

मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति को जन्म से प्राप्त अधिकार है ,भारत में संविधान इन अधिकारों के संरक्षण की सुनिश्चितता करता है तथा समाज के कमजोर एवं वंचित वर्गों की सुरक्षा के लिए विशेष प्रावधान भी प्रदान करता है। इन्हीं अधिकारों की प्रभावी रक्षा और संवर्धन के लिए विभिन्न राष्ट्रीय आयोगों की स्थापना की गई है ,जैसे-राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग ,(NCSC),राष्ट्रीय अनुसूचित जन जाति आयोग (NCST),राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग(NCM),और राष्ट्रीय महिला आयोग(NCW)। ये आयोग नीति निर्माण में सरकार को सलाह देकर और शिकायतों की जाँच करके नागरिकों के मानवाधिकारों को व्यावहारिक रूप से सुरक्षित करने का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं।

## 3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत ईकाई के अध्ययन के पश्चात आप

- मानवाधिकार आयोग को समझ सकेंगे।
- राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग ,(NCSC) को समझ सकेंगे
- राष्ट्रीय अनुसूचित जन जाति आयोग (NCST), राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग(NCM),और राष्ट्रीय महिला आयोग(NCW) की विस्तृत व्याख्या कर सकेंगे।

## 3.3 मानवाधिकार आयोग

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग एक स्वायत्त विधिक संस्था है। इसकी स्थापना 12 अक्टूबर 1993 को हुई थी। इसकी स्थापना मानवाधिकार संरक्षण 1993 के अन्तर्गत की गयी । यह आयोग देश में मानवाधिकारों का रक्षक है। यह सविंधान द्वारा निर्मित अंतर्राष्ट्रीय सन्धियों एवं निर्मित व्यक्तिगत अधिकारों का संरक्षक है। यह एक बहु सदस्यीय निकाय है। इसके प्रथम अध्यक्ष न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र थे। वर्तमान में (2024) न्यायमूर्ति वी. रामासुब्रमण्यम इसके वर्तमान अध्यक्ष के पद पर आसीन है। इसके अध्यक्ष व सदस्यों का कार्यकाल 3 वर्ष या 70 वर्ष (2019 से परिवर्तित पहले 5वर्ष था) (जो भी पहले पूर्ण हो जाए)। इसके अध्यक्ष व सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा एक गठित समिति की सिफारिश पर होती है। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का गठन पेरिस सिद्धान्तों के अनुरूप है, जिन्हें अक्तूबर, 1991 में पेरिस में मानव अधिकार संरक्षण एवं संवर्द्धन के लिए राष्ट्रीय संस्थानों पर आयोजित पहली अंतरर्राष्ट्रीय कार्यशाला में अंगीकृत किया गया था तथा 20 दिसम्बर, 1993 में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा संकल्प 48/134 के रूप में समर्थित किया गया था। जो संविधान और अंतर्राष्ट्रीय संधियों द्वारा गारंटीकृत जीवन, स्वतंत्रता, समानता और सम्मान के अधिकारों की रक्षा करता है, शिकायतें सुनता है और सरकार को सलाह देता है। मानवाधिकार आयोग का मुख्य कार्य मानवाधिकारों की रक्षा और बढ़ावा देना है।

**मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 के अनुसार, एनएचआरसी के कार्य हैं-**

- स्वयं की पहल पर या पीड़ित या उसकी ओर से किसी व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत याचिका पर, निम्नलिखित की शिकायत की जांच करना -
  i) मानव अधिकारों का उल्लंघन या दुष्प्रेरण या
  ii) किसी लोक सेवक द्वारा ऐसे उल्लंघन की रोकथाम में लापरवाही
- किसी न्यायालय के समक्ष लंबित मानवाधिकारों के उल्लंघन के किसी आरोप से संबंधित किसी कार्यवाही में उस न्यायालय की स्वीकृति से हस्तक्षेप करना।
- राज्य सरकार को सूचित करते हुए, राज्य सरकार के नियंत्रणाधीन किसी जेल या किसी अन्य संस्थान का दौरा करना, जहां व्यक्तियों को उपचार, सुधार या संरक्षण के प्रयोजनों के लिए

हिरासत में लिया गया हो या रखा गया हो, ताकि वहां के निवासियों की जीवन-स्थिति का अध्ययन किया जा सके और उस पर सिफारिशें की जा सकें।

- मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए संविधान या किसी कानून द्वारा या उसके अंतर्गत सुरक्षा उपायों की समीक्षा करना तथा उनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए उपायों की सिफारिश करना।
- आतंकवाद के कृत्यों सहित उन कारकों की समीक्षा करना जो मानव अधिकारों के आनंद को बाधित करते हैं और उचित उपचारात्मक उपायों की सिफारिश करना।
- मानवाधिकारों पर संधियों और अन्य अंतर्राष्ट्रीय उपकरणों का अध्ययन करना तथा उनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए सिफारिशें करना।
- मानवाधिकार के क्षेत्र में अनुसंधान करना और उसे बढ़ावा देना ।
- समाज के विभिन्न वर्गों के बीच मानवाधिकार साक्षरता का प्रसार करना तथा प्रकाशनों, मीडिया, सेमिनारों और अन्य उपलब्ध साधनों के माध्यम से इन अधिकारों की सुरक्षा के लिए उपलब्ध सुरक्षा उपायों के बारे में जागरूकता को बढ़ावा देना ।
- मानव अधिकारों के क्षेत्र में कार्यरत गैर-सरकारी संगठनों और संस्थाओं के प्रयासों को प्रोत्साहित करना।
- ऐसे अन्य कार्य जो वह मानव अधिकारों के संवर्धन के लिए आवश्यक समझे।

NHRC एक व्यापक मानवाधिकार निकाय है, और ये सभी भारत में मानवाधिकारों की सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, भारत का राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) भारतीय संविधान और अंतर्राष्ट्रीय संधियों में बताए गए मानवाधिकारों की सुरक्षा और बढ़ावा देने में अहम भूमिका निभाता है। यह एक स्वायत्त संस्था के तौर पर काम करता है, जिसे व्यक्तियों के जीवन, स्वतंत्रता, समानता और गरिमा से जुड़े अधिकारों की रक्षा करने का काम सौंपा गया है, जिससे लोकतांत्रिक शासन और कानून के शासन को मज़बूती मिलती है। NHRC सार्वभौमिक मानवाधिकार मानकों को बनाए रखने के लिए अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संगठनों के साथ भी सहयोग करता है।

## 3.4 राष्ट्रीय अनुसूचित /अनुसूचित जन जाति आयोग (NCSC/ST)

भारत में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग स्वायत्त संस्था है। राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (NCSC) ,इसकी स्थापना की प्रक्रिया **1978** से शुरू हुई थी, लेकिन इसका वर्तमान स्वरूप **89वें संविधान संशोधन (2003)** के बाद **2004** में बना, जब SC और ST आयोग अलग हुए। यह अनुच्छेद 338 के तहत एक संवैधानिक निकाय है । 89 वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 2003 में हुआ, जिसमें राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयोग का दो भागो में विभाजन हुआ। राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग

(अनुच्छेद-338) तथा अनुसूचित जनजाति आयोग (अनुच्छेद-338क) के रुप में। भारत में अनुसूचित जातियों (SC) और अनुसूचित जनजातियों (ST) के अधिकारों, हितों और कल्याण की रक्षा के लिए बनाए गए दो अलग-अलग, लेकिन संबंधित, संवैधानिक निकाय (अनुच्छेद 338 और 338A के तहत) हैं, जो उनके शोषण के खिलाफ सुरक्षा, सामाजिक-आर्थिक विकास की निगरानी और उनके अधिकारों के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने का काम करते हैं।

## राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (NCSC)

NCSC एक संवैधानिक निकाय है, जिसकी स्थापना अनुसूचित जातियों के शोषण के विरुद्ध सुरक्षा उपाय प्रदान करने तथा उनके सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक हितों को बढ़ावा देने के साथ उनकी रक्षा करने के उद्देश्य से की गई है। राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (NCSC) का औपचारिक गठन 2004 में हुआ, जो विशेष रूप से अनुसूचित जातियों के मुद्दों पर केंद्रित है और अनुसूचित जातियों के शोषण के खिलाफ सुरक्षा उपाय प्रदान करता है। आयोग को अपनी संचालन प्रक्रिया को विनियमित करने की शक्ति प्राप्त है। किसी भी मामले की जाँच करते समय अथवा किसी शिकायत की जाँच करते समय आयोग को किसी वाद का विचारण करने वाले सिविल न्यायालय की शक्तियाँ प्राप्त हैं।

राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग की संरचना

आयोग में एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष, और तीन अन्य सदस्य होते हैं। इन सभी की नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति द्वारा अपने हस्ताक्षर और मुहर वाले वारंट के माध्यम से की जाती है। सदस्यों का चयन सामाजिक कार्य की पृष्ठभूमि या अनुसूचित जातियों से जुड़े मुद्दों की व्यापक समझ के आधार पर किया जाता है अध्यक्ष को केंद्रीय कैबिनेट मंत्री का दर्जा प्राप्त होता है, जबकि उपाध्यक्ष और अन्य सदस्यों को भारत सरकार के सचिव  या राज्य मंत्री के समकक्ष दर्जा दिया जाता है। सभी सदस्यों का कार्यकाल आमतौर पर 3 वर्ष का होता है, और राष्ट्रपति उनके सेवा की शर्तें और कार्यकाल निर्धारित करते हैं।

## राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग के कार्य

- अनुसूचित जातियों के लिए संवैधानिक और कानूनी सुरक्षा उपायों की जांच एवं निगरानी।
- अनुसूचित जातियों को उनके अधिकारों से वंचित करने संबंधी शिकायतों की जांच।
- अनुसूचित जाति के लिये संवैधानिक तथा अन्य कानूनी सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जाँच एवं निगरानी करना और साथ ही उनके कामकाज का मूल्यांकन भी करना।
- अनुसूचित जाति के अधिकारों एवं सुरक्षा उपायों से वंचित होने से संबंधित विशिष्ट शिकायतों की जाँच करना।

- अनुसूचित जाति के सामाजिक-आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग लेना तथा सलाह देना एवं संघ या राज्य के तहत उनके विकास की प्रगति का मूल्यांकन करना।
- राष्ट्रपति को वार्षिक रूप से तथा ऐसे अन्य समय पर जब वह उचित समझे, उन सुरक्षा उपायों के कामकाज पर रिपोर्ट प्रस्तुत करना।
- अनुसूचित जाति के संरक्षण, कल्याण एवं सामाजिक-आर्थिक विकास के लिये उन सुरक्षा उपायों के साथ-साथ अन्य उपायों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिये संघ या राज्य द्वारा उठाए जाने वाले उपायों के बारे में सिफारिशें करना।

**संवैधानिक प्रावधान -**

- **अनुच्छेद 15:** यह अनुच्छेद विशेष रूप से जाति के आधार पर भेदभाव के मुद्दे को संबोधित करता है, अनुसूचित जातियों (SC) के संरक्षण और उत्थान पर बल देता है।
- **अनुच्छेद 17:** यह अनुच्छेद अस्पृश्यता को समाप्त करता है और किसी भी रूप में इसके अभ्यास पर रोक लगाता है। यह सामाजिक भेदभाव को खत्म करने तथा सभी व्यक्तियों की समानता एवं सम्मान को बढ़ावा देता है।
- **अनुच्छेद 46:** यह अनुच्छेद राज्य को अनुसूचित जातियों और समाज के अन्य कमज़ोर वर्गों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों को बढ़ावा देने तथा उन्हें सामाजिक अन्याय एवं सभी प्रकार के शोषण से बचाने का निर्देश देता है।
- **अनुच्छेद 243D(4):** यह प्रावधान क्षेत्र में उनकी आबादी के अनुपात में **पंचायतों** (स्थानीय स्व-सरकारी संस्थानों) में अनुसूचित जाति के लिये सीटों के आरक्षण को अनिवार्य करता है।
- **अनुच्छेद 243T(4):** यह प्रावधान क्षेत्र में उनकी आबादी के अनुपात में नगर पालिकाओं (शहरी स्थानीय निकायों) में अनुसूचित जाति के लिये सीटों का आरक्षण सुनिश्चित करता है।
- अनुच्छेद 330 और अनुच्छेद 332 में लोकसभा तथा राज्यों की विधानसभाओं (क्रमशः) में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में सीटों के आरक्षण का प्रावधान है।

## 3.5 राष्ट्रीय अनुसूचित जन जाति आयोग (NCST)

NCST को संविधान के अनुच्छेद 338A के तहत वर्तमान में प्रभावी किसी कानून या सरकार के किसी अन्य आदेश के अंतर्गत अनुसूचित जनजातियों को प्रदान किए गए विभिन्न सुरक्षा उपायों के कार्यान्वयन

की निगरानी का अधिकार दिया गया है। वर्ष 1935 के भारत सरकार अधिनियम ने पहली बार प्रांतीय विधानसभाओं में "पिछड़ी जनजातियों" के प्रतिनिधियों का आह्वान किया। NCST यह आकलन करने के लिये भी अधिकृत है कि ये सुरक्षा उपाय कितनी अच्छी तरह काम कर रहे हैं। NCST साल 2025 में अपना 22वां स्थापना दिवस मना रहा है। एक संवैधानिक संस्था के तौर पर गठित NCST भारत में अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों की रक्षा करता है और उन्हें बढ़ावा देता है। यह कमीशन अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक-आर्थिक विकास से संबंधित नीतियों पर सरकार को सलाह देने और न्याय सुनिश्चित करने के लिए एक प्रहरी के रूप में काम करता है।

**राष्ट्रीय अनुसूचित जन जाति आयोग की संरचना**

आयोग में एक अध्यक्ष , एक उपाध्यक्ष और तीन अन्य सदस्य होते हैं, जिन्हें भारत के राष्ट्रपति अपने वारंट और मुहर के तहत चुनते हैं। समिति के सदस्यों में से एक महिला होनी चाहिए। फिलहाल, NCST समिति में चार सदस्य हैं, और उपाध्यक्ष का पद खाली है। NCST कमीशन के सभी सदस्यों को तीन साल के लिए नियुक्त किया जाता है और उन्हें दो से ज़्यादा कार्यकाल के लिए दोबारा नियुक्त नहीं किया जा सकता। अपने कार्यकाल के दौरान, वे आदिवासी समुदाय की शिकायतों, नीतियों और आदिवासी समुदाय की बेहतरी से जुड़े सुझावों पर काम करते हैं। भारत के राष्ट्रपति उनकी शक्तियों और सेवा के कार्यकाल को तय करते हैं। NCST कमीशन के पास अपनी प्रक्रियाओं को रेगुलेट करने की शक्ति और आज़ादी भी है, जिससे प्रभावी और स्वतंत्र कामकाज सुनिश्चित होता है। यह संवैधानिक ढांचा NCST को देश भर में अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों को बनाए रखने और उनकी रक्षा करने का अधिकार देता है

**राष्ट्रीय अनुसूचित जन जाति आयोग के कार्य**

- NCST को संविधान के तहत या अन्य कानूनों के तहत या अनुसूचित जनजाति के लिये प्रदान किये गए सुरक्षा उपायों से संबंधित मामलों की जाँच एवं निगरानी का अधिकार है।
- अनुसूचित जनजातियों को उनके अधिकारों और सुरक्षा उपायों से वंचित करने के संबंध में विशिष्ट शिकायतों की जाँच करना।
- अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक-आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग लेना और सलाह देना एवं उनके विकास की प्रगति का मूल्यांकन करना।
- राष्ट्रपति को वार्षिक रूप से और ऐसे अन्य समय पर रिपोर्ट प्रस्तुत करना जब आयोग उन सुरक्षा उपायों के कार्य पर रिपोर्ट देना उचित समझे।
- अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण, कल्याण और विकास तथा उन्नति के संबंध में ऐसे अन्य कार्यों का निर्वहन करना, जो राष्ट्रपति संसद द्वारा बनाए गए किसी भी कानून के प्रावधानों के अधीन नियम द्वारा विनिर्दिष्ट करे।

- अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों को बेहतर बनाने के लिए सुझाव देना और सालाना रिपोर्ट तैयार करना। सरकार को शिक्षा के विकास, कल्याणकारी योजनाओं और सामाजिक-आर्थिक विकास जैसे सुधार उपायों पर सुझाव देना।
- अनुसूचित जनजातियों के खिलाफ अत्याचार और भेदभाव जैसी प्रथाओं को रोकने के लिए कार्रवाई का सुझाव देना। ये कर्तव्य यह सुनिश्चित करते हैं कि NCST सक्रिय रूप से अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों और कल्याण के लिए काम करे और ऐसी नीतियां बनाने में मदद करे जो उनकी ज़रूरतों को पूरा करें।

**संवैधानिक प्रावधान:-**

**अनुच्छेद 366(25):** यह केवल अनुसूचित जनजातियों को परिभाषित करने हेतु प्रक्रिया निर्धारित करता है।

- इसमें अनुसूचित जनजातियों को "ऐसी आदिवासी जाति या आदिवासी समुदाय या इन आदिवासी जातियों और आदिवासी समुदायों के भाग या उनके समूह के रूप में परिभाषित किया गया है, जिन्हें इस संविधान के उद्देश्यों के लिये अनुच्छेद 342 में अनुसूचित जनजातियाँ माना गया है"।

**अनुच्छेद 342(1):** राष्ट्रपति, किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में वहाँ उसके राज्यपाल से परामर्श करने के पश्चात् लोक अधिसूचना द्वारा उन जनजातियों या जनजातीय समुदायों अथवा जनजातियों या जनजातीय समुदायों के भागों या उनके समूहों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा।

- **पाँचवी अनुसूची-** यह छठी अनुसूची में शामिल राज्यों के अलावा अन्य राज्यों में अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजाति के प्रशासन एवं नियंत्रण हेतु प्रावधान निर्धारित करती है।
- **छठी अनुसूची-** यह असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिज़ोरम में जनजातीय क्षेत्रों के प्रशासन से संबंधित है।

**वैधानिक प्रावधान:**

- अस्पृश्यता के विरुद्ध नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955
- अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989
- पंचायत उपबंध( अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार )अधिनियम(पेसा),1996
- अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता)अधिनियम ,2006

## स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. अस्पृश्यता के विरुद्ध नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम कब आया ?
2. भारत सरकार अधिनियम ने पहली बार प्रांतीय विधानसभाओं में "पिछड़ी जनजातियों" के प्रतिनिधियों का आह्वान कब किया?
3. कौन सा अनुच्छेद अनुसूचित जातियों (SC) के संरक्षण और उत्थान पर बल देता है?
4. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग एक स्वायत्त विधिक संस्था है। इसकी स्थापना कब हुई ?
5. राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (NCSC) का औपचारिक गठन कब हुआ ?

## 3.6 राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग (NCM)

वर्ष 1978 में गृह मंत्रालय द्वारा पारित एक संकल्प में अल्पसंख्यक आयोग की स्थापना की परिकल्पना की गई थी। वर्ष 1984 में, अल्पसंख्यक आयोग को गृह मंत्रालय से अलग कर दिया गया और इसे नव-निर्मित कल्याण मंत्रालय के अधीन रखा गया, जिसने वर्ष 1988 में भाषाई अल्पसंख्यकों को आयोग के अधिकार क्षेत्र से बाहर कर दिया। वर्ष 1992 में राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम, 1992 के अधिनियमन के साथ ही अल्पसंख्यक आयोग एक सांविधिक/वैधानिक (Statutory) निकाय बन गया और इसका नाम बदलकर राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग (NCM) कर दिया गया। केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम, 1992 के तहत राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग (NCM) की स्थापना की । छह धार्मिक समुदायों, अर्थात; बौद्ध, ईसाई, जैन, मुस्लिम, सिख और पारसी को पूरे भारत में केंद्र सरकार द्वारा अल्पसंख्यक समुदायों के रूप में भारत के राजपत्र में अधिसूचित किया गया है।1993 की मूल अधिसूचना पांच धार्मिक समुदायों के लिए थी: सिख, बौद्ध, पारसी, ईसाई और मुस्लिम; बाद में 2014 में जैन को भी जोड़ा गया। 2011 की जनसंख्या के अनुसार , देश में अल्पसंख्यकों का प्रतिशत देश की कुल जनसंख्या का लगभग 19.3% है। जिसमें मुसलमान 14.2%, ईसाई 2.3% , सिक्ख 1.7% ,बौद्ध 0.7%, जैन 0.4%, पारसी 0.006% हैं । जिसका उद्देश्य भारत के अधिसूचित अल्पसंख्यक समुदायों (मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध, पारसी, जैन) के अधिकारों की रक्षा करना और उनके विकास की निगरानी करना है।

**राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग की संरचना**

आयोग में एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष और पाँच सदस्य होते हैं। अध्यक्ष सहित सभी सदस्य अधिसूचित अल्पसंख्यक समुदायों (मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध, पारसी और जैन) से केंद्र सरकार द्वारा नामित किए जाते हैं। केंद्र सरकार द्वारा नामित किए जाने वाले इन व्यक्तियों को योग्य, क्षमतावान और सत्यनिष्ठ होना चाहिये। प्रत्येक सदस्य का कार्यकाल पद धारण करने की तिथि से तीन वर्ष की अवधि तक होता है।

**राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग के कार्य**

- अल्पसंख्यकों के विकास की प्रगति का मूल्यांकन करना ।

- संविधान,संसद और राज्य विधानमंडलों द्वारा अधिनियमित कानूनों में प्रदान किए गए सुरक्षा उपायों के कामकाज की निगरानी करना ।
- केंद्र सरकार या राज्य सरकारों द्वारा अल्पसंख्यकों के हितों की सुरक्षा के लिए सुरक्षा उपायों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए सिफारिशें करना ।
- अल्पसंख्यकों के अधिकारों और सुरक्षा उपायों से वंचित करने के संबंध में विशिष्ट शिकायतों को देखना और ऐसे मामलों को उपयुक्त अधिकारियों के साथ उठाना ।
- अल्पसंख्यकों के खिलाफ किसी भी तरह के भेदभाव से उत्पन्न होने वाली समस्याओं का अध्ययन कराना और उन्हें दूर करने के उपायों की सिफारिश करना ।
- अल्पसंख्यकों के सामाजिक-आर्थिक और शैक्षिक विकास से संबंधित मुद्दों पर अध्ययन, अनुसंधान और विश्लेषण करना ।
- केंद्र सरकार या राज्य सरकारों द्वारा किए जाने वाले किसी अल्पसंख्यक के संबंध में उचित उपाय सुझाना।
- अल्पसंख्यकों से संबंधित किसी भी मामले और विशेष रूप से उनके सामने आने वाली कठिनाइयों पर केंद्र सरकार को समय-समय पर या विशेष रिपोर्ट देना ।
- कोई अन्य मामला जो केंद्र सरकार द्वारा संदर्भित किया जा सकता है ।
- अल्पसंख्यकों के सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक विकास से जुड़े मुद्दों पर अध्ययन, अनुसंधान और विश्लेषण करना।

- राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा, उनके विकास को बढ़ावा देने और उन्हें समाज की मुख्यधारा में लाने के लिए एक निगरानी और सलाहकार निकाय के रूप में कार्य करता है।

**अल्पसंख्यकों से संबंधित संवैधानिक और कानूनी प्रावधान:**

- राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम **(NCM Act)** अल्पसंख्यकों को "केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचित एक समुदाय" के रूप में परिभाषित करता है।
- भारत सरकार द्वारा देश में छ: धर्मों मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध और पारसी (पारसी) और जैन को धार्मिक अल्पसंख्यक घोषित किया है।

**राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शिक्षा संस्थान अधिनियम 2004**

- यह अधिनियम सरकार द्वारा अधिसूचित छह धार्मिक समुदायों के आधार पर शैक्षणिक संस्थानों को अल्पसंख्यक का दर्जा प्रदान करता है।

- भारतीय संविधान में "अल्पसंख्यक" शब्द को परिभाषित नहीं किया गया है। हाँलांकि संविधान धार्मिक और भाषायी अल्पसंख्यकों को मान्यता देता है।

**अनुच्छेद 15 और 16**

- ये अनुच्छेद धर्म, जाति, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर नागरिकों के साथ भेदभाव का निषेध करते हैं।
- राज्य के अधीन किसी भी कार्यालय में रोज़गार या नियुक्ति से संबंधित मामलों में नागरिकों को 'अवसर की समानता' का अधिकार है, जिसमे धर्म, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव निषेध है।

**अनुच्छेद 25 (1), 26 और 28**

- यह लोगों को अंत:करण की स्वतंत्रता और स्वतंत्र रूप से धर्म का प्रचार, अभ्यास और प्रचार करने का अधिकार प्रदान करता है।
- संबंधित अनुच्छेदों में प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय या वर्ग को धार्मिक और धर्मार्थ उद्देश्यों हेतु धार्मिक संस्थानों को स्थापित करने का अधिकार तथा अपने स्वयं के धार्मिक मामलों का प्रबंधन, संपत्ति का अधिग्रहण और उनके प्रशासन का अधिकार शामिल है।
- राज्य द्वारा पोषित संस्थानों में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक कार्यों में हिस्सा लेने या अनुदान सहायता प्राप्त करने की स्वतंत्रता होगी।

**अनुच्छेद 29**

- यह अनुच्छेद उपबंध करता है कि भारत के राज्य क्षेत्र या उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी अनुभाग को अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति को बनाए रखने का अधिकार होगा।
- अनुच्छेद-29 के तहत प्रदान किये गए अधिकार अल्पसंख्यक तथा बहुसंख्यक दोनों को प्राप्त हैं।
- हालाँकि सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि इस लेख का दायरा केवल अल्पसंख्यकों तक ही सीमित नहीं है, क्योंकि अनुच्छेद में 'नागरिकों के वर्ग' शब्द के उपयोग में अल्पसंख्यकों के साथ-साथ बहुसंख्यक भी शामिल हैं।

**अनुच्छेद 30:**

- धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षा, संस्थानों की स्थापना और प्रशासन का अधिकार होगा।

- अनुच्छेद 30 के तहत संरक्षण केवल अल्पसंख्यकों (धार्मिक या भाषायी) तक ही सीमित है और नागरिकों के किसी भी वर्ग (जैसा कि अनुच्छेद 29 के तहत) तक विस्तारित नहीं किया जा सकता।

**अनुच्छेद 350 B:**

- मूल रूप से भारत के संविधान में भाषायी अल्पसंख्यकों के लिये विशेष अधिकारी के संबंध में कोई प्रावधान नहीं किया गया था। इसे 7वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम,1956 द्वारा संविधान में अनुच्छेद 350B के रूप में जोड़ा गया।
- यह भारत के राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त भाषायी अल्पसंख्यकों के लिये एक विशेष अधिकारी का प्रावधान करता है।

## 3.7 राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW)

राष्ट्रीय महिला आयोग ( NCW) भारत सरकार का एक वैधानिक निकाय है , जो सामान्यतः महिलाओं को प्रभावित करने वाले सभी नीतिगत मामलों पर सरकार को सलाह देने से संबंधित है। इसकी स्थापना 31 जनवरी 1992 को राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990 के प्रावधानों के तहत की गई थी। एनसीडब्ल्यू का उद्देश्य भारत में महिलाओं के अधिकारों का प्रतिनिधित्व करना और उनकी समस्याओं और चिंताओं को आवाज़ देना है। आयोग के अभियानों के विषयों में दहेज़, राजनीति, धर्म, नौकरियों में महिलाओं का समान प्रतिनिधित्व और श्रम के लिए महिलाओं का शोषण शामिल हैं। एनसीडब्ल्यू ने महिलाओं के खिलाफ पुलिस दुर्व्यवहार पर भी चर्चा की है।

**राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन**

केंद्र सरकार ने अधिनियम के तहत उसे दी गई शक्तियों का प्रयोग करने और सौंपे गए कार्यों को करने के लिए राष्ट्रीय महिला आयोग के नाम से एक निकाय का गठन किया।

आयोग में एक अध्यक्ष, जो महिलाओं के हित के प्रति समर्पित हो, जिसे केंद्र सरकार द्वारा नामित किया जाएगा

पांच सदस्य जिन्हें केंद्र सरकार द्वारा ऐसे सक्षम, ईमानदार और प्रतिष्ठित व्यक्तियों में से नामित किया जाएगा, जिन्हें कानून या विधान, ट्रेड यूनियनवाद, किसी उद्योग या संगठन के प्रबंधन का अनुभव हो, जो महिलाओं के रोजगार की संभावना बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध हो, महिला स्वैच्छिक संगठनों (महिला कार्यकर्ताओं सहित), प्रशासन, आर्थिक विकास, स्वास्थ्य, शिक्षा या समाज कल्याण के क्षेत्र में काम किया हो।

बशर्ते कि कम से कम एक सदस्य अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति से संबंधित व्यक्तियों में से होगा।

एक सदस्य-सचिव जिसे केंद्र सरकार द्वारा नामित किया जाएगा, जो—

(i) प्रबंधन, संगठनात्मक संरचना या समाजशास्त्रीय आंदोलन के क्षेत्र में एक विशेषज्ञ होगा,

या

(ii) एक अधिकारी जो संघ की सिविल सेवा या अखिल भारतीय सेवा का सदस्य हो या संघ के अधीन उपयुक्त अनुभव वाला कोई सिविल पद धारण करता हो।

अध्यक्ष और सदस्यों के पद का कार्यकाल और सेवा की शर्तें-

अध्यक्ष और प्रत्येक सदस्य ऐसे समय के लिए पद धारण करेगा, जो तीन वर्ष से अधिक न हो, जैसा कि केंद्र सरकार इस संबंध में निर्दिष्ट करे।

अध्यक्ष या कोई सदस्य (सदस्य-सचिव के अलावा जो संघ की सिविल सेवा का सदस्य है या अखिल भारतीय सेवा का सदस्य है या संघ के अधीन कोई सिविल पद धारण करता है) लिखित रूप में और केंद्र सरकार को संबोधित करके, किसी भी समय अध्यक्ष के पद से या, जैसा भी मामला हो,सदस्य के पद से इस्तीफा दे सकता है।

केंद्र सरकार उप-धारा (2) में निर्दिष्ट अध्यक्ष या सदस्य के पद से किसी व्यक्ति को हटा देगी

यदि वह व्यक्ति

- दिवालिया हो जाता है।
- किसी ऐसे अपराध के लिए दोषी ठहराया जाता है और कारावास की सजा दी जाती है, जो केंद्र सरकार की राय में नैतिक पतन से संबंधित है।
- मानसिक रूप से अस्वस्थ हो जाता है और सक्षम न्यायालय द्वारा ऐसा घोषित किया जाता है।
- कार्य करने से इनकार करता है या कार्य करने में असमर्थ हो जाता है।
- आयोग से अनुपस्थिति की छुट्टी लिए बिना, आयोग की लगातार तीन बैठकों से अनुपस्थित रहता है; या केंद्र सरकार की राय में अध्यक्ष या सदस्य के पद का इस तरह दुरुपयोग किया है कि उस व्यक्ति का पद पर बने रहना सार्वजनिक हित के लिए हानिकारक है।

बशर्ते कि इस खंड के तहत किसी भी व्यक्ति को तब तक नहीं हटाया जाएगा जब तक कि उस व्यक्ति को मामले में सुनवाई का उचित अवसर न दिया गया हो।

**आयोग के कार्य**

- संविधान और अन्य कानूनों के तहत महिलाओं के लिए प्रदान की गई सुरक्षा से संबंधित सभी मामलों की जांच और परीक्षण करना।
- केंद्र सरकार को, सालाना और ऐसे अन्य समय पर, जैसा आयोग उचित समझे, उन सुरक्षा उपायों के कामकाज पर रिपोर्ट प्रस्तुत करना।

- ऐसी रिपोर्टों में संघ या किसी राज्य द्वारा महिलाओं की स्थितियों में सुधार के लिए उन सुरक्षा उपायों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए सिफारिशें करना।
- समय-समय पर, संविधान और महिलाओं को प्रभावित करने वाले अन्य कानूनों के मौजूदा प्रावधानों की समीक्षा करना और उनमें संशोधन की सिफारिश करना ताकि ऐसे कानूनों में किसी भी कमी, अपर्याप्तता या खामियों को दूर करने के लिए उपचारात्मक विधायी उपायों का सुझाव दिया जा सके।
- संविधान और महिलाओं से संबंधित अन्य कानूनों के प्रावधानों के उल्लंघन के मामलों को उचित अधिकारियों के साथ उठाना।
- शिकायतों को देखना और निम्नलिखित मामलों का स्वतः संज्ञान लेना—

  (i) महिलाओं के अधिकारों से वंचित करना।

  (ii) महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने और समानता और विकास के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए बनाए गए कानूनों का गैर-कार्यान्वयन।

  (iii) कठिनाइयों को कम करने और महिलाओं के कल्याण को सुनिश्चित करने और उन्हें राहत प्रदान करने के उद्देश्य से नीतिगत निर्णयों, दिशानिर्देशों या निर्देशों का पालन न करना,और ऐसे मामलों से उत्पन्न होने वाले मुद्दों को उचित अधिकारियों के साथ उठाना।

- महिलाओं के खिलाफ भेदभाव और अत्याचारों से उत्पन्न होने वाली विशिष्ट समस्याओं या स्थितियों में विशेष अध्ययन या जांच के लिए कहना और बाधाओं की पहचान करना ताकि उन्हें दूर करने के लिए रणनीतियों की सिफारिश की जा सके।
- प्रचार और शैक्षिक अनुसंधान करना ताकि सभी क्षेत्रों में महिलाओं के उचित प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करने के तरीके सुझाए जा सकें और उनकी प्रगति में बाधा डालने वाले कारकों की पहचान की जा सके, जैसे, आवास और बुनियादी सेवाओं तक पहुंच की कमी, अपर्याप्त सहायता सेवाएं और कड़ी मेहनत को कम करने और व्यावसायिक स्वास्थ्य खतरों को कम करने और उनकी उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकियां।
- महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग लेना और सलाह देना।
- संघ और किसी भी राज्य के तहत महिलाओं के विकास की प्रगति का मूल्यांकन करना।
- किसी जेल, रिमांड होम, महिला संस्थान या हिरासत की किसी अन्य जगह का निरीक्षण करना या करवाना, जहाँ महिलाओं को कैदी के तौर पर या किसी और तरह से रखा जाता है, और यदि आवश्यक हो तो संबंधित अधिकारियों के साथ सुधारात्मक कार्रवाई के लिए बात करना।
- बड़ी संख्या में महिलाओं को प्रभावित करने वाले मुद्दों से जुड़े मुकदमों के लिए फंड देना।
- महिलाओं से संबंधित किसी भी मामले पर और विशेष रूप से उन विभिन्न कठिनाइयों पर जिनके तहत महिलाएं काम करती हैं, सरकार को समय-समय पर रिपोर्ट देना।

- कोई अन्य मामला जो केंद्र सरकार द्वारा उसे सौंपा जा सकता है।
- जहाँ ऐसी कोई रिपोर्ट या उसका कोई भाग किसी ऐसे मामले से संबंधित है जिससे कोई राज्य सरकार संबंधित है, तो आयोग ऐसी रिपोर्ट या उसके भाग की एक प्रति उस राज्य सरकार को भेजेगा जो उसे राज्य विधानमंडल के समक्ष एक ज्ञापन के साथ रखवाएगी, जिसमें राज्य से संबंधित सिफारिशों पर की गई या प्रस्तावित कार्रवाई और यदि कोई हो, तो ऐसी किसी भी सिफारिश को स्वीकार न करने के कारणों को समझाया जाएगा।

आयोग, उप-धारा (1) के खंड (a) या खंड (f) के उप-खंड (i) में उल्लिखित किसी भी मामले की जाँच करते समय, मुकदमा चलाने वाले सिविल कोर्ट की सभी शक्तियाँ रखेगा और, विशेष रूप से, निम्नलिखित मामलों के संबंध में, अर्थात्:—

- भारत के किसी भी हिस्से से किसी भी व्यक्ति को बुलाना और उसकी उपस्थिति को लागू करना और शपथ पर उसकी जाँच करना।
- किसी भी दस्तावेज़ की खोज और प्रस्तुति की आवश्यकता।
- हलफनामों पर साक्ष्य प्राप्त करना।
- किसी भी अदालत या कार्यालय से किसी भी सार्वजनिक रिकॉर्ड या उसकी प्रति की मांग करना।
- गवाहों और दस्तावेजों की जाँच के लिए कमीशन जारी करना और कोई अन्य मामला जो निर्धारित किया जा सकता है।

**स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न**

6. राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, का गठन कब हुआ ?
7. भारत सरकार द्वारा देश में कितने धर्मों को धार्मिक अल्पसंख्यक घोषित किया है?

## 3.7 सारांश

भारत में NCSC/ST (अनुसूचित जाति/जनजाति), NCM (अल्पसंख्यक), और NCW (महिला) आयोग, मानवाधिकारों की रक्षा और विशिष्ट समुदायों के हितों की सुरक्षा के लिए बने वैधानिक निकाय हैं जो मानव के विशिष्ट समुदायों की सुरक्षा उनके उत्थान एवं उनके बीच होने वाले भेदभाव आदि को दूर करने के लिए बनाए गए हैं ।अनुसूचित जाति (SC) और अनुसूचित जनजाति (ST)आयोग इनके संवैधानिक अधिकारों और सुरक्षा उपायों के कार्यान्वयन की निगरानी करता है।राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW) महिलाओं से संबंधित नीतिगत मामलों पर सरकार को सलाह देना, शिकायतों का निवारण करना, और लैंगिक समानता के लिए कानूनी जागरूकता कार्यक्रम चलाना (जैसे- बाल विवाह, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न)।NCM (अल्पसंख्यक) आयोग केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचित अल्पसंख्यक समुदायों (जैसे मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध, पारसी, जैन) के हितों की रक्षा करता है।

## 3.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. 1955
2. 1935
3. अनुच्छेद -15
4. 12 अक्टूबर 1993
5. 2004 में हुआ
6. 31 जनवरी 1992
7. छ: धर्मों

## 3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची


1. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-analysis/national-human-rights-commission-nhrc-
2. https://en.wikipedia.org/wiki/National_Commission_for_Women
3. https://www.ncw.gov.in/hi/
4. https://ncsc.nic.in/
5. https://ncsc.nic.in/
6. http://ncsc.nic.in/pages/display/127-ncsc-hand-book,-2016
7. "Minority Rights in India: A Legal Analysis" by Prof. M.P. Raju
8. “International Law and Human Rights” Dr. H.O.Agarwal


## 3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मानवाधिकार आयोग की स्तापना कब हुई ? इसके कार्यों का वर्णन कीजिए।
2. राष्ट्रीय अनुसूचित जाति /अनुसूचित जन जाति आयोग का वर्णन कीजिए।
3. राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग के प्रमुख कार्यों का वर्णन कीजिए।
4. राष्ट्रीय महिला आयोग की समीक्षा कीजिए।

# इकाई 4 – भारत में मानवाधिकार: राष्ट्रीय स्तर पर दलित और महिला आंदोलन

# Human Rights in India: Dalit and Women's Movements at the National Level

**4.1 प्रस्तावना**

**4.2 उद्देश्य**

**4.3 भारत में मानवाधिकारों की अवधारणा**

**4.4 संवैधानिक प्रावधान**

**4.4.1 मौलिक अधिकार**

**4.4.2 राज्य के नीति निदेशक तत्व**

**4.4.3 अंतरराष्ट्रीय प्रतिबद्धताएँ**

**4.5 भारत में दलित आंदोलन**

**4.5.1 अम्बेडकर पूर्व सुधारवादी चरण (19वीं सदी से 1920 के दशक तक)**

**4.5.2 अम्बेडकरवादी राजनीतिक चरण (1920 का दशक से 1956 तक)**

**4.5.3 अम्बेडकर के बाद का चरण (1960 के दशक से वर्तमान तक)**

**4.6 दलित आन्दोलनों की प्रमुख उपलब्धियाँ**

**4.7 भारत में महिला आंदोलन**

**4.7.1 सामाजिक सुधार चरण**

**4.7.2 राष्ट्रवादी संघर्ष और राजनीतिक अधिकार**

**4.7.3 स्वतंत्र एवं विषय आधारित चरण**

**4.8 वर्तमान चुनौतियाँ और भविष्य की दिशा**

**4.9 सारांश**

**4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**

**4.11 निबंधात्मक प्रश्न**

## 4.1 प्रस्तावना

मानवाधिकार (Human Rights) वे मूल अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को केवल मानव होने के कारण प्राप्त हैं। मानव अधिकार सभी व्याक्तियोंके लिए होते हैं चाहे उनका मूल वंश , धर्म , जाति , भाषा ,लिंग तथा राष्ट्रीयता कुछ भी हो। ये अधिकार समानता, स्वतंत्रता, गरिमा और न्याय के सिद्धांतों पर आधारित हैं। संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (UDHR, 1948) तथा भारतीय संविधान दोनों ही मानव की गरिमा और समानता को सर्वोच्च मानते हैं।

भारत में मानवाधिकारों का प्रश्न केवल कानूनी या संवैधानिक विषय नहीं है, बल्कि यह देश की सामाजिक संरचना से गहराई से जुड़ा हुआ है। मानवाधिकार की तलाश असल में असमानता की जड़ जामई हुई व्यवस्था के खिलाफ एक संघर्ष है। भारत और कई दक्षिण एशियाई देशों में यह संघर्ष जाति और लिंग के कारण बहुत प्रभावित होता है। जाति व्यवस्था और पितृसत्तात्मक समाज ने ऐतिहासिक रूप से दलितों और महिलाओं को अधिकारों से वंचित रखा है। इसलिए भारत में मानवाधिकार की चर्चा दलित और महिला आंदोलनों से गहराई से जुड़ी है। दोनों आंदोलनों ने समानता, गरिमा और न्याय के लिए लंबा संघर्ष किया और भारतीय लोकतंत्र को अधिक समावेशी (inclusive) और संवेदनशील बनाया।

दलित समुदाय, जिसे पहले 'अछूत' कहा जाता था, दुनिया के सबसे अधिक हाशिए पर रहे समुदायों में से एक है। यह समुदाय सदियों से जाति व्यवस्था के कारण सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक शोषण और धार्मिक अपमान झेलता आया है। इसी तरह, समाज की सभी परतों की महिलाएं लंबे समय से गहरी पितृसत्ता से जूझती आई हैं, जो उनके नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक अधिकारों को सीमित करती है। दोनों समूहों ने अपनी पहचान के लिए महत्वपूर्ण संघर्ष किए हैं, लेकिन उनके संयोग (intersection) पर एक और गंभीर स्थिति सामने आती है: दलित महिला का अनुभव। दलित महिला जाति, वर्ग और लिंग-इन तीन तरह की उत्पीड़न की स्थिति में रहती है, जिससे वह हिंसा, आर्थिक असुरक्षा और बुनियादी अधिकारों के वंचित होने के प्रति विशेष रूप से असुरक्षित होती है।

इस इकाई में भारत में मानवाधिकारों की वैचारिक रूपरेखा और राष्ट्रीय स्तर पर दलित और महिलाओं के आंदोलनों के विषय में अध्ययन करेंगे। इसमें उनके इतिहास, प्रमुख नेता, महत्वपूर्ण अभियान, कानूनी हस्तक्षेप और समकालीन चुनौतियों को उजागर किया गया है।

## 4.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

1. मानवाधिकार को परिभाषित कर पाएंगे।
2. राष्ट्रीय स्तर पर दलित आंदोलनों के विषय में चर्चा कर पाएंगे।
3. राष्ट्रीय स्तर पर महिला आंदोलनों के विषय में चर्चा कर पाएंगे।
4. भारत में मानवाधिकार संबंधी संवैधानिक प्रावधानों को सूचीबद्ध कर पाएंगे।
5. मौलिक अधिकारों को सूचीबद्ध कर पाएंगे।
6. भारत में दलित आंदोलनों की व्याख्या कर पाएंगे।
7. दलित आंदोलन के विभिन्न चरणों को स्पष्ट कर पाएंगे।
8. भारत में महिला आंदोलनों का वर्णन कर पाएंगे।

## 4.3 भारत में मानवाधिकारों की अवधारणा

मानवाधिकार वे बुनियादी स्वतंत्रताएँ हैं, जिनका हक हर व्यक्ति को है, चाहे उसकी जाति, वर्ग, लिंग या धर्म कुछ भी हो। इन अधिकारों में जीवन का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, समानता, शिक्षा, काम करने का अधिकार और सार्वजनिक जीवन में भाग लेने का अधिकार शामिल हैं। मानवाधिकार वे बुनियादी स्वतंत्रताएँ और सुरक्षा हैं, जिनका हक हर व्यक्ति को सिर्फ इसलिए होता है क्योंकि वह इंसान है। भारत में ये अधिकार संविधान द्वारा और अंतरराष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं द्वारा सुरक्षित किए गए हैं

## 4.4 संवैधानिक प्रावधान Constitutional Provisions

भारतीय संविधान मानवाधिकारों की रक्षा का प्रमुख दस्तावेज है। भारत का संविधान नागरिकों को छह मुख्य मौलिक अधिकार देता है, जो कि लोकतंत्र की रीढ़ माने जाते हैं। ये अधिकार सुनिश्चित करते हैं कि हर व्यक्ति गरिमा, समानता और स्वतंत्रता के साथ जी सके। इन अधिकारों का उल्लंघन होने पर व्यक्ति सीधा न्यायालय जा सकता है-यही इन्हें खास बनाता है। ये अधिकार भारत को लोकतांत्रिक और न्यायपूर्ण समाज बनाते हैं।

### 4.4.1 मौलिक अधिकार (Fundamental Rights)

1. **समानता का अधिकार (Right to Equality) (अनुच्छेद /Article 14–18)**

- अनुच्छेद. 14: सभी नागरिक कानून की नजर में समान हैं। मतलब, कोई भी व्यक्ति कानून से ऊपर नहीं है।
- अनुच्छेद 15: धर्म, जाति, लिंग, भाषा या जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता।
- अनुच्छेद 16: सभी को सरकारी नौकरियों में समान अवसर।
- अनुच्छेद 17: अस्पृश्यता (Untouchability) को पूरी तरह समाप्त किया गया।

- अनुच्छेद 18: उपाधियों का उन्मूलन (जैसे राजा, महाराजा, नवाब जैसी उपाधियाँ अब नहीं दी जातीं)

यह भारत में सामाजिक न्याय और समान अवसर सुनिश्चित करने का सबसे बड़ा आधार है। विशेषकर दलित, महिला और पिछड़े वर्ग के लिए यह सुरक्षा कवच जैसा है।

2. **स्वतंत्रता का अधिकार (Right to Freedom) (अनुच्छेद 19–22)**

यह अधिकार व्यक्ति को अपनी अभिव्यक्ति और जीवन जीने की पूरी स्वतंत्रता देता है।

- **अनुच्छेद 19 - हमें छह प्रकार की स्वतंत्रताएँ देता है।**
  - i. बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता
  - ii. कहीं भी आने–जाने की स्वतंत्रता
  - iii. शांति से एकत्र होने की स्वतंत्रता
  - iv. संगठन/संघ बनाने का अधिकार
  - v. कहीं भी रहने का अधिकार
  - vi. कोई भी पेशा चुनने या व्यापार करने का अधिकार

- **अनुच्छेद 20: अपराध और दंड से जुड़े संरक्षण**

किसी को बिना कानून के दंडित नहीं किया जा सकता।

- **अनुच्छेद 21: जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार**

साफ पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छ पर्यावरण — सब इस अधिकार में शामिल हैं।

- **अनुच्छेद 22: गिरफ़्तारी और हिरासत में सुरक्षा**

मनमानी गिरफ्तारी से बचाता है।

3. **शोषण के विरुद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23–24)**

- अनुच्छेद 23: मानव तस्करी, बेगर (जबरन मजदूरी) और देह व्यापार पर रोक।
- अनुच्छेद 24: 14 साल से कम उम्र के बच्चों को खतरनाक कामों (कारख़ानों, खदानों) में लगाना अपराध है।

महत्व: श्रमिकों, गरीबों, दलितों और बच्चों को शोषण से बचाता है।

4. धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 25–28)

भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है, मतलब सरकार किसी एक धर्म को नहीं मानती।

इस अधिकार के तहत:

- कोई भी अपना धर्म चुन सकता है
- अपने धर्म का पालन कर सकता है
- धर्म का प्रचार कर सकता है (लेकिन बल प्रयोग नहीं)

स्कूलों में धार्मिक शिक्षा को लेकर भी कुछ सीमाएँ तय की गई हैं।

**5. सांस्कृतिक और शैक्षणिक अधिकार (अनुच्छेद 29–30)**

यह अधिकार विशेष रूप से अल्पसंख्यकों (Minorities) के लिए है।

- अनुच्छेद 29: अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति को बचाने का अधिकार।
- अनुच्छेद 30: अल्पसंख्यक अपने स्कूल या कॉलेज खोल सकते हैं और चला सकते हैं।

**6. संवैधानिक उपचार का अधिकार (अनुच्छेद 32)**

यह अधिकार सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने इसे "संविधान की आत्मा" कहा था। अगर किसी का मौलिक अधिकार छीना जाता है, तो वह सीधे उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय जा सकता है।

### 4.4.2 राज्य के नीति निदेशक तत्व (Directive Principles of State Policy - DPSPs)

ये ऐसे दिशा-निर्देश हैं जिन्हें देश में एक न्यायपूर्ण और समान समाज बनाने के लिए सरकार को पालन करना चाहिए। ये अधिकार अदालत में लागू नहीं किए जा सकते, लेकिन देश के शासन में इनका बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। (अनुच्छेद 36–51)

राज्य के नीति निदेशक तत्वों के कुछ उदाहरण:

- समान कार्य के लिए समान वेतन सुनिश्चित करना
- सभी लोगों को पर्याप्त आजीविका (livelihood) उपलब्ध कराना
- शिक्षा और सार्वजनिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देना
- पर्यावरण की रक्षा करना
- बच्चों, महिलाओं और कमजोर वर्गों के लिए कल्याणकारी नीतियाँ बनाना

मौलिक अधिकार और DPSPs का संबंध

- मौलिक अधिकार व्यक्ति की स्वतंत्रता और अधिकारों की रक्षा करते हैं।
- राज्य के नीति निदेशक तत्व राज्य को सामाजिक और आर्थिक न्याय स्थापित करने की दिशा में मार्गदर्शन देते हैं।

ये दोनों मिलकर एक संतुलित ढांचा बनाते हैं जिसमें:

- व्यक्ति की स्वतंत्रता भी सुरक्षित रहती है, और
- समाज का कल्याण भी सुनिश्चित होता है।

### 4.4.3 अंतरराष्ट्रीय प्रतिबद्धताएँ

भारत संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार घोषणा (UDHR), CEDAW (महिलाओं पर भेदभाव उन्मूलन संधि), और ICESCR जैसे समझौतों का हस्ताक्षरकर्ता है।

मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (Universal Declaration of Human Rights), जिसे 1948 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा विश्व स्तर पर अपनाया गया था, एक महत्वपूर्ण वैश्विक घोषणा है जो सार्वभौमिक मानवाधिकारों को सूचीबद्ध करती है, जैसे कि-

- जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार
- यातना से मुक्ति
- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता
- शिक्षा का अधिकार
- काम का अधिकार
- सरकार में भाग लेने का अधिकार

भारत की भूमिका और प्रतिबद्धता इसमें बहुत महत्वपूर्ण रही है; भारत संयुक्त राष्ट्र के मूल सदस्यों में से एक था और इसने 1948 में UDHR का समर्थन किया था । इस समर्थन का प्रमाण यह है कि भारत के संविधान में शामिल कई अधिकार UDHR सिद्धांतों से प्रभावित थे। वैश्विक मानवाधिकार मानकों के प्रति अपनी निरंतर प्रतिबद्धता दिखाते हुए, भारत ने बाद में कई प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संधियों पर हस्ताक्षर किए हैं, जिनमें

- नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (ICCPR),
- आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (ICESCR)
- महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर अभिसमय (CEDAW)
- बाल अधिकारों पर अभिसमय (CRC)

शामिल हैं। भारत पर इन अंतर्राष्ट्रीय मानकों का प्रभाव काफी गहरा है: वे भारतीय कानूनों को प्रेरित करते हैं, और भारतीय न्यायालय अक्सर नागरिकों के मौलिक अधिकारों की व्याख्या और उन्हें बनाए रखने के लिए UDHR और अन्य संधियों का संदर्भ लेती हैं, जिससे वैश्विक मानवाधिकार मूल्यों के प्रति भारत का समर्पण लगातार सुनिश्चित होता है।

## 4.5 भारत में दलित आंदोलन

दलित, जिन्हें ऐतिहासिक रूप से "अछूत" कहा जाता था, जाति-व्यवस्था के कारण सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक जीवन से व्यवस्थित रूप से बाहर रखे गए। दलित आंदोलन की शुरुआत जाति व्यवस्था और सदियों से दलितों के साथ हो रहे अमानवीय व्यवहार के विरोध के रूप में हुई थी। दलितों को समाज से अलग रखा जाता था, वे आर्थिक रूप से वंचित थे, और उन्हें मूलभूत सम्मान से भी दूर रखा जाता था।

आधुनिक विचारों, नई शिक्षा प्रणालियों, लोकतांत्रिक मूल्यों और कानूनी सुधारों के आने के साथ, दलितों ने समानता, न्याय और पहचान की मांग करना शुरू कर दिया। उन्होंने साहित्य, संगठनों और राजनीतिक समूहों के माध्यम से खुद को संगठित करना शुरू किया। यह आंदोलन धीरे-धीरे एक मजबूत सामाजिक और राजनीतिक शक्ति बन गया जिसने जातिगत भेदभाव को चुनौती दी और दलितों के लिए अधिकारों की मांग की।

दलित कौन है?

भारतीय दलित आंदोलन, आधुनिक इतिहास में मानवाधिकार, समानता और गरिमा के लिए सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक-राजनीतिक संघर्षों में से एक है। यह उन समूहों की संगठित सामूहिक पहल का प्रतिनिधित्व करता है, जिन्हें पहले "अछूत" या "दबी-कुचली जातियाँ" कहा जाता था -जो परंपरागत चातुर्वर्ण व्यवस्था से सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से बाहर कर दिए गए थे और जिन्होंने गहराई से जमी हुई जाति-व्यवस्था को तोड़ने की लड़ाई लड़ी।

'दलित' शब्द (जिसका अर्थ मराठी में 'टूटा हुआ' या 'पीड़ित') 1970 के दशक में दलित पैंथर्स द्वारा लोकप्रिय बनाया गया था । यह एक आत्मसम्मान और अधिकार का शब्द है, जो महात्मा गांधी द्वारा प्रयोग किए गए संरक्षणवादी शब्द 'हरिजन' की जगह प्रयोग में आया।

"दलित" शब्द का अर्थ है दबाया हुआ या टूटा हुआ, और इसका उपयोग सबसे पहले ज्योतिबा फुले ने किया था। दलित वे लोग थे जो चार-वर्ण की जाति व्यवस्था से बाहर थे और जिन्हें अछूत माना जाता था। समय के साथ, दलितों ने इस शब्द को अपने संघर्षों और गरिमा को व्यक्त करने के लिए एक राजनीतिक पहचान के रूप में अपनाया। ऐतिहासिक रूप से, उन्हें मंदिरों, सड़कों, कुओं और स्कूलों तक पहुँचने से मना किया गया था, और उन्हें अपमानजनक व्यवसायों में धकेल दिया गया था। दलित पहचान ब्राह्मणवादी प्रभुत्व और जातिगत उत्पीड़न के प्रतिरोध के रूप में विकसित हुई, और धीरे-धीरे उन्होंने समानता और अधिकारों के लिए लड़ने के लिए खुद को संगठित करना शुरू कर दिया।

शुरुआत में दलित आन्दोलन मंदिरों में प्रवेश, मनुस्मृति जैसी ब्राह्मणवादी परंपराओं का विरोध करने और जातिगत बाधाओं को तोड़ने पर केंद्रित था । समय के साथ, यह अधिकारों, न्याय, समानता, आरक्षण और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के लिए लड़ने की दिशा में बदला है। आधुनिकीकरण, शिक्षा, परिवहन और संचार प्रणालियों ने दलितों को अपने अधिकारों को समझने और बेहतर तरीके से संगठित होने में मदद की।

दलित आंदोलन भारत का एक महत्वपूर्ण सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन है, जिसका उद्देश्य जाति आधारित भेदभाव को खत्म करना और दलितों को सम्मान, बराबरी और अधिकार दिलाना है। इसका विकास अलग-अलग चरणों में हुआ है।

### 4.5.1 अम्बेडकर पूर्व (सुधारवादी) चरण (19वीं सदी से 1920 के दशक तक)

इस अवधि में शिक्षा, आत्म-सम्मान और हिंदू धर्म के भीतर धार्मिक प्रथाओं में सुधार पर आधारित स्थानीय और समुदाय-स्तरीय प्रयास हुए।

- भक्ति आंदोलन- कबीर और रविदास जैसे भक्ति संतों ने जातिगत भेदों को अस्वीकार किया और सिखाया कि ईश्वर के सामने सभी मनुष्य समान हैं। उनकी शिक्षाओं ने दलितों को आशा, आत्म-सम्मान और आध्यात्मिक शक्ति दी। भक्ति में समानता का विचार जाति-आधारित प्रतिबंधों के खिलाफ दलित विरोध का एक प्रारंभिक रूप बन गया।
- संस्कृतिकरण-कुछ दलितों ने उच्च जातियों के रीति-रिवाजों को अपनाकर अपनी सामाजिक स्थिति में सुधार करने की कोशिश की, जैसे कि शाकाहार, पवित्र धागा पहनना और ब्राह्मणवादी अनुष्ठानों का पालन करना। उनका मानना था कि उच्च जातियों की नकल करने से उन्हें सामाजिक संरचना में ऊपर उठने में मदद मिलेगी। इस तरीके से कुछ मान्यता मिली, लेकिन भेदभाव पूरी तरह खत्म नहीं हुआ।
- ज्योतिराव फुले (महाराष्ट्र)- फुले को दलित आंदोलन का अग्रदूत माना जाता है। उन्होंने 1873 में सत्यशोधक समाज की स्थापना की। उनकी आलोचना गहरे रूप से ब्राह्मणवाद-विरोधी थी और उन्होंने जाति को आर्थिक शोषण तथा संसाधनों-ज्ञान के एकाधिकार से जोड़ा।
- श्री नारायण गुरु (केरल)-उन्होंने एझावा समुदाय का नेतृत्व किया और पूजा तथा शिक्षा के अधिकार के लिए संघर्ष किया। उनका मूल संदेश था—"एक जाति, एक धर्म, एक ईश्वर"—जो जातिविहीन समाज की वकालत करता था।
- पेरियार ई. वी. रामासामी (तमिलनाडु)-उन्होंने आत्म-सम्मान आंदोलन का नेतृत्व किया। यह आंदोलन ब्राह्मणवादी परंपराओं, हिंदू धर्म और जाति व्यवस्था के पूर्ण अस्वीकार पर आधारित था। पेरियार ने तर्कवाद और नास्तिकता पर जोर दिया।
- गांधी का योगदान-गांधी ने अस्पृश्यता को एक पाप माना और इसे समाप्त करने के लिए कड़ी मेहनत की। उन्होंने दलितों को प्यार से "हरिजन" कहा और उनकी शिक्षा, स्वास्थ्य और जीवन की स्थिति में सुधार के लिए हरिजन सेवक संघ की शुरुआत की। उन्होंने पूरे भारत की यात्रा की और लोगों से अस्पृश्यता छोड़ने और दलित अधिकारों का समर्थन करने के लिए कहा।

### 4.5.2 अम्बेडकरवादी राजनीतिक चरण (1920 का दशक से 1956 तक)

इस चरण का नेतृत्व डॉ. भीमराव अंबेडकर ने किया, जिन्होंने संघर्ष को सामाजिक सुधार से आगे बढ़ाकर राजनीतिक शक्ति, संवैधानिक अधिकारों और धार्मिक ढाँचे से बाहर आत्म-प्रतिष्ठा की ओर मोड़ा। अंबेडकर का योगदान-डॉ. बी. आर. अंबेडकर दलित आंदोलन के सबसे मजबूत नेता थे। उन्होंने समाचार पत्रों, संघों और सत्याग्रहों के माध्यम से दलितों को संगठित किया। उन्होंने दलितों के लिए पानी, मंदिरों और सार्वजनिक स्थानों तक पहुँचने के लिए लड़ाई लड़ी। अंबेडकर ने दलितों के लिए आरक्षण, शिक्षा और राजनीतिक शक्ति की मांग की। संविधान मसौदा समिति के अध्यक्ष के रूप में, उन्होंने अस्पृश्यता के उन्मूलन को सुनिश्चित किया और सभी नागरिकों को समानता की गारंटी दी। अंबेडकर दलित सशक्तिकरण के प्रतीक बन गए।

- राजनीतिक अधिकारों पर जोर-अंबेडकर ने गोलमेज सम्मेलन में दलितों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल की मांग रखी। इसके परिणामस्वरूप 1932 का पूना पैक्ट हुआ, जिसमें अलग निर्वाचक मंडल की जगह आम चुनाव प्रणाली में दलितों (आज के अनुसूचित जाति) के लिए आरक्षित सीटें तय हुईं।
- सार्वजनिक आंदोलन और शिक्षा-उन्होंने 1927 में महाड़ सत्याग्रह शुरू किया—दलितों को सार्वजनिक जल स्रोत का उपयोग करने के अधिकार के लिए। इसके साथ ही उन्होंने मनुस्मृति का सार्वजनिक दहन किया। उनका प्रसिद्ध नारा था—"शिक्षित बनो, संगठित बनो, संघर्ष करो।"
- संवैधानिक योगदान-भारतीय संविधान सभा की ड्राफ्टिंग कमेटी के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने महत्वपूर्ण प्रावधान सुनिश्चित किए:
- अनुच्छेद 17: अस्पृश्यता का उन्मूलन
- अनुच्छेद 15 और 16: भेदभाव पर रोक व शिक्षा-रोजगार-राजनीतिक प्रतिनिधित्व में आरक्षण की व्यवस्था
- धर्मांतरण-1956 में, हिंदू धर्म के भीतर वास्तविक परिवर्तन की कमी से निराश होकर, उन्होंने लाखों अनुयायियों के साथ बौद्ध धर्म ग्रहण किया। यह जाति व्यवस्था के पूर्ण अस्वीकार और एक नए समतामूलक जीवन-दर्शन की खोज का प्रतीक था।
- अंबेडकर और बौद्ध दलित आंदोलन- अंबेडकर का मानना था कि जाति हिंदू धर्म में गहराई से निहित है और दलितों को इसके भीतर वास्तविक समानता नहीं मिल सकती है। वर्षों तक बौद्ध धर्म का अध्ययन करने के बाद, उन्होंने 1956 में लाखों अनुयायियों के साथ बौद्ध धर्म अपना लिया। यह धर्मांतरण विरोध और आत्म-सम्मान का एक शक्तिशाली कार्य बन गया। इसने देश भर के कई दलितों को बाद के वर्षों में जातिगत भेदभाव को अस्वीकार करने के तरीके के रूप में धर्मांतरण के लिए प्रेरित किया।

### 4.5.3 अम्बेडकर के बाद का चरण (1960 के दशक से वर्तमान तक)

इस चरण में दलित पहचान की स्पष्ट अभिव्यक्ति, उग्र राजनीतिक आंदोलन, और संगठित राजनीतिक शक्ति का उदय मुख्य तत्व रहे।

- दलित पैंथर- दलित पैंथर्स 1972 में महाराष्ट्र में उभरा, जो अमेरिका में ब्लैक पैंथर्स से प्रेरित था। उन्होंने दलितों के लिए न्याय की मांग की, जातिगत हिंसा के खिलाफ लड़ाई लड़ी और कट्टरपंथी सामाजिक परिवर्तन को प्रोत्साहित किया। यह आंदोलन मुख्य रूप से युवा दलितों के नेतृत्व में था जिन्होंने अंबेडकरवादी, फुले के और मार्क्सवादी विचारों को मिश्रित किया। उनके सक्रियतावाद ने दलित आत्मविश्वास और दृश्यता को बढ़ाया।
- कांशी राम का योगदान- कांशी राम ने दलितों, पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यकों को एक राजनीतिक पहचान –बहुजन- के तहत एकजुट किया। उन्होंने BAMCEF, DS4 और बाद में बहुजन समाज पार्टी (बसपा) की स्थापना की। उन्होंने दलित प्रतीकों का जश्न मनाने, नेटवर्क बनाने और राजनीतिक जागरूकता पैदा करने जैसी रणनीतियों का इस्तेमाल किया। उनका नारा "शिक्षित करो, संगठित करो, आंदोलन करो" ने पूरे भारत में अंबेडकरवादी विचार को लोकप्रिय बनाया।

- कानूनी और सामाजिक सक्रियता-इस दौर में 1989 का अत्यंत महत्वपूर्ण कानून—अनुसूचित जाति और जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम लागू हुआ। इसके साथ डिजिटल एक्टिविज़्म, छात्र आंदोलन (जैसे: अम्बेडकर स्टूडेंट्स एसोसिएशन) और न्यायालयों के माध्यम से भेदभाव के खिलाफ संघर्ष भी तेज हुआ।
- मायावती का योगदान- कांशी राम की अनुयायी मायावती कई बार उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री बनीं। उन्होंने दलित आवास, भूमि वितरण, छात्रवृत्ति, आरक्षण और कल्याण के लिए कार्यक्रम लागू किए। सत्ता में उनका उदय दलित राजनीतिक सशक्तिकरण का प्रतीक बन गया। उन्होंने दलितों को गर्व की भावना दी और उन्हें यह महसूस कराया कि राजनीतिक शक्ति वास्तविक बदलाव ला सकती है।

## 4.6 दलित आन्दोलनों की प्रमुख उपलब्धियाँ (Major Achievements of Dalit Movements)

1. संवैधानिक सुरक्षा उपाय (Constitutional Safeguards)
    - अस्पृश्यता का उन्मूलन (अनुच्छेद 17) और शिक्षा, सरकारी नौकरियों तथा विधानमंडलों में आरक्षण नीति (Reservation Policy) का कार्यान्वयन।
2. कानूनी ढाँचे (Legal Frameworks)

- जातिगत भेदभाव और हिंसा को दंडित करने के लिए नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम (1955) और अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम (1989) जैसे कड़े कानूनों का अधिनियमन।

3. राजनीतिक प्रतिनिधित्व (Political Representation)

- दलित-आधारित राजनीतिक दलों (बसपा) और प्रभावशाली पदों पर आसीन रहे नेताओं का सफल उदय, जिसने भारतीय लोकतंत्र की गतिशीलता को महत्वपूर्ण रूप से बदल दिया है।

4. सांस्कृतिक मुखरता (Cultural Assertion)

- दलित साहित्य और कला का विकास, जो विरोध के एक शक्तिशाली माध्यम के रूप में कार्य करता है, पहचान को पुनः प्राप्त करता है और मुख्यधारा की कथाओं को चुनौती देता है।

दलित आंदोलन एक निरंतर जारी संघर्ष है जो भारत में लोकतांत्रिक और सामाजिक न्याय के आदर्शों को फिर से परिभाषित करना जारी रखता है, संवैधानिक वादों और सामाजिक वास्तविकता के बीच की खाई को लगातार चुनौती दे रहा है।

## 4.7 भारत में महिला आंदोलन Women's Movement in India

भारत में महिला आंदोलन (Women's Movement in India) कोई एक संगठित इकाई (monolithic entity) नहीं है, बल्कि यह मानवाधिकारों, सम्मान और समानता के लिए एक गतिशील, विकेन्द्रीकृत और अक्सर खंडित संघर्ष है। दो शताब्दियों से अधिक समय तक फैले इस आंदोलन की शुरुआत पुरुषों के नेतृत्व वाले सामाजिक सुधार प्रयासों के रूप में हुई थी, और यह विकसित होकर अब

एक स्वतंत्र, अंतर्संबंधात्मक (intersectional) और अधिकार-आधारित जन आंदोलन बन गया है। यह गहरी जड़ें जमा चुके पितृसत्तात्मक संरचनाओं को सीधे चुनौती देता है जो जाति, वर्ग और धार्मिक पहचान के साथ मिलकर महिलाओं का उत्पीड़न करती हैं।

भारत में महिला आंदोलनो को विश्लेषण के लिए तीन अलग-अलग, लेकिन एक-दूसरे से जुड़े चरणों में बाँटा जा सकता है:

**प्रथम चरण: सामाजिक सुधार और विधिक आधार (मध्य-19वीं शताब्दी – 1915)**

यह चरण औपनिवेशिक शासन के तहत था। इसकी मुख्य विशेषता यह थी कि सामाजिक सुधारकों, जिनमें मुख्य रूप से हिंदू उच्च जातियों के शिक्षित और प्रभावशाली पुरुष शामिल थे, ने महिलाओं को लक्षित करने वाली सबसे क्रूर और दमनकारी रीति-रिवाजों को खत्म करके भारतीय समाज को "आधुनिक" बनाने की मांग की। इसका मुख्य उद्देश्य महिलाओं की स्वायत्तता से कम और औपनिवेशिक शक्ति के आधुनिकीकरण के आदर्शों के अनुरूप सामाजिक प्रगति हासिल करना अधिक था।

इस चरण में मुख्य ध्यान कल्याण (welfare) और मानवीय (humanitarian) मुद्दों पर था। सुधारकों ने सुधारों के पक्ष में तर्क देने के लिए मानवतावादी तर्कों और प्राचीन हिंदू ग्रंथों की चुनिंदा पुनर्व्याख्या का इस्तेमाल किया। प्रमुख सुधार परिवार की संरचना के भीतर महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर केंद्रित थे।

प्रमुख सुधारक योगदान

- राजा राम मोहन राय (1772–1833)आंदोलन के जनक। उनके प्रयासों से 1829 में सती प्रथा का उन्मूलन (Abolition of Sati - Regulation XVII) हुआ। उन्होंने मानवीय आधार पर और वैदिक ग्रंथों का हवाला देकर इस प्रथा का विरोध किया।
- ईश्वर चंद्र विद्यासागर (1820–1891)विधवाओं के अधिकारों के प्रबल समर्थक। उनके अथक प्रयासों से हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम (Hindu Widow Remarriage Act) 1856 लागू हुआ, जिसने कानूनी रूप से विधवाओं के विवाह को वैध बनाया।
- ज्योतिबा फुले और सावित्रीबाई फुले (19वीं शताब्दी) आंदोलन की जाति-विरोधी धारा का प्रतिनिधित्व करते हैं। सावित्रीबाई को भारत की पहली महिला शिक्षिका माना जाता है। उन्होंने 1848 में पुणे में पहला बालिका विद्यालय खोला, खासकर निचली जातियों की लड़कियों के लिए। उनके कार्य ने महिलाओं के उत्पीड़न को सीधे जाति व्यवस्था से जोड़ा।
- महादेव गोविंद रानाडे (1842–1901) और डी.के. कर्वे बालिका शिक्षा की वकालत करने और सेवा सदन तथा इंडियन वीमेन्स यूनिवर्सिटी (1916) जैसी संस्थाओं की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इस चरण के अंत में, शिक्षित महिलाओं ने पुरुषों के नेतृत्व वाले सुधारों के मात्र लाभार्थी होने से आगे बढ़कर अपनी पहल पर संगठन बनाना शुरू कर दिया।

- पंडिता रमाबाई (1858–1922): उन्होंने शारदा सदन (1889) की स्थापना की, ताकि निराश्रित हिंदू विधवाओं को आश्रय, शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण मिल सके। उनके आलोचनात्मक लेखन ने पुरुष सुधारकों की तुलना में हिंदू पितृसत्ता को अधिक सीधे चुनौती दी।
- ताराबाई शिंदे (1850–1910): उनकी 1882 की रचना, "स्त्री पुरुष तुलना" (A Comparison Between Women and Men), भारत के शुरुआती नारीवादी ग्रंथों में से एक है। इसमें उन्होंने पुरुष पाखंड और पुरुषों और महिलाओं पर लागू होने वाले नैतिकता के विभिन्न मानकों की कड़ी आलोचना की।

प्रथम चरण की उपलब्धियाँ

- व्यक्तिगत और सामाजिक मामलों में राज्य के हस्तक्षेप की मिसाल स्थापित की।
- महिला शिक्षा की नींव रखी, जिससे बाद के चरणों के लिए नेतृत्व तैयार हुआ।
- सबसे क्रूर प्रथाओं (सती, विधवा पुनर्विवाह पर प्रतिबंध, बाल विवाह के विरुद्ध शुरुआती कानून) का कानूनी उन्मूलन सुनिश्चित हुआ।

### 4.7.2 द्वितीय चरण: राष्ट्रवादी संघर्ष और राजनीतिक अधिकार (1915 – 1970 का दशक)

यह चरण महिला आंदोलन और महात्मा गांधी के नेतृत्व वाले राष्ट्रवादी आंदोलन के बीच घनिष्ठ संबंध से चिह्नित है। महिलाएं राष्ट्रीय मुक्ति और अपने राजनीतिक अधिकारों के लिए एक साथ लड़ते हुए दृश्यमान राजनीतिक कार्यकर्ता बन गई।

इस चरण में गांधी का नेतृत्व महत्वपूर्ण था, क्योंकि उन्होंने अहिंसक प्रतिरोध (सत्याग्रह) के माध्यम से बड़े पैमाने पर भागीदारी को प्रोत्साहित किया, जिससे हजारों महिलाएं राजनीतिक क्षेत्र में आई। महिलाओं ने नमक सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा आंदोलन में बड़ी संख्या में भाग लिया, जिससे पर्दा प्रथा और घरेलू confinement (घर तक सीमित रहना) जैसी पारंपरिक बाधाएँ टूटीं।

सरोजिनी नायडू, एनी बेसेंट, और कमला देवी चट्टोपाध्याय जैसी प्रखर और दूरदर्शी महिलाएँ सामूहिक आंदोलनों में सक्रिय रूप से भाग लेकर राष्ट्रीय हस्तियाँ बनकर उभरीं। उनकी भागीदारी ने राष्ट्र की नज़र में महिलाओं की सार्वजनिक भूमिका को वैध बनाया। इस प्रकार, उन्होंने यह स्थापित किया कि महिलाएँ केवल घरेलू दायरे तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे राजनीतिक विचार, नेतृत्व और सामूहिक कार्यवाई में पूरी तरह से सक्षम भागीदार हैं, जिससे भविष्य के महिला आंदोलनों के लिए एक मजबूत नींव रखी गई।

इस चरण की शुरुआत में, महिलाओं ने विशेष रूप से राजनीतिक अधिकारों की माँग के लिए संगठित होना शुरू कर दिया।

- वीमेन्स इंडियन एसोसिएशन (WIA, 1917): एनी बेसेंट, डोरोथी जिनाराजादासा और मार्गरेट कजिन्स द्वारा गठित, WIA ने वोट के अधिकार के लिए सफलतापूर्वक अभियान चलाया।
- ऑल इंडिया वीमेन्स कॉन्फ्रेंस (AIWC, 1927): इस संस्था ने अपना ध्यान महिला शिक्षा से हटाकर कानूनी और राजनीतिक अधिकारों की वकालत पर केंद्रित किया।

पश्चिम में मताधिकार के लिए हिंसक संघर्षों के विपरीत, भारतीय महिलाओं ने भारत के संविधान (1950) के लागू होने के साथ अपेक्षाकृत शांतिपूर्वक सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार का अधिकार प्राप्त किया।

**स्वतंत्रता-पश्चात् विधायी उपलब्धियाँ (1947-1970 का दशक)**

इस चरण की सबसे बड़ी जीत थी समानता और गैर-भेदभाव का संवैधानिक आश्वासन।

- संवैधानिक वादे: भारतीय संविधान निम्नलिखित मौलिक अधिकारों का आश्वासन देता है:
  a. अनुच्छेद 14: कानून के समक्ष समानता।
  b. अनुच्छेद 15: धर्म, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध।
  c. अनुच्छेद 15(3): यह महिलाओं के लिए सकारात्मक भेदभाव (positive discrimination) या विशेष प्रावधानों की भी अनुमति देता है, जो आरक्षण जैसे कार्रवाई के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण है।
- हिंदू कोड बिल (1955-1956): गहन बहस के बाद, प्रधान मंत्री जवाहरलाल नेहरू ने महत्वपूर्ण कानूनों की एक श्रृंखला पारित कराई, जिसने हिंदू महिलाओं की कानूनी स्थिति में सुधार किया:
  a. हिंदू विवाह अधिनियम, 1955: इसने एकविवाह (monogamy) शुरू किया, विभिन्न आधारों पर तलाक की अनुमति दी, और विवाह की न्यूनतम आयु बढ़ाई।
  b. हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956: इसने महिलाओं (बेटियों, विधवाओं) को बेटों के साथ संपत्ति विरासत में पाने का अधिकार दिया।

ये कानून, हालाँकि हिंदुओं तक सीमित थे, परिवार इकाई के भीतर महिलाओं के अधिकारों को सुरक्षित करने में एक बड़ी छलांग थे।

**'समानता की ओर' रिपोर्ट (Towards Equality-1974)**

1970 के दशक की शुरुआत तक, कानूनी आश्वासन के बावजूद, घोर निराशा व्याप्त हो गई थी। भारत में महिलाओं की स्थिति पर समिति (CSWI) ने 1974 में अपनी रिपोर्ट 'समानता की ओर (Towards Equality)' प्रकाशित की। रिपोर्ट ने चौंकाने वाली वास्तविकता उजागर की: गिरता हुआ लिंगानुपात

(female-to-male sex ratio), उच्च महिला मृत्यु दर, बढ़ती आर्थिक हाशिए पर धकेलना, और उच्च महिला निरक्षरता दर। इसने दिखाया कि कानूनी समानता वास्तविक सारभूत समानता (substantive equality) में नहीं बदल पाई है।

इस रिपोर्ट को तीसरे चरण को उत्प्रेरित करने का श्रेय दिया जाता है, जिसने एक नए, युवा, और कट्टरपंथी महिला आंदोलन को बौद्धिक और अनुभवजन्य बल दिया, जिसने राज्य और समाज को सीधे चुनौती देने का निश्चय किया।

### 4.7.3 तृतीय चरण: स्वतंत्र, मुद्दा-आधारित और अंतर्संबंधात्मक नारीवाद (1970 का दशक – वर्तमान)

यह सबसे जीवंत और चुनौतीपूर्ण चरण है, जिसकी विशेषता राजनीतिक दल के जुड़ाव से स्वतंत्र महिला समूहों (Autonomous Women's Groups - AWGs) का उदय है। ध्यान 'कल्याण' से हटकर 'अधिकारों' और 'हिंसा' पर केंद्रित हो गया।

इस चरण की विशेषता सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों में पितृसत्तात्मक हिंसा को सीधी चुनौती देना है। महिलाओं ने अन्याय के विशिष्ट मामलों के इर्द-गिर्द लामबंदी की, व्यक्तिगत त्रासदियों को कानूनी सुधारों के लिए देशव्यापी आंदोलनों में बदल दिया।

- बलात्कार-विरोधी आंदोलन (मथुरा मामला, 1972-1979): एक नाबालिग आदिवासी लड़की 'मथुरा' से बलात्कार के आरोपी दो पुलिसकर्मियों के बरी होने से आक्रोश फैल गया। इस आंदोलन ने 1983 में भारतीय दंड संहिता (IPC) और साक्ष्य अधिनियम में संशोधनों को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिसने हिरासत में बलात्कार के मामलों में सबूत का भार (burden of proof) बदल दिया।
- दहेज-विरोधी आंदोलन (1980 का दशक): दहेज हत्याओं (bride burning) के खिलाफ व्यापक विरोध प्रदर्शन। आंदोलन ने सफलतापूर्वक निम्नलिखित के लिए पैरवी की:
    a. दहेज निषेध (संशोधन) अधिनियम, 1986
    b. IPC में धारा 498A (पति या रिश्तेदारों द्वारा क्रूरता) और धारा 304B (दहेज मृत्यु) का insertion (शामिल किया जाना)।
- घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम (PWDVA), 2005: यह ऐतिहासिक सिविल कानून साझा घर में दुर्व्यवहार (शारीरिक, यौन, मौखिक, भावनात्मक और आर्थिक) के खिलाफ महिलाओं को आश्रय, भरण-पोषण और संरक्षण आदेशों का अधिकार प्रदान करता है।
- कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न अधिनियम, 2013: 2012 में दिल्ली में एक युवा महिला के साथ हुए क्रूर सामूहिक बलात्कार और दशकों बाद विशाखा दिशानिर्देश (1997) के बाद, इस कानून ने सभी कार्यस्थलों के लिए आंतरिक शिकायत समिति (ICC) स्थापित करना अनिवार्य कर दिया।

इस चरण का एक महत्वपूर्ण विकास अंतर्संबंधात्मकता (intersectionality) की पहचान है, यह विचार कि महिलाओं के अनुभव केवल लिंग से नहीं, बल्कि उनकी जाति, वर्ग, धर्म और क्षेत्रीय स्थिति से भी आकार लेते हैं।

- दलित नारीवाद: दलित महिला संगठन जैसे समूह उच्च-जाति, कुलीन नारीवाद को चुनौती देते हैं, यह तर्क देते हुए कि जाति-आधारित हिंसा दलित महिलाओं के लिए उत्पीड़न का प्राथमिक रूप है, जिससे वे तिगुनी हाशिए पर हैं।
- मुस्लिम महिलाओं के अधिकार: मुस्लिम पर्सनल लॉ के भीतर सुधार के लिए आंदोलन, जैसे कि तीन तलाक (Triple Talaq) (तत्काल, एकतरफा तलाक) के खिलाफ अभियान।

सुप्रीम कोर्ट ने 2017 में इस प्रथा को असंवैधानिक घोषित किया, जिसके बाद 2019 में संसदीय कानून बना।

कानूनी सुधार से परे, आंदोलन ने आर्थिक एजेंसी और ज़मीनी राजनीतिक शक्ति पर ध्यान केंद्रित किया है।

- स्व-नियोजित महिला संघ (SEWA): इला भट्ट द्वारा 1972 में स्थापित, SEWA एक प्रमुख ट्रेड यूनियन है जो अनौपचारिक क्षेत्र (विक्रेता, घर-आधारित श्रमिक) की महिलाओं को संगठित करता है।
- पंचायत आरक्षण: 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन अधिनियमों (1992) ने स्थानीय स्वशासन निकायों (पंचायतों और नगर पालिकाओं) में महिलाओं के लिए 33% आरक्षण अनिवार्य कर दिया। इससे एक मिलियन से अधिक महिलाएं ज़मीनी राजनीतिक नेतृत्व में आई हैं।

## 4.8 वर्तमान चुनौतियाँ और भविष्य की दिशा

महत्वपूर्ण जीत के बावजूद, भारतीय महिला आंदोलन को गंभीर और लगातार चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

- कानूनी समानता (de jure) और वास्तविक समानता (de facto) के बीच का अंतर बहुत बड़ा बना हुआ है।
- गिरती महिला श्रम बल भागीदारी (FLFP): भारत की FLFP वैश्विक स्तर पर सबसे कम में से एक है, जो गंभीर आर्थिक बहिष्कार और संरचनात्मक बाधाओं को इंगित करता है।
- जन्म के समय लिंगानुपात: प्रयासों के बावजूद, बिगड़ा हुआ लिंगानुपात (प्रति 1,000 लड़कों पर कम लड़कियाँ पैदा होना) गहरे बैठे पुत्र मोह और लिंग-आधारित भेदभाव की निरंतरता को दर्शाता है।

- राजनीतिक कम प्रतिनिधित्व: संसद और राज्य विधानमंडलों के लिए महिला आरक्षण विधेयक (33% आरक्षण का प्रस्ताव) को दशकों तक पारित करने में विफलता राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी को दर्शाती है। (विधेयक अंततः 2023 में पारित हुआ, हालाँकि इसका कार्यान्वयन भविष्य की जनगणना और परिसीमन (delimitation) अभ्यासों पर निर्भर है।)
- वर्ग/जाति विभाजन- शहरी, अंग्रेजी बोलने वाली, उच्च-जाति की नारीवादी आवाज़ों का प्रभुत्व कभी-कभी ग्रामीण, गरीब, दलित और आदिवासी महिलाओं की अनूठी चिंताओं को संबोधित करने में विफलता का कारण बनता है।
- डिजिटल युग- नई चुनौती डिजिटल स्पेस में **रास्ता बनाने और उसे संभालने** की है। जहाँ डिजिटल उपकरण जागरूकता और लोगों को एक साथ लाने के के नए रास्ते खोलते हैं, वहीं वे हिंसा के नए रूपों के लिए भी मंच तैयार करते हैं- जैसे साइबरबुलिंग, ऑनलाइन उत्पीड़न, और निजी अंतरंग तस्वीरों को बिना सहमति के साझा करना।

भारत में महिलाओं का आंदोलन आज कई महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना कर रहा है और साथही नए - अवसर भी उभर रहे हैं। एक ओर महिलाएँ अभी भी लैंगिक हिंसा, शिक्षा और रोज़गार में असमानता, तथा गहराई से जमी पितृसत्तात्मक सोच से जूझ रही हैं। डिजिटल स्पेस ने जहाँ जागरूकता बढ़ाने के लिए नए साधन दिए हैं, वहीं ऑनलाइन उत्पीड़न और साइबर हिंसा जैसी समस्याएँ भी बढ़ी हैं। भविष्य की दिशा इस बात पर निर्भर करेगी कि आंदोलन किस तरह अधिक समावेशी बने, विभिन्न सामाजिक पृष्ठभूमियों की महिलाओं की आवाज़ को जगह दे, और तकनीक का सुरक्षित व जिम्मेदार तरीक़े से उपयोग करे। अगर सामूहिक प्रयास और एकजुटता बनी रहे, तो महिलाओं का आंदोलन समाज में गहरी और स्थायी समानता की ओर आगे बढ़ सकता है।

## 4.9 सारांश

दलित आंदोलन ने जाति पदानुक्रम को चुनौती देकर और न्याय की मांग करके भारत में एक बड़ा सामाजिक परिवर्तन लाया है। इसने समानता, गरिमा और स्वतंत्रता के मूल्यों को प्रोत्साहित किया। विरोध प्रदर्शनों, साहित्य, राजनीतिक लामबंदी और अंबेडकर जैसे हस्तियों के नेतृत्व के माध्यम से, दलित मुख्यधारा की राजनीति और प्रशासनिक पदों में शामिल हुए। आरक्षण नीतियां, दलित साहित्य, बौद्ध धर्म में धर्मांतरण, दलित पैंथर्स और बसपा की राजनीति ने दलितों को सशक्त बनाने में योगदान दिया है। कुल मिलाकर, दलित आंदोलन एक मजबूत शक्ति बन गया जिसने भारत में दलितों के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों को बदल दिया।भारत में महिला आंदोलन मानवाधिकारों के लिए स्थायी संघर्ष का एक प्रमाण है। इसकी शुरुआत धार्मिक रूढ़िवादिता और सामाजिक प्रथाओं को चुनौती देने से हुई, इसने राष्ट्रवादी आंदोलन के माध्यम से वैधता प्राप्त की, और कानूनी, राजनीतिक और सामाजिक कार्रवाई के माध्यम से सभी महिलाओं के लिए सारभूत अधिकार सुरक्षित करने के लिए एक शक्तिशाली, विकेन्द्रीकृत शक्ति के रूप में विकसित हुआ।

दलित और महिला आंदोलन भारत की मानवाधिकार यात्रा के केंद्र में रहे हैं। उन्होंने समानता और न्याय की माँग के माध्यम से लोकतंत्र को गहराई दी।कानूनी और राजनीतिक स्तर पर प्रगति के बावजूद, सामाजिक जीवन में भेदभाव, हिंसा और असमानता बनी हुई है।

भविष्य की दिशा तभी सार्थक होगी जब समाज अंतरविभाजक दृष्टिकोण (Intersectional Approach) अपनाए और सभी वंचित वर्गों के अधिकारों को समान महत्व दे। केवल तभी भारतीय संविधान में निहित गरिमा, समानता और न्याय के आदर्शों को पूरी तरह साकार किया जा सकेगा।

## 4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची


1. डॉ. बी.आर. अंबेडकर – जाति का उन्मूलन (Annihilation of Caste)
2. गेल ऑमवेट – दलित्स एंड द डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन
3. शर्मिला रेगे – राइटिंग कास्ट, राइटिंग जेंडर
4. मैरी ई. जॉन (संपा.) – विमेन्स स्टडीज इन इंडिया: ए रीडर
5. कल्पना कनबिरन (संपा.) – द वायलेंस ऑफ नॉर्मल टाइम्स
6. IGNOU पाठ्यक्रम MWG-101, ब्लॉक 3


## 4.11निबंधात्मक प्रश्न

1. मानवाधिकारों की परिभाषा कीजिए और भारतीय संदर्भ में उनकी महत्ता को समझाइए।
2. भारतीय संविधान दलितों और महिलाओं के अधिकारों की रक्षा में क्या भूमिका निभाता है—इसपर चर्चा कीजिए।
3. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के दलित मुक्ति और मानवाधिकारों में योगदान की व्याख्या कीजिए।
4. दलित और महिला आंदोलन सम्मान, समानता और लोकतंत्र के लिए संघर्ष हैं।” उपयुक्त उदाहरणों सहित चर्चा कीजिए।

# इकाई 5 - भारत में सांप्रदायिक हिंसा और लैंगिक भेदभाव के मुद्दे (Issues of Communal Violence and Gender Discrimination in India)

**5.1 प्रस्तावना**

**5.2 उद्देश्य**

**5.3 भारत में सांप्रदायिक हिंसा**

**4.3.1 भारत में सांप्रदायिक हिंसा के कारण**

**5.4 भारत में लैंगिक भेदभाव**

**4.4.1 भारत में लैंगिक भेदभाव के कारण**

**5.5 सारांश**

**5.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**

**5.7 निबंधात्मक प्रश्न**

## 5.1 प्रस्तावना

भारत, जो अपनी विशाल सांस्कृतिक, भाषाई और धार्मिक विविधता के लिए जाना जाता है, आज भी दो गहरी और लगातार बनी रहने वाली सामाजिक समस्याओं से जूझ रहा है-**सांप्रदायिक हिंसा** और **लैंगिक भेदभाव।** ये समस्याएँ न केवल संविधान में निहित धर्मनिरपेक्षता, समानता और न्याय के मूल्यों को कमजोर करती हैं, बल्कि देश के सामाजिक-आर्थिक विकास और अंतरराष्ट्रीय छवि को भी प्रभावित करती हैं।

यह इकाई इन दोनों मुद्दों का आलोचनात्मक और विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करती है। इकाई का पहला भाग **सांप्रदायिक हिंसा** पर केंद्रित है, जिसमें इसके ऐतिहासिक उद्भव, वर्तमान स्वरूप, और इसके कारणों का अध्ययन किया गया है। इनमें राजनीतिक स्वार्थ, सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ और

सांस्कृतिक तनाव शामिल हैं। साथ ही, सांप्रदायिक हिंसा को बढ़ाने या नियंत्रित करने में राज्य और मीडिया की भूमिका की भी समीक्षा की गई है। स्वतंत्रता के बाद हुई प्रमुख सांप्रदायिक घटनाओं के अध्ययन के माध्यम से धार्मिक सामूहिक संघर्ष की बदलती प्रकृति को समझने का प्रयास किया गया है।

इकाई का दूसरा भाग **लैंगिक भेदभाव** पर केंद्रित है, जो भारतीय समाज की पितृसत्तात्मक संरचना में गहराई से निहित है। इस भाग में जनसांख्यिकीय (विकृत लिंग अनुपात), स्वास्थ्य (मातृ स्वास्थ्य और पोषण की कमी), आर्थिक (महिलाओं की कम श्रम भागीदारी और वेतन असमानता) तथा राजनीतिक (अपर्याप्त प्रतिनिधित्व) क्षेत्रों में व्याप्त असमानताओं का विश्लेषण किया गया है। इसके अतिरिक्त, **लैंगिक-आधारित हिंसा** के विभिन्न रूपों और उनसे निपटने हेतु बनाए गए कानूनी तथा नीतिगत उपायों की प्रभावशीलता पर भी विशेष ध्यान दिया गया है।

अंत में, यह इकाई **अंत:संबंधिता (Intersectionality)** की अवधारणा को स्पष्ट करती है, जिसके अंतर्गत यह दिखाया गया है कि सांप्रदायिक संघर्षों के दौरान महिलाएँ और हाशिए पर स्थित लैंगिक समूह विशेष रूप से निशाना बनते हैं। इससे हिंसा और बहिष्कार की लैंगिक प्रकृति उजागर होती है। सामाजिक-राजनीतिक दृष्टिकोण से इन गंभीर मुद्दों का विश्लेषण करते हुए, यह इकाई भारतीय गणराज्य के समक्ष मौजूद चुनौतियों और एक अधिक न्यायसंगत समाज की दिशा में आगे बढ़ने के मार्ग को समझने का प्रयास करती है।

## 5.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

1. भारत में सांप्रदायिक हिंसा के बहुआयामी कारणों को समझ पाएंगे।
2. भारत में लैंगिक हिंसा के विषय में चर्चा कर पाएंगे।
3. सांप्रदायिक हिंसा भड़काने वाले कारकों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कर पाएंगे।
4. भारतीय संविधान में सांप्रदायिक सद्भाव बनाए रखने के प्रावधानों को सूचीबद्ध कर पाएंगे।
5. लैंगिक भेदभाव के मूल कारणों का परीक्षण कर पाएंगे।
6. महिलाओं के समक्ष आने वाली चुनौतियों का वर्णन कर पाएंगे।

## 5.3 भारत में सांप्रदायिक हिंसा

भारत में सांप्रदायिक हिंसा एक अत्यंत गंभीर चुनौती है जो देश के धर्मनिरपेक्ष ढांचे और आंतरिक सुरक्षा को प्रभावित करती है। 'सांप्रदायिकता' को एक ऐसी विचारधारा के रूप में परिभाषित किया जाता है जो दूसरे समूहों की कीमत पर अपने धार्मिक समूह के हितों को बढ़ावा देने के लिए धार्मिक पहचान का राजनीतिकरण करती है।

### 5.3.1 भारत में सांप्रदायिक हिंसा के कारण

भारत में सांप्रदायिक हिंसा केवल एक कारण से नहीं होती, बल्कि इसके पीछे कई ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक कारण होते हैं।

1. **ऐतिहासिक विरासत-**भारत में सांप्रदायिक तनाव की जड़ें ब्रिटिश शासन काल में मिलती हैं। अंग्रेजों ने "फूट डालो और राज करो" की नीति अपनाई, जिससे धर्म के आधार पर लोगों में दूरी बढ़ी। 1947 का विभाजन सबसे बड़ा उदाहरण है, जिसमें बड़े पैमाने पर हिंसा, जान-माल की हानि और विस्थापन हुआ। इन घटनाओं की यादें पीढ़ी दर पीढ़ी चली आती हैं और आज भी समुदायों के बीच अविश्वास पैदा करती हैं।
2. **राजनीतिक स्वार्थ और राजनीति का दुरुपयोग-** कई बार राजनीतिक दल और नेता धर्म का उपयोग वोट बैंक बनाने के लिए करते हैं। चुनाव के समय धार्मिक भावनाओं को भड़काया जाता है और समाज को बाँटा जाता है। इससे असली मुद्दों जैसे बेरोज़गारी, महँगाई और विकास से ध्यान हट जाता है और समाज में नफ़रत और तनाव बढ़ता है।
3. **सामाजिक और आर्थिक असमानताएँ-** गरीबी, बेरोज़गारी, अशिक्षा और संसाधनों की कमी लोगों में असंतोष पैदा करती है। ऐसे हालात में लोगों को यह विश्वास दिलाया जाता है कि उनकी समस्याओं के लिए कोई दूसरा समुदाय ज़िम्मेदार है। इससे आपसी तनाव बढ़ता है और हिंसा की संभावना बनती है।
4. **धार्मिक कट्टरता और अतिवाद-**धार्मिक कट्टरता तब होती है जब धर्म की संकीर्ण और कठोर व्याख्या की जाती है। कुछ समूह यह प्रचार करते हैं कि उनका धर्म खतरे में है। धर्म का यह गलत उपयोग सहिष्णुता और भाईचारे को खत्म करता है और दूसरों के प्रति नफ़रत को बढ़ावा देता है।
5. **अफ़वाहें और गलत जानकारी-**कई बार सांप्रदायिक हिंसा की शुरुआत अफवाहों और झूठी खबरों से होती है। सोशल मीडिया के ज़रिये गलत जानकारी बहुत तेज़ी से फैलती है। छोटी-सी घटना को बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया जाता है, जिससे डर और गुस्सा फैलता है और हिंसा भड़क उठती है।
6. **प्रशासन और कानून व्यवस्था की विफलता-** यदि पुलिस और प्रशासन समय पर कार्रवाई नहीं करते या पक्षपात करते हैं, तो हिंसा फैल जाती है।जब दोषियों को सज़ा नहीं मिलती, तो लोगों में यह भावना बनती है कि हिंसा करने से कोई नुकसान नहीं होगा, जिससे भविष्य में ऐसी घटनाएँ दोहराई जाती हैं।
7. **पहचान का संकट और असुरक्षा-** तेज़ सामाजिक बदलाव, शहरीकरण और वैश्वीकरण के कारण कई लोग असुरक्षित महसूस करते हैं।ऐसे में लोग अपनी धार्मिक पहचान से ज़्यादा जुड़ जाते हैं, जिससे "हम" और "वे" जैसी सोच पैदा होती है और समाज में दूरी बढ़ती है।
8. **मीडिया की सनसनीखेज़ भूमिका-** कुछ मीडिया संस्थान जिम्मेदारी से रिपोर्टिंग करने के बजाय सनसनी फैलाने वाली खबरें दिखाते हैं। इससे डर, नफ़रत और गलत धारणाएँ फैलती हैं, जो सांप्रदायिक तनाव को और बढ़ा देती हैं।

भारत में सांप्रदायिक हिंसा का कारण धर्म नहीं, बल्कि धर्म का गलत इस्तेमाल, सामाजिक असमानता, राजनीतिक स्वार्थ और कमजोर प्रशासन है। समाधान के लिए ज़रूरी है कि धर्मनिरपेक्ष मूल्यों, शिक्षा, सामाजिक न्याय, जिम्मेदार मीडिया और मज़बूत कानून व्यवस्था को बढ़ावा दिया जाए, ताकि समाज में शांति और सौहार्द बना रहे।

नीचे भारत में सांप्रदायिक हिंसा का एक विस्तृत विश्लेषण दिया गया है:

**1. सांप्रदायिकता की ऐतिहासिक नींव**

भारत में सांप्रदायिक हिंसा के जड़ें केवल धार्मिक नहीं हैं, बल्कि औपनिवेशिक इतिहास और राजनीतिक पहचान के विकास से जुड़ी हैं।

- **अंग्रेजों की "फूट डालो और राज करो" नीति:** ब्रिटिश प्रशासकों ने अक्सर जनगणना और मानचित्रों में भारतीय जनसंख्या को धर्म के आधार पर वर्गीकृत किया, जिससे उन समूहों के बीच कठोर सीमाएं बन गई जो पहले अधिक घुलमिल कर रहते थे।
- **द्वि-राष्ट्र सिद्धांत (Two-Nation Theory):** 19वीं सदी के अंत और 20वीं सदी की शुरुआत में यह विश्वास बढ़ा कि हिंदू और मुस्लिम दो अलग-अलग राष्ट्र हैं जिनके हित आपस में मेल नहीं खा सकते, जिसके परिणामस्वरूप **1947 का विभाजन** हुआ।
- **विभाजन की त्रासदी:** स्वतंत्र भारत का जन्म इतिहास के सबसे बड़े सामूहिक पलायन के साथ हुआ, जिसके दौरान अनुमानित **10 लाख लोग** मारे गए। इस आघात ने अविश्वास के बीज बोए जो आजादी के बाद भी बने रहे।

**2. स्वतंत्र भारत के प्रमुख सांप्रदायिक दंगे**

जहाँ विभाजन के बाद का पहला दशक अपेक्षाकृत शांत रहा, वहीं बाद के दशकों में कई तीव्र दंगे देखे गए।

**20वीं सदी की महत्वपूर्ण घटनाएं**

- **1961 जबलपुर दंगे:** आजादी के बाद का पहला बड़ा दंगा, जो हिंदू और मुस्लिम उद्यमियों के बीच आर्थिक प्रतिस्पर्धा के कारण भड़का था।
- **1969 अहमदाबाद दंगे:** विभाजन के बाद की सबसे घातक घटनाओं में से एक, जिसमें 600 से अधिक मौतें हुईं।
- **1984 के सिख विरोधी दंगे:** प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या के बाद दिल्ली और भारत के अन्य हिस्सों में हजारों सिखों का कत्लेआम किया गया।

- **1989 भागलपुर दंगे:** राम जन्मभूमि आंदोलन के दौरान उपजे तनाव में बिहार में 1,000 से अधिक लोग मारे गए थे।
- **1992-1993 बॉम्बे दंगे: बाबरी मस्जिद** के विध्वंस के बाद भड़के इन दंगों में लगभग 900 लोगों की जान गई।

**21वीं सदी की प्रमुख घटनाएं**

- **2002 गुजरात दंगे:** गोधरा में साबरमती एक्सप्रेस के जलाए जाने के बाद हुई हिंसा में 1,000 से अधिक लोग मारे गए और 1.5 लाख लोग विस्थापित हुए।
- **2013 मुजफ्फरनगर दंगे:** उत्तर प्रदेश में जाटों और मुसलमानों के बीच झड़पों में 62 मौतें हुईं और बड़े पैमाने पर पलायन हुआ।
- **2020 दिल्ली दंगे:** नागरिकता संशोधन अधिनियम (CAA) के विरोध प्रदर्शनों के दौरान राजधानी में हुई हिंसा में 53 लोगों की जान गई।

**3. हिंसा के बहुआयामी कारण**

सांप्रदायिक हिंसा शायद ही कभी स्वतःस्फूर्त होती है; यह अक्सर दीर्घकालिक सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक घर्षण का परिणाम होती है।

| श्रेणी | प्राथमिक कारक |
|---|---|
| राजनीतिक | चुनावी लाभ के लिए सांप्रदायिक ध्रुवीकरण का उपयोग ("वोट बैंक की राजनीति"); दोषियों के लिए जवाबदेही की कमी। |
| सामाजिक | गहरी जड़ें जमा चुके पूर्वाग्रह, समुदायों के बीच संवाद की कमी और चरमपंथी संगठनों का प्रभाव। |
| आर्थिक | दुर्लभ संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा; किसी विशिष्ट समुदाय की आर्थिक सफलता के प्रति ईर्ष्या (उदा. मुरादाबाद 1980)। |
| तकनीकी | व्हाट्सएप और फेसबुक जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर गलत सूचना और नफरत फैलाने वाले भाषण (Hate Speech) का तेजी से प्रसार। |

**गलत सूचना पर ध्यान दें:** आधुनिक सांप्रदायिक हिंसा तेजी से "डिजिटल" होती जा रही है। प्लेटफॉर्म डॉक्टर किए गए वीडियो या भड़काऊ अफवाहों को तुरंत फैलाने की अनुमति देते हैं, जो कुछ ही घंटों में भीड़ को उत्तेजित कर सकते हैं।

## 4. कानूनी और संवैधानिक ढांचा

भारतीय संविधान और विभिन्न कानून सांप्रदायिक हिंसा को रोकने और दंडित करने के लिए एक ढांचा प्रदान करते हैं।

### संवैधानिक सुरक्षा

- **अनुच्छेद 14 और 15:** कानून के समक्ष समानता सुनिश्चित करते हैं और धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव को रोकते हैं।
- **अनुच्छेद 25-28:** धर्म की स्वतंत्रता के अधिकार की गारंटी देते हैं।
- **अनुच्छेद 355:** केंद्र सरकार को "आंतरिक अशांति" से राज्यों की रक्षा करने का निर्देश देता है।

### वैधानिक कानून

- **IPC की धारा 153A:** धर्म के आधार पर विभिन्न समूहों के बीच शत्रुता को बढ़ावा देने को अपराध मानती है।
- **IPC की धारा 295A:** धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने के इरादे से किए गए जानबूझकर और दुर्भावनापूर्ण कृत्यों को दंडित करती है।
- **CRPC की धारा 144:** मजिस्ट्रेटों को संभावित हिंसा को रोकने के लिए सभाओं को प्रतिबंधित करने का अधिकार देती है।

## 5. राष्ट्रीय ताने-बाने पर प्रभाव

सांप्रदायिक हिंसा के परिणाम जान-माल के तत्काल नुकसान से कहीं आगे तक जाते हैं।

- **घेटोइजेशन (Ghettoization):** डर अक्सर समुदायों को अलग-थलग पड़ोस (segregated neighborhoods) में रहने के लिए मजबूर करता है, जिससे समुदायों के बीच बातचीत कम हो जाती है और "हम बनाम वे" की खाई गहरी हो जाती है।
- **आर्थिक गिरावट:** हिंसा संपत्ति और व्यवसायों को नष्ट कर देती है, और बार-बार होने वाली अस्थिरता संवेदनशील क्षेत्रों में निवेश को रोकती है।
- **मनोवैज्ञानिक आघात:** पीढ़ियां हिंसा को देख कर बड़ी होती हैं, जिससे कट्टरपंथ या पुरानी मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं।

**6. सद्भाव की ओर मार्ग**

सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिए केवल पुलिस कार्रवाई के बजाय शांति निर्माण के सक्रिय प्रयासों की आवश्यकता है।

- **पुलिस सुधार:** एक तटस्थ और संवेदनशील पुलिस बल सुनिश्चित करना जो दंगे के "स्वर्ण घंटे" (Golden Hour) के दौरान बिना किसी राजनीतिक हस्तक्षेप के कार्य करे।
- **शिक्षा:** युवाओं को गलत सूचनाओं के खिलाफ जागरूक करने के लिए स्कूल के पाठ्यक्रम में बहुलवाद और आलोचनात्मक सोच को शामिल करना।
- **सामुदायिक शांति समितियां:** स्थानीय समूहों (जैसे मोहल्ला समितियों) को औपचारिक रूप देना जो विवादों को बढ़ने से पहले सुलझाने के लिए विभिन्न धर्मों के नेताओं को एक साथ लाते हैं।

## 5.4 भारत में लैंगिक भेदभाव Gender Discrimination in India

भारत में लैंगिक भेदभाव कोई एकल घटना नहीं है, बल्कि एक व्यवस्थागत समस्या है जो देश के सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक ढांचे में गहराई से रची-बसी है। एक वैश्विक आर्थिक शक्ति के रूप में भारत के उदय और एक प्रगतिशील संवैधानिक ढांचे के बावजूद, 'पुत्र-वरीयता' और पितृसत्तात्मक मानदंड आज भी करोड़ों लोगों के जीवन की दिशा तय करते हैं। यह अध्याय भेदभाव के बहुआयामी स्वरूप की पड़ताल करता है, जो जन्म से पहले ही शुरू होकर वृद्धावस्था तक बना रहता है।

### 5.4.1 भारत में लैंगिक भेदभाव के कारण Reasons of Gender Discrimination in India

भारत में लैंगिक भेदभाव के पीछे ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और कानूनी कारण जुड़े हुए हैं। ये कारण एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं और मिलकर महिलाओं की स्थिति को कमजोर बनाते हैं।

**1. ऐतिहासिक और सामाजिक-सांस्कृतिक आधार**

आधुनिक भेदभाव को समझने के लिए उन पारंपरिक ढांचों की जांच करना आवश्यक है जो पुरुष वंश को प्राथमिकता देते हैं।

- **पितृसत्ता और पितृस्थानिकता:** पारंपरिक भारतीय परिवार संरचना अक्सर पितृसत्तात्मक (पुरुष-प्रधान) होती है। **पितृस्थानिकता** की प्रथा—जहाँ एक महिला शादी के बाद अपने ससुराल चली

जाती है—बेटियों को "पराया धन" या एक "दायित्व" के रूप में देखने की धारणा को पुख्ता करती है।

- **दहेज प्रथा:** हालांकि दहेज निषेध अधिनियम 1961 के तहत यह अवैध है, फिर भी यह प्रथा व्यापक रूप से प्रचलित है। यह बेटियों वाले परिवारों पर भारी वित्तीय बोझ डालती है, जिससे बेटों के प्रति झुकाव और बढ़ जाता है क्योंकि उन्हें संपत्ति लाने वाले "संपत्ति" (assets) के रूप में देखा जाता है।
- **धार्मिक और अनुष्ठानिक भूमिकाएँ:** कई हिंदू परंपराओं में, अंतिम संस्कार जैसे महत्वपूर्ण अनुष्ठान पारंपरिक रूप से बेटों द्वारा ही किए जाते हैं। यह आध्यात्मिक "अनिवार्यता" परिवारों को तब तक बच्चे पैदा करने के लिए प्रेरित करती है जब तक कि बेटा पैदा न हो जाए।

**2. जनसांख्यिकीय असमानता: जन्म और अस्तित्व का संकट**

लैंगिक भेदभाव का सबसे स्पष्ट और भयावह रूप बिगड़ा हुआ लिंगानुपात है।

- **कन्या भ्रूण हत्या और शिशु हत्या:** आधुनिक तकनीक (अल्ट्रासाउंड) का दुरुपयोग लिंग-चयनात्मक गर्भपात के लिए किया गया है। यद्यपि **PCPNDT अधिनियम (1994)** इसे रोकता है, लेकिन जनगणना के आंकड़ों में "लापता महिलाओं" की संख्या एक गंभीर संकट की ओर इशारा करती है।
- **बाल लिंगानुपात (CSR):** भारत के कई राज्यों में 0-6 वर्ष की आयु के बाल लिंगानुपात में चिंताजनक गिरावट देखी गई है। यह जनसांख्यिकीय असंतुलन भविष्य में "वधू तस्करी" (bride trafficking) जैसी सामाजिक समस्याओं को जन्म देता है।

**3. शिक्षा का अंतराल: सशक्तिकरण की बाधाएं**

शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का प्राथमिक साधन है, फिर भी भारत में इसमें लैंगिक पक्षपात स्पष्ट दिखता है।

- **"दोहरा बोझ":** लड़कियों को अक्सर घरेलू कामों में मदद करने या छोटे भाई-बहनों की देखभाल करने के लिए स्कूल से निकाल लिया जाता है।
- **बुनियादी ढांचा और स्वच्छता:** ग्रामीण स्कूलों में निजी शौचालयों और मासिक धर्म स्वच्छता प्रबंधन की कमी किशोरियों के स्कूल छोड़ने का एक प्रमुख कारण है।
- **डिजिटल विभाजन:** जैसे-जैसे शिक्षा ऑनलाइन हो रही है, स्मार्टफोन और इंटरनेट तक पहुंच में लैंगिक अंतर ने असमानता की एक नई परत पैदा कर दी है।

**4. आर्थिक भेदभाव: वेतन और भागीदारी की चुनौती**

एक उभरती अर्थव्यवस्था होने के बावजूद, भारत में **महिला श्रम बल भागीदारी दर (LFPR)** दुनिया में सबसे कम स्तरों में से एक है।

- **वेतन अंतराल (Wage Gap):** भारत में महिलाओं को अक्सर उसी काम के लिए पुरुषों की तुलना में कम वेतन दिया जाता है, विशेष रूप से असंगठित क्षेत्र जैसे कृषि और निर्माण में।
- **अवैतनिक देखभाल कार्य:** भारतीय महिलाएं पुरुषों की तुलना में घरेलू कार्यों और देखभाल में काफी अधिक समय बिताती हैं। यह "समय की गरीबी" उन्हें पूर्णकालिक रोजगार या नेतृत्व की भूमिका निभाने से रोकती है।
- **व्यावसायिक अलगाव:** महिलाओं को अक्सर शिक्षण, नर्सिंग और लिपिकीय भूमिकाओं तक सीमित कर दिया जाता है, जबकि विज्ञान (STEM) और कार्यकारी नेतृत्व में उनकी उपस्थिति कम है।

**5. स्वास्थ्य और पोषण**

भेदभाव अक्सर घर की थाली से शुरू होता है।

- **पोषण में भेदभाव:** कई गरीब परिवारों में पुरुषों को पहले भोजन परोसा जाता है और उन्हें अधिक पौष्टिक भोजन दिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप महिलाओं और लड़कियों में एनीमिया (रक्त की कमी) और कुपोषण की दर अधिक होती है।
- **प्रजनन स्वास्थ्य:** महिलाओं के पास अपने स्वयं के प्रजनन विकल्पों पर अक्सर स्वायत्तता नहीं होती है। उन पर पुरुष वारिस पैदा करने का दबाव बनाया जाता है, जिससे बार-बार गर्भधारण उनके स्वास्थ्य को खतरे में डालता है।

**6. कानूनी और राजनीतिक परिदृश्य**

यद्यपि भारतीय संविधान **अनुच्छेद 14, 15 और 21** के तहत समानता की गारंटी देता है, लेकिन कार्यान्वयन अभी भी एक चुनौती है।

- **राजनीतिक प्रतिनिधित्व:** पंचायतों में 33% (अब 50% की ओर अग्रसर) आरक्षण के बावजूद, संसद में महिलाओं की भागीदारी ऐतिहासिक रूप से कम रही है। हाल ही में पारित **नारी शक्ति वंदन अधिनियम** इस दिशा में एक ऐतिहासिक कदम है।
- **संपत्ति के अधिकार: हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम (2005)** के संशोधन के बाद भी, सामाजिक दबाव के कारण महिलाएं अक्सर अपनी पैतृक संपत्ति का अधिकार अपने भाइयों के पक्ष में छोड़ देती हैं।

**7. महिलाओं के खिलाफ हिंसा: एक अदृश्य महामारी**

लैंगिक हिंसा भेदभाव का परिणाम भी है और उसे बनाए रखने का एक साधन भी।

- **घरेलू हिंसा:** यह भारत में महिलाओं के खिलाफ सबसे अधिक रिपोर्ट किया जाने वाला अपराध है, जिसे अक्सर "पारिवारिक मामला" कहकर सामान्य मान लिया जाता है।
- **सार्वजनिक सुरक्षा:** यौन हिंसा और उत्पीड़न का डर महिलाओं की गतिशीलता को सीमित करता है, जिससे उनकी शिक्षा और देर तक काम करने की क्षमता प्रभावित होती है।

भारत में लैंगिक भेदभाव एक जटिल और निरंतर विकसित होने वाली चुनौती है। जहाँ शहरी केंद्रों में स्वतंत्र और करियर-उन्मुख महिलाओं की संख्या बढ़ रही है, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में पुरानी रूढ़ियाँ अभी भी मौजूद हैं। भारत की $5 ट्रिलियन अर्थव्यवस्था बनने की राह सीधे तौर पर महिलाओं के सशक्तिकरण से जुड़ी है। भारत एक पंख से उड़ान नहीं भर सकता; उसे यह सुनिश्चित करना होगा कि उसकी आधी आबादी को भी पूरा आसमान मिले।

## 5.5 सारांश

सांप्रदायिक हिंसा तब होती है जब दो धार्मिक समुदायों के बीच संघर्ष होता है। इसकी जड़ें ब्रिटिश शासन की "फूट डालो और राज करो" नीति और 1947 के विभाजन की त्रासदी में छिपी हैं, जिसने समुदायों के बीच अविश्वास पैदा किया । भारत के इतिहास में कई बड़े दंगे हुए हैं जिन्होंने देश को झकझोर दिया।

हिंसा के मुख्य कारण राजनीति: वोटों के ध्रुवीकरण के लिए धर्म का इस्तेमाल। आर्थिक: संसाधनों और नौकरियों के लिए समुदायों के बीच प्रतिस्पर्धा। सोशल मीडिया: व्हाट्सएप और फेसबुक पर फैली झूठी अफवाहें जो आग में घी का काम करती हैं। भारतीय संविधान (अनुच्छेद 14, 15, 25) सभी को समानता और धार्मिक स्वतंत्रता देता है। इसके अलावा, IPC की धारा 153A और 295A नफरत फैलाने वालों के खिलाफ कार्रवाई के लिए बनाई गई हैं।

भारत में लैंगिक भेदभाव के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण करने के बाद यह स्पष्ट होता है कि यह समस्या केवल महिलाओं की नहीं, बल्कि पूरे समाज की है। जब तक देश की आधी आबादी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक बेड़ियों में जकड़ी रहेगी, तब तक भारत अपनी पूर्ण क्षमता का दोहन नहीं कर पाएगा। कानून और नीतियां केवल ढांचा प्रदान करती हैं, लेकिन वास्तविक बदलाव तब आएगा जब पितृसत्तात्मक सोच और "पुत्र-वरीयता" जैसे सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों को जड़ से खत्म किया जाएगा। महिलाओं की श्रम बल में भागीदारी केवल समानता का मुद्दा नहीं है, बल्कि यह भारत की जीडीपी में अरबों डॉलर जोड़ने का एक आर्थिक अवसर भी है। वित्तीय स्वतंत्रता महिलाओं को निर्णय लेने की शक्ति प्रदान करती है। लड़कियों की शिक्षा में निवेश और उनके पोषण व स्वास्थ्य पर ध्यान देना एक ऐसी पीढ़ी तैयार करने के लिए अनिवार्य है जो अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो। लैंगिक समानता के

संघर्ष में पुरुषों को एक 'सहयोगी' (Ally) के रूप में देखना आवश्यक है। जब तक घर और समाज के पुरुष समानता के मूल्य को नहीं अपनाएंगे, तब तक संरचनात्मक बदलाव कठिन होगा।

21वीं सदी का भारत एक चौराहे पर खड़ा है। एक तरफ हमारे पास अंतरिक्ष में जाने वाली और बहुराष्ट्रीय कंपनियों का नेतृत्व करने वाली महिलाएं हैं, और दूसरी तरफ वे लड़कियां हैं जिन्हें आज भी बुनियादी शिक्षा के लिए संघर्ष करना पड़ता है। 'नारी शक्ति' केवल एक नारा नहीं, बल्कि विकसित भारत का आधार होना चाहिए। भेदभाव की इन बेड़ियों को तोड़ने के लिए सामूहिक राजनीतिक इच्छाशक्ति, कठोर कानूनी क्रियान्वयन और सामाजिक सहानुभूति का संगम होना अनिवार्य है। भारत का भविष्य इस बात पर निर्भर नहीं करता कि वह कितनी तेजी से आगे बढ़ रहा है, बल्कि इस बात पर निर्भर करता है कि वह अपनी बेटियों को कितनी गरिमा, सुरक्षा और अवसर प्रदान कर पा रहा है।

## 5.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची


1. चक्रवर्ती, उमा (2003). लैंगिक समानता और सामाजिक संरचना. नई दिल्ली: स्त्री प्रकाशन।
2. मेनन, निवेदिता (2012). देखने का ढंग: नारीवाद और राजनीति. नई दिल्ली: ज़ुबान प्रकाशन।
3. दुबे, लीला (1997). भारतीय समाज में महिलाएँ. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
4. मजूमदार, वीना (2009). भारत में महिला आंदोलन. नई दिल्ली: राष्ट्रीय पुस्तक न्यास।
5. अग्रवाल, जे. सी. (2010). भारत में महिलाएँ और समाज. नई दिल्ली: एस. चंद एंड कंपनी।
6. जेसानी, लोतीका एवं सुधीर चंद्र (सम्पा.) (2004). महिला अधिकार और क़ानून. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. देसाई, नीलम एवं कृष्णा राज (2002). भारत में महिलाएँ और विकास. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. फ्लाविया एग्नेस (2011). महिला और क़ानून. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
9. इग्नू (2023). महिला एवं जेंडर अध्ययन (MWG-101) अध्ययन सामग्री. नई दिल्ली: इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय।


## 5.7 निबंधात्मक प्रश्न

1. "भारत में सांप्रदायिक हिंसा की जड़ें ऐतिहासिक और राजनीतिक कारकों में निहित हैं।" इस कथन की समीक्षा करते हुए आजादी के बाद की प्रमुख सांप्रदायिक घटनाओं का विवरण दीजिए।
2. आधुनिक युग में सांप्रदायिक हिंसा के स्वरूप में 'डिजिटल मीडिया' और 'आर्थिक प्रतिस्पर्धा' की भूमिका पर एक विस्तृत लेख लिखिए। इसे रोकने के उपाय भी सुझाइए।
3. भारत में लैंगिक भेदभाव केवल एक सामाजिक बुराई नहीं बल्कि व्यवस्थागत समस्या है। इसके जनसांख्यिकीय और आर्थिक परिणामों की आलोचनात्मक विवेचना कीजिए।

4. "एक विकसित भारत के निर्माण के लिए महिलाओं का आर्थिक और राजनीतिक सशक्तिकरण अनिवार्य है।" इस संदर्भ में 'नारी शक्ति वंदन अधिनियम' और अन्य कानूनी सुरक्षा उपायों के महत्व को स्पष्ट कीजिए।
5. सांप्रदायिक हिंसा और लैंगिक भेदभाव के अंतःसंबंधों (Intersectionality) पर प्रकाश डालिए। हिंसा के दौरान महिलाएं किस प्रकार विशेष रूप से प्रभावित होती हैं?

# इकाई- 6 भारत में बाल उत्पीडन और बाल श्रम की समस्या(Problem of child abuse and child labor in India)


**6.1 प्रस्तावना:**

**6.2 उद्देश्य**

**6.3 बाल उत्पीड़न (Child Abuse) का अर्थ**

**6.4 बाल उत्पीड़न के प्रकार**

**6.4.1 शारीरिक उत्पीड़न**

**6.4.2 शारीरिक उत्पीड़न के प्रभाव**

**6.4.3 बाल शारीरिक उत्पीड़न की भारतीय स्थिति एवं कानूनी प्रावधान**

**6.5 मनोवैज्ञानिक या भावनात्मक उत्पीड़न**

**6.5.1 भावनात्मक उत्पीड़न के प्रमुख रूप**

**6.5.2 भावनात्मक उत्पीड़न के परिणाम**

**6.5.3 भारतीय समाज में बच्चों के भावनात्मक उत्पीड़न की स्थिति एवं कानूनी प्रावधान**

**6.6 बाल यौन उत्पीड़न**

**6.6.1 बाल यौन उत्पीड़न के प्रमुख रूप**

**6.6.2 भारत में बाल यौन उत्पीड़न की स्थिति एवं संबंधित भारतीय कानून**

**6.7 बाल उत्पीड़न के रूप में उपेक्षा**

**6.7.1 बाल उपेक्षा के प्रकार**

**6.7.2 भारतीय समाज में बाल उपेक्षा की स्थिति एवं संबंधित कानूनी प्रावधान**

**अभ्यास प्रश्न**

**6.8 बाल श्रम की समस्या**

**6.8.1 बाल श्रम के प्रमुख कारण**

6.8.2 बाल श्रम के दुष्परिणाम
6.8.3 भारत में बाल श्रम की वर्तमान स्थति
6.9 सारांश
6.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.11 संदर्भ सूची
6.12 निबंधात्मक प्रश्न

## 6.1 प्रस्तावना:

भारत जैसे विकासशील देश में बच्चे राष्ट्र के भविष्य और प्रगति की आधारशिला हैं, परंतु विडंबना यह है कि यही बच्चे आज सबसे अधिक उत्पीड़न, शोषण और श्रम के शिकार हैं। बाल उत्पीड़न और बाल श्रम जैसी समस्याएँ हमारे समाज की उस कठोर सच्चाई को उजागर करती हैं जहाँ मासूमियत, अधिकार और बाल्यकाल की खुशियाँ आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक कारणों के बोझ तले दब जाती हैं। बाल उत्पीड़न शारीरिक, मानसिक, यौन या भावनात्मक किसी भी रूप में हो सकता है, जो बच्चे के विकास और आत्मसम्मान पर गहरा आघात पहुँचाता है। वहीं, बाल श्रम बच्चों को शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षित बचपन से वंचित कर उन्हें वयस्कों की जिम्मेदारियों में झोंक देता है। गरीबी, अशिक्षा, सामाजिक असमानता और कानूनी शिथिलता इन दोनों समस्याओं के मूल कारण हैं। यद्यपि भारत में *POCSO Act (2012), Juvenile Justice Act (2015) तथा Child Labour (Prohibition and Regulation) Act (1986, संशोधन 2016)* जैसे कई सशक्त कानून लागू हैं, फिर भी इनका प्रभावी क्रियान्वयन अभी चुनौती बना हुआ है। बाल उत्पीड़न और श्रम केवल अपराध नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक उत्तरदायित्व की परीक्षा हैं। जब तक हर बच्चा भय, शोषण और मजबूरी से मुक्त होकर शिक्षा, स्नेह और सुरक्षा का अनुभव नहीं करेगा, तब तक भारत के विकास और सभ्यता की पूर्णता अधूरी रहेगी। भारत जैसे विकासशील देश में बच्चे समाज की सबसे संवेदनशील, मासूम और आशा से भरी हुई जनसंख्या का हिस्सा हैं। वे भविष्य के निर्माता हैं, लेकिन विडंबना यह है कि इन्हीं बच्चों को सबसे अधिक उपेक्षा, शोषण और उत्पीड़न का शिकार होना पड़ता है। प्रस्तुत अध्याय में हम बाल उत्पीडन एवं बाल श्रम का अर्थ, उसके प्रकार, कारण तथा भारत की वर्तमान िस्थति के सम्बन्ध में विस्तृत अध्ययन करेंगे।

## 6.2 उद्देश्य-

इस इकाई के अध्ययन के बाद शिक्षार्थी –

- बाल उत्पीडन का अर्थ एवं बाल उत्पीडन के प्रकारों की पहचान कर सकेंगे।
- बाल उत्पीड़न की भारतीय स्थिति एवं कानूनी प्रावधानों की पहचान कर सकेंगे।

- बालश्रम की समस्या उसके कारणों तथा बाल श्रम के दुष्परिणामों पर चर्चा कर सकेंगे।
- भारत में बाल श्रम की वर्तमान स्थिति का अवलोकन कर सकेंगे।

## 6.3 बाल उत्पीड़न (Child Abuse) का अर्थ-

किसी बच्चे के साथ ऐसा कोई भी शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक या यौन व्यवहार जो उसके **सर्वांगीण विकास, सुरक्षा** और **मानवीय गरिमा** को ठेस पहुँचाए। यह ऐसा आचरण है जो बच्चे के अधिकारों का उल्लंघन करता है और उसे भय, पीड़ा या असुरक्षा का अनुभव कराता है। "बच्चे पर किसी भी रूप में हिंसा, दमन या अमानवीय व्यवहार करना जिससे उसके शरीर, मन या आत्मसम्मान - को हानि पहुँचे।" यह केवल शारीरिक मारपीट तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें बच्चे की भावनाओं की उपेक्षा, उसे भयभीत करना, अपमानित करना, या उसकी इच्छाओं को कुचलना भी शामिल है। बाल उत्पीड़न" (Child Abuse) एक ऐसी सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और कानूनी समस्या है, जो बच्चे के शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और नैतिक विकास को गहराई से प्रभावित करती है। भारत में यह समस्या केवल गरीबी या अशिक्षा तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक संरचना, पारिवारिक दृष्टिकोण, सांस्कृतिक रूढ़ियाँ, और कमजोर विधिक क्रियान्वयन भी इसके कारण हैं।

भारतीय समाज में बाल उत्पीड़न का रूप केवल शारीरिक हिंसा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह पारिवारिक उपेक्षा, बाल श्रम, बाल विवाह, भेदभाव, और शिक्षा से वंचन जैसे सामाजिक व्यवहारों में भी दिखाई देता है। यह उस मानसिकता का परिणाम है जिसमें बच्चों को "अधिकारों से रहित" समझा जाता है और उन पर वयस्कों का सम्पूर्ण नियंत्रण माना जाता है। मनोवेज्ञानिक दृष्टि से बाल उत्पीड़न का अर्थ केवल बाह्य हिंसा नहीं बल्कि **बच्चे के आत्मसम्मान और सुरक्षा की भावना का हनन** भी है। जब बच्चा निरंतर भय, अपमान या दर्द का अनुभव करता है, तो उसका व्यवहार बदल जाता है- वह या तो अत्यधिक आक्रामक हो जाता है या आत्मसंकोची। इस प्रकार, उत्पीड़न बच्चे की मानसिक संरचना को गहराई से प्रभावित करता है।

भारत में **बाल उत्पीड़न** को एक दंडनीय अपराध माना गया है। **POCSO Act, 2012, बाल श्रम (निषेध) अधिनियम**, और **किशोर न्याय अधिनियम** में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि किसी भी बच्चे के साथ हिंसा, शोषण या दुर्व्यवहार करना **कानूनी अपराध** है। कानून के अनुसार, बाल उत्पीड़न केवल शारीरिक नहीं, बल्कि मानसिक या भावनात्मक शोषण भी है।

**विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO)** के अनुसार - "बाल उत्पीड़न उस प्रकार की सभी क्रियाओं या उपेक्षाओं का समूह है जो बच्चे के स्वास्थ्य, अस्तित्व, विकास या गरिमा को नुकसान पहुँचाती हैं या उसकी जिम्मेदारी संभालने वाले वयस्कों, संस्थानों या समाज द्वारा की जाती हैं।"

**संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार अभिसमय (UNCRC, 1989)** में भी कहा गया है कि- "किसी भी बच्चे को किसी भी प्रकार की शारीरिक या मानसिक हिंसा, चोट, दुर्व्यवहार, उपेक्षा, या शोषण का सामना नहीं करना चाहिए।"

**भारत के 'बाल लैंगिक अपराधों से संरक्षण अधिनियम (POCSO)- 2012'** में भी कहा गया है कि- "किसी भी प्रकार का यौन उत्पीड़न, शारीरिक अत्याचार, मानसिक आघात, या जबरन श्रम बच्चों के अधिकारों का उल्लंघन है।"

बाल उत्पीड़न के तत्व (Components of Child Abuse): बाल उत्पीड़न को समझने के लिए इसके प्रमुख चार तत्व होते हैं-

1. कर्त्ता (Perpetrator) – वह व्यक्ति जो उत्पीड़न करता है (जैसे माता-पिता, शिक्षक, रिश्तेदार, नियोक्ता, या कोई अपरिचित)।
2. पीड़ित (Victim) – वह बच्चा जो शोषण या हिंसा का शिकार होता है।
3. क्रिया (Act) – वह व्यवहार या कार्य जिससे बच्चे को हानि होती है (मारना, डराना, यौन दुराचार आदि)।
4. परिणाम (Consequence) – बच्चे को हुआ मानसिक, शारीरिक या सामाजिक नुकसान।

## 6.4 बाल उत्पीड़न के प्रकार-

6.4..1 शारीरिक उत्पीड़न (Physical Abuse)- बाल उत्पीड़न का सबसे प्रत्यक्ष और दिखाई देने वाला रूप शारीरिक उत्पीड़न है। यह वह स्थिति है जब किसी बच्चे को शारीरिक रूप से चोट पहुँचाने, दर्द देने, दंडित करने या नियंत्रित करने के लिए हिंसा का प्रयोग किया जाता है। भारत जैसे देश में जहाँ बच्चों को अनुशासन के नाम पर दंड देना सामान्य बात मानी जाती है, वहाँ शारीरिक उत्पीड़न सामाजिक रूप से स्वीकार्य व्यवहार के रूप में देखा जाता रहा है। लेकिन आधुनिक दृष्टिकोण के अनुसार यह न केवल अमानवीय बल्कि कानूनी रूप से दंडनीय अपराध है। परिभाषा के तौर पर यह कहा जा सकता है कि "जब किसी वयस्क द्वारा बच्चे को अनुशासन या नियंत्रण के नाम पर मारना, थप्पड़ मारना, डंडे से पीटना, जलाना, खींचना, धक्का देना या अन्य किसी प्रकार की शारीरिक हिंसा की जाती है, तो वह शारीरिक उत्पीड़न कहलाता है।"

सितंबर 2025 में हरियाणा के पानीपत से शिक्षा एवं सुरक्षा तथा बच्चे के शारीरिक उत्पीडन का ही विभत्स मामला सामने आया था जिसमे कक्षा 2 में पढने वाले विद्यार्थी को विद्यालय की खिडकी से रस्सी से उल्टा लटका दिया था जबकि उस मासूम का इतना ही कसूर था कि वह गृह कार्य पूर्ण करके नही जाया था । इस तरह के अनेकों ऐसे मामले जो कभी विद्यालयों, क्रैच, धरों या सामाजिक स्थानों से आते रहते हैं जिसमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बच्चों के साथ शारीरिक उत्पीडन हो रहा होता है ।

**6.4.2 शारीरिक उत्पीड़न के प्रभाव-** शारीरिक उत्पीड़न के परिणाम केवल शरीर तक सीमित नहीं रहते, बल्कि बच्चे के पूरे व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं।

**(क)** शारीरिक प्रभाव

- चोटें, हड्डियों का टूटना, जलन, नीले निशान, और स्थायी विकलांगता।
- कभी-कभी गंभीर मारपीट के कारण मृत्यु भी हो सकती है।

**(ख)** मनोवैज्ञानिक प्रभाव: भय, आत्मग्लानि, अवसाद, आत्मविश्वास की कमी और असुरक्षा की भावना।

- बच्चा या तो अत्यधिक आक्रामक बन जाता है या आत्मसंकोची।

**(ग)** सामाजिक प्रभाव

- ऐसे बच्चे समाज से दूरी बनाने लगते हैं।
- उनमें विद्रोही या अपराधी प्रवृत्ति विकसित हो सकती है।

**(घ)** शैक्षणिक प्रभाव

- स्कूल में रुचि समाप्त हो जाती है।
- कई बच्चे विद्यालय छोड़ देते हैं (Dropout)।
- शिक्षकों या साथियों से संवादहीनता बढ़ती है।

### 6.4.3 बाल शारीरिक उत्पीड़न की भारतीय स्थिति एवं कानूनी प्रावधान –

भारत में शारीरिक दंड अब भी व्यापक है। **महिला एवं बाल विकास मंत्रालय (2007)** की रिपोर्ट के अनुसार- "दो-तिहाई (65%) बच्चों ने स्वीकार किया कि उन्हें विद्यालयों या घरों में किसी न किसी रूप में शारीरिक दंड मिला है।"

International Journal Of Human Rights Law Review नामक जर्नल में 2025 में छपे एक अध्ययन के अनुसार, भारत में "शारीरिक उत्पीड़न" की एक व्यापक दर है — "लगभग 66.67% बच्चों को एक या एक से अधिक स्थितियों में शारीरिक उत्पीड़न का अनुभव हुआ" का संकेत मिलता है।

दि टाइम्स ऑफ इण्डिया में छपी रिपोर्ट में National Crime Records Bureau (NCRB) के अनुसार, 2023 में बच्चों के खिलाफ दर्ज अपराधों की संख्या **1,77,335** थी, जिसमें उल्लेख है कि "शारीरिक उत्पीड़न" सहित कई प्रकार के अपराध शामिल हैं।

सितम्बर 2025 में दि टाइम्स ऑफ इंण्डिया की रिपोर्ट के अनुसार Ernakulam (केरल) में 2025 के पहले आठ महीने में 298 बाल उत्पीड़न (abuse) से संबंधित मामले रिपोर्ट हुए, जिनमें से अधिकांश "बाल शोषण" श्रेणी में थे।

बाल शारीरिक उत्पीडन रोकने के लिए निम्नलिखित विधिक और नीतिगत प्रावधान हैं-

1. **भारतीय संविधान – अनुच्छेद 21 एवं 39(f):** प्रत्येक बच्चे को जीवन, गरिमा और सुरक्षा का अधिकार प्राप्त है।
2. **RTE Act, 2009 – धारा 17:** विद्यालयों में किसी भी प्रकार के शारीरिक या मानसिक दंड को प्रतिबंधित किया गया है।
3. **Indian Penal Code (IPC) की धारा 323, 324, 325:**किसी को शारीरिक चोट पहुँचाना दंडनीय अपराध है — यह बच्चों पर भी समान रूप से लागू होता है।
4. **POCSO Act, 2012:** शारीरिक हिंसा यदि यौन स्वरूप की हो, तो यह विशेष रूप से इस अधिनियम के अंतर्गत दंडनीय है।
5. **Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015:** किसी संस्थान या व्यक्ति द्वारा बच्चे के साथ हिंसा करने पर कठोर दंड का प्रावधान है।

शारीरिक उत्पीड़न अनुशासन नहीं, बल्कि **अपराध और नैतिक विफलता** है। बच्चा केवल शरीर नहीं, वह एक संवेदनशील आत्मा है जो स्नेह, सम्मान और सुरक्षा की अपेक्षा करता है। यदि समाज को संवेदनशील और मानवीय बनाना है, तो हमें बच्चों को भय नहीं बल्कि **विश्वास और सहानुभूति** देनी होगी। जैसा कि महात्मा गांधी ने कहा था- "किसी समाज की वास्तविक स्थिति का आकलन इस बात से किया जा सकता है कि वह अपने बच्चों के साथ कैसा व्यवहार करता है।"

## 6.5 मनोवैज्ञानिक या भावनात्मक उत्पीड़न (Emotional Abuse)-

बाल उत्पीड़न का सबसे गहरा, परंतु अक्सर अदृश्य रूप **मनोवैज्ञानिक या भावनात्मक उत्पीड़न (Emotional Abuse)** है। शारीरिक हिंसा के विपरीत यह बाहरी रूप से दिखाई नहीं देता, लेकिन इसका प्रभाव बच्चे के **मस्तिष्क, भावनाओं और व्यक्तित्व** पर अत्यंत गंभीर और दीर्घकालिक होता है। यह उत्पीड़न तब होता है जब बच्चे को बार-बार **अपमान, उपेक्षा, डर, आलोचना, अस्वीकृति या भावनात्मक दमन** का सामना करना पड़ता है। यह बच्चे के आत्मविश्वास को नष्ट कर देता है और उसे असुरक्षा, भय और अपराध-बोध से भर देता है।

**संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार अभिसमय (UNCRC)** में कहा गया है कि- "किसी भी बच्चे को मानसिक पीड़ा पहुँचाना या उसे डर, शर्म या अस्वीकृति का शिकार बनाना, बाल उत्पीड़न का एक रूप है।" भारतीय संदर्भ में, "जब माता-पिता, शिक्षक या कोई वयस्क बच्चे को मानसिक रूप से दबाने, डराने, नीचा दिखाने या उपेक्षा करने का व्यवहार करता है, तो वह भावनात्मक उत्पीड़न कहलाता है।"

### 6.5.1 भावनात्मक उत्पीड़न के प्रमुख रूप-

**(क)** अपमान और तिरस्कार (Humiliation and Insult)

- बच्चे की तुलना दूसरों से करना ("देखो, वो कितना अच्छा है, तुमसे बेहतर")।
- बार-बार उसकी कमियाँ गिनाना, नाम रख देना या मजाक उड़ाना।
- सार्वजनिक रूप से अपमानित करना।

**(ख)** डराना या धमकाना (Threatening and Intimidation)

- बच्चे को भयभीत करना ("अगर ऐसा किया तो घर से निकाल दूँगा", "पुलिस बुला लूँगा")।
- डर पैदा करने वाली बातें या आवाज़ में दमनकारी स्वर का प्रयोग।

**(ग)** अस्वीकृति (Rejection)

- बच्चे के प्रेम, प्रयास या अस्तित्व को अस्वीकार करना।
- उसके साथ बातचीत न करना, उसे महत्व न देना या नज़रअंदाज़ करना।

**(घ)** भावनात्मक उपेक्षा (Emotional Neglect)

- बच्चे की भावनात्मक आवश्यकताओं जैसे स्नेह, सुरक्षा, और संवाद की अनदेखी करना।
- माता-पिता का बच्चों के प्रति उदासीन रहना भी एक रूप है।

**(ङ)** अत्यधिक नियंत्रण (Over Control)

- बच्चे की स्वतंत्रता, विचार या निर्णय लेने की क्षमता को दबाना।
- उसकी राय को महत्व न देना।

**(च)** भेदभाव या पक्षपात (Discrimination)

- लिंग, जन्मक्रम, रंग या प्रदर्शन के आधार पर बच्चों में भेदभाव करना।
- जैसे — "लड़कियाँ तो बोझ हैं" या "बड़ा बेटा ही सब कुछ है।"

### 6.5.2 भावनात्मक उत्पीड़न के परिणाम

मनोवैज्ञानिक उत्पीड़न के परिणाम लंबे समय तक रहते हैं और बच्चे के व्यक्तित्व को गहराई से प्रभावित करते हैं।

**(क)** मानसिक प्रभाव

- आत्मग्लानि, असुरक्षा, अवसाद, भय, आत्महत्या की प्रवृत्ति।
- आत्म-सम्मान और आत्मविश्वास की हानि।
- एकाग्रता की कमी, स्मृति में कमी, और निर्णय लेने में असमर्थता।

**(ख)** व्यक्तित्व संबंधी प्रभाव

- अत्यधिक आक्रामकता या आत्मसंकोच।
- दूसरों पर अविश्वास या निर्भरता की भावना।
- सामाजिक संबंधों में कठिनाई।

**(ग)** शैक्षिक प्रभाव

- पढ़ाई में अरुचि, विद्यालय से अनुपस्थित रहना, प्रदर्शन में गिरावट।
- स्कूल छोड़ने (Dropout) की संभावना बढ़ जाती है।

**(घ)** दीर्घकालिक प्रभाव (Long-term Effects)

- वयस्क जीवन में मानसिक रोग, अवसाद, या नशे की प्रवृत्ति।
- संबंधों में अस्थिरता, आत्म-संदेह और अपराध-बोध।

### 6.5.3 भारतीय समाज में बच्चों के भावनात्मक उत्पीड़न की स्थिति एवं कानूनी प्रावधान-

भारत में भावनात्मक उत्पीड़न को अक्सर "पालन-पोषण का हिस्सा" या "अनुशासन का तरीका" मान लिया जाता है।

- बच्चों की भावनाओं को गंभीरता से नहीं लिया जाता है।
- उन्हें "छोटा समझकर" चुप करा दिया जाता है।

**महिला एवं बाल विकास मंत्रालय (2007)** की रिपोर्ट के अनुसार- "करीब 70% बच्चों ने स्वीकार किया कि उन्हें बार-बार डाँटा, डराया या नीचा दिखाया जाता है।" यह आँकड़ा बताता है कि भावनात्मक उत्पीड़न भारत में सबसे व्यापक लेकिन सबसे **कम पहचाना जाने वाला शोषण** है। भारत में भावनात्मक उत्पीड़न से बच्चों की सुरक्षा हेतु कई कानून लागू हैं-

(1) संविधानिक प्रावधान

- अनुच्छेद 2- जीवन और गरिमा का अधिकार।
- अनुच्छेद 39(f)- बच्चों के स्वास्थ्य और विकास की सुरक्षा।

(2) Right to Education Act, 2009 (धारा 17)

- विद्यालय में मानसिक उत्पीड़न या अपमान को प्रतिबंधित किया गया है।

(3) Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015

- किसी भी संस्थान में भावनात्मक या मानसिक शोषण दंडनीय है।

(4) POCSO Act, 2012

- यदि भावनात्मक उत्पीड़न यौन शोषण से जुड़ा है, तो यह अधिनियम लागू होता है।

(5) National Commission for Protection of Child Rights (NCPCR)

- भावनात्मक उत्पीड़न से संबंधित शिकायतों के लिए निगरानी और सहायता तंत्र प्रदान करता है।

## 6.6 बाल यौन उत्पीड़न )Child Sexual Abuse)-

बाल यौन उत्पीड़न (Child Sexual Abuse) आज विश्वभर में एक गंभीर सामाजिक, नैतिक और मनोवैज्ञानिक समस्या के रूप में उभरकर सामने आया है। भारत जैसे देश में, जहाँ बाल जनसंख्या लगभग 40% है, वहाँ यौन उत्पीड़न का खतरा और भी अधिक बढ़ जाता है। यह न केवल बच्चे की **शारीरिक गरिमा का उल्लंघन** है, बल्कि उसके **मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक विकास** पर भी गहरा दुष्प्रभाव डालता है। बाल यौन उत्पीड़न को अक्सर समाज में छिपाया जाता है, क्योंकि यह "परिवार की इज़्ज़त" या "सामाजिक शर्म" से जुड़ा हुआ विषय माना जाता है। लेकिन यह मौन ही बच्चों के दर्द को और गहराई देता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार- "बाल यौन उत्पीड़न वह स्थिति है जिसमें एक वयस्क या अधिक उम्र वाला व्यक्ति किसी बच्चे को यौन क्रियाओं में शामिल करता है या उन्हें देखने, छूने, दिखाने या शोषण करने का प्रयास करता है, जिससे बच्चे को मानसिक, भावनात्मक या शारीरिक हानि होती है।"

संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार अभिसमय (UNCRC, 1989) "किसी भी रूप में बच्चे का यौन शोषण या यौन उपयोग, उसके अधिकारों का गंभीर उल्लंघन है।"

POCSO Act, 2012 (भारत)- "जब कोई व्यक्ति बच्चे के साथ उसकी इच्छा के विरुद्ध या उसकी समझ से परे किसी भी प्रकार का यौन संपर्क, व्यवहार या शोषण करता है, तो उसे बाल यौन उत्पीड़न कहा जाता है।"

### 6.6.1 बाल यौन उत्पीड़न के प्रमुख रूप (Forms of Child Sexual Abuse)

बाल यौन उत्पीड़न केवल शारीरिक क्रिया तक सीमित नहीं है। यह कई रूपों में होता है- प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों।

**(1)** संपर्क आधारित यौन उत्पीड़न (Contact Sexual Abuse)

- बच्चे के शरीर को अनुचित तरीके से छूना या गले लगाना।
- बच्चे से यौन क्रिया करवाना या उसमें शामिल होना।
- जननांगों को छूना, चूमना या बच्चे को ऐसा करने को कहना।
- बलात्कार या उसके प्रयास।

**(2)** असंपर्क आधारित यौन उत्पीड़न (Non-contact Sexual Abuse)

- बच्चे को अश्लील चित्र, वीडियो या सामग्री दिखाना।
- बच्चे के सामने अशोभनीय व्यवहार करना।
- यौन क्रियाओं की बातों से बच्चे को डराना या बहलाना।
- बच्चे की तस्वीरों या वीडियो का यौन उद्देश्यों के लिए उपयोग करना।

**(3)** ऑनलाइन यौन उत्पीड़न (Online Sexual Exploitation)

- सोशल मीडिया या गेमिंग प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से बच्चों को फंसाना।
- बाल पोर्नोग्राफी, "Grooming", या "Cyber Harassment" के रूप में शोषण।

### 6.6.2 भारत में बाल यौन उत्पीड़न की स्थिति एवं संबंधित भारतीय कानून -

फरवरी 2024 टाइम्स ऑफ इंण्डिया में छपी रिपोर्ट के अनुसार सरकार द्वारा प्रस्तुत आंकड़ों में यह जानकारी है कि **2018-19 से 2022-23** तक बच्चों की देखभाल संस्थानों (Child Care Institutions / Shelter Homes) में यौन उत्पीड़न की **77 शिकायतें** दर्ज हुई हैं।

दि वीक मैग्जीन में अक्टूबर 2025 में  छपी रिपोर्ट (Childlight Global Child Safety Institute द्वारा) बताती है कि भारत में Protection of Children from Sexual Offences Act (POCSO) के अंतर्गत **2017 से 2022** के बीच पंजीकृत मामले **33,210 से बढ़कर 64,469** हो गए — लगभग **94% वृद्धि**।

डाउन टू अर्थ में छपी रिपोर्ट में एक वैश्विक अध्ययन (Epidemiology) ने यह भी पाया है कि भारत में लगभग **30.8% महिलाएँ** और **13.5% पुरुष** बाल्यावस्था (18 वर्ष से कम उम्र) में यौन हिंसा का अनुभव कर चुके हैं। **UNICEF (2022)** की रिपोर्ट के अनुसार- "डिजिटल युग में बाल यौन उत्पीड़न के मामले तेजी से बढ़ रहे हैं, विशेषकर ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्म पर।"

भारत में बच्चों को यौन उत्पीड़न से बचाने हेतु कई विधिक प्रावधान हैं-

**(1)** POCSO Act, 2012 (Protection of Children from Sexual Offences Act) यह सबसे महत्वपूर्ण कानून है। इसके अंतर्गत-

- 18 वर्ष से कम आयु के बच्चों को "Child" माना गया है।
- यौन शोषण के सभी रूप- शरीरिक, मौखिक, दृश्यात्मक- दंडनीय हैं।
- अभियुक्त को कठोर सजा दी जाती है।

- अदालत में “In-Camera Trial” की व्यवस्था होती है।
- बच्चे की पहचान गोपनीय रखी जाती है।

**(2)** Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015- बच्चों की सुरक्षा और पुनर्वास की दिशा में कानूनी ढांचा प्रदान करता है।

**(3)** Information Technology Act, 2000 (Amendment 2008)- ऑनलाइन पोर्नोग्राफी, साइबर बुलिंग या अश्लील सामग्री के प्रसार को रोकता है।

**(4)** Indian Penal Code (IPC)

- धारा 354: किसी महिला या बच्चे की अस्मिता का अपमान।
- धारा 376: बलात्कार से संबंधित प्रावधान।

मनोविज्ञान के अनुसार, बाल यौन उत्पीड़न बच्चे के **“Trust System”** को नष्ट कर देता है। मनोवैज्ञानिक सिगमंड फ्रायड (Freud) के अनुसार- “जब बच्चे के प्रारंभिक जीवन में यौन या भावनात्मक शोषण होता है, तो उसके व्यक्तित्व में स्थायी विकार उत्पन्न हो जाते हैं।”

एरिकसन (Erikson) के *Psychosocial Theory* के अनुसार- “विश्वास बनाम अविश्वास (Trust vs. Mistrust)” का चरण अगर नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है, तो बच्चा जीवनभर असुरक्षित महसूस करता है। इस प्रकार, बाल यौन उत्पीड़न केवल कानूनी अपराध नहीं, बल्कि **मानसिक स्वास्थ्य और व्यक्तित्व विकास की सबसे बड़ी बाधा** है।

## 6.7 बाल उत्पीड़न के रूप में उपेक्षा (Child Neglect as a Form of Abuse)

बाल उत्पीड़न केवल शारीरिक, मानसिक या यौन हिंसा तक सीमित नहीं होता; इसका एक और गहरा, परंतु अक्सर अनदेखा रूप है- **बाल उपेक्षा (Child Neglect)**। उपेक्षा वह स्थिति है जिसमें बच्चे की बुनियादी आवश्यकताओं- जैसे भोजन, वस्त्र, आश्रय, शिक्षा, स्वास्थ्य और भावनात्मक देखभाल- को लगातार नज़रअंदाज़ किया जाता है। बाल उपेक्षा को अक्सर “निष्क्रिय उत्पीड़न” (Passive Abuse) कहा जाता है क्योंकि इसमें हिंसा दिखाई नहीं देती, परंतु इसके परिणाम उतने ही विनाशकारी होते हैं। उपेक्षा से बच्चा न केवल शारीरिक रूप से कमजोर होता है, बल्कि मानसिक रूप से भी असुरक्षित और आत्महीन बन जाता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार-“बाल उपेक्षा वह स्थिति है जब अभिभावक या देखभाल करने वाला व्यक्ति बच्चे की शारीरिक, भावनात्मक, चिकित्सा या शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असफल रहता है, जिससे बच्चे के स्वास्थ्य या विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।”

संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार अभिसमय (UNCRC, 1989) के अनुसार-“किसी भी प्रकार की उपेक्षा या लापरवाही, जो बच्चे के स्वास्थ्य, शिक्षा या कल्याण को हानि पहुँचाए, बाल उत्पीड़न का रूप है।”

इस संबध में यह कहा जा सकता है कि जब मातापिता-, परिवार, शिक्षक या समाज किसी बच्चे की आवश्यक देखभाल, सुरक्षा और स्नेह देने में विफल रहते हैं, तो वह उपेक्षा कहलाती है। बाल उपेक्षा एक **धीमा और मौन उत्पीड़न** है। इसमें कोई चोट या हिंसा का दृश्य नहीं होता, परंतु इसका प्रभाव बच्चे के शरीर, मस्तिष्क और भावनाओं पर गहराई से पड़ता है। उपेक्षित बच्चे को अपने अस्तित्व, प्रेम और सुरक्षा की भावना का अभाव महसूस होता है, जिससे उसमें **आत्मअवमानना-, भय,** और **असुरक्षा** का भाव विकसित होता है।

### 6.6.1 बाल उपेक्षा के प्रकार (Types of Neglect)

उपेक्षा कई प्रकार की हो सकती है — यह केवल शारीरिक देखभाल की कमी नहीं, बल्कि मानसिक और सामाजिक उपेक्षा भी होती है।

**(1)** शारीरिक उपेक्षा (Physical Neglect)

- बच्चे को पर्याप्त भोजन, वस्त्र या आश्रय न देना।
- बीमार होने पर इलाज न कराना।
- उसे गंदे या अस्वच्छ वातावरण में रखना।
- बच्चों को लंबे समय तक अकेला छोड़ देना या उनकी सुरक्षा की अनदेखी करना।

**(2)** भावनात्मक उपेक्षा (Emotional Neglect)

- बच्चे की भावनाओं, स्नेह और संवाद की जरूरतों की उपेक्षा करना।
- माता-पिता का बच्चे से दूर रहना या उसकी भावनात्मक ज़रूरतों को महत्व न देना।
- प्रेम, प्रोत्साहन या स्वीकार्यता का अभाव।

**(3)** शैक्षिक उपेक्षा (Educational Neglect)

- बच्चे को स्कूल न भेजना या उसकी पढ़ाई की परवाह न करना।
- सीखने में कठिनाई होने पर सहयोग न देना।
- उसकी शिक्षा को "बेकार" या "अनावश्यक" समझना।

**(4)** चिकित्सीय उपेक्षा (Medical Neglect)

- बीमारी, चोट या विकलांगता के बावजूद उपचार न कराना।
- चिकित्सकीय निर्देशों की अनदेखी करना।
- बच्चे के स्वास्थ्य को "महत्वहीन" समझना।

**(5)** सामाजिक उपेक्षा (Social Neglect)

- बच्चे को समाज से अलग-थलग रखना।
- उसकी भागीदारी या खेल-कूद में रोक लगाना।
- सामाजिक संबंध बनाने से रोकना या हतोत्साहित करना।

### 6.6.2 भारतीय समाज में बाल उपेक्षा की स्थिति एवं संबंधित कानूनी प्रावधान-

भारत में बाल उपेक्षा एक **मौन सामाजिक समस्या** है। **महिला एवं बाल विकास मंत्रालय (2007)** की रिपोर्ट के अनुसार लगभग **70% बच्चे** किसी न किसी रूप में उपेक्षा या भावनात्मक उदासीनता का अनुभव करते हैं। दि इकोनमिक टाइम में छपे लेख के अनुसार National Commission for Protection of Child Rights (NCPCR) ने अप्रैल–दिसंबर 2024 के बीच लगभग **1 लाख शिकायतें** प्राप्त कीं, जिनमें **"उपेक्षित, वंचित या विकलांग बच्चों की देखभाल"** से सम्बन्धित **39,500+ शिकायतें** थीं। इसी अवधि में **बाल श्रम/बच्चों के कल्याण** से सम्बंधित करीब **20,000 शिकायतें** दर्ज हु ई थीं।

गरीबी, बाल श्रम, बाल विवाह, और अशिक्षा जैसी स्थितियाँ उपेक्षा को और बढ़ाती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों की चिकित्सा और शिक्षा की अनदेखी सबसे आम है। शहरी परिवारों में भी "भावनात्मक उपेक्षा" तेजी से बढ़ रही है, जहाँ माता-पिता के व्यस्त जीवन ने संवाद की कमी पैदा की है।

भारत में बाल उपेक्षा को रोकने के लिए कई विधिक और नीतिगत प्रावधान हैं —

(1) भारतीय संविधान के अंतर्गत
- अनुच्छेद 21- जीवन और गरिमा का अधिकार।
- अनुच्छेद 39 (f)- बच्चों के स्वस्थ विकास और सुरक्षा का दायित्व।

(2) Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015
- किसी भी प्रकार की उपेक्षा, उत्पीड़न या असुरक्षा की स्थिति में बच्चे को संरक्षण प्रदान करता है।
- बाल कल्याण समिति (CWC) को ऐसे बच्चों की सुरक्षा और पुनर्वास का अधिकार है।

(3) Right to Education Act, 2009
- 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा सुनिश्चित करता है।
- बच्चे को स्कूल न भेजना या शिक्षा में बाधा डालना अपराध है।

(4) POCSO Act, 2012
- यदि उपेक्षा के दौरान बच्चे का यौन या मानसिक शोषण होता है, तो यह अधिनियम लागू होता है।

**अभ्यास प्रश्न-**

**प्रश्न 1.** बाल उत्पीड़न (Child Abuse) का अर्थ है —
(a) बच्चे को शिक्षा देना

(b) बच्चे के अधिकारों की रक्षा करना
(c) बच्चे के साथ ऐसा व्यवहार जिससे उसके विकास और गरिमा को ठेस पहुँचे
(d) बच्चे को पुरस्कार देना

**प्रश्न 2.** भारत में बाल यौन उत्पीड़न से संबंधित प्रमुख अधिनियम कौनसा है-?
(a) बाल श्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986
(b) किशोर न्याय अधिनियम, 2015
(c) बाल लैंगिक अपराधों से संरक्षण अधिनियम (POCSO Act), 2012
(d) शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009

**प्रश्न 3.** Right to Education Act, 2009 की धारा 17 क्या निषेध करती है?
(a) बाल विवाह
(b) विद्यालयों में शारीरिक या मानसिक दंड
(c) बाल श्रम
(d) बाल विवाह और दहेज

**प्रश्न 4.** बाल उपेक्षा (Child Neglect) को किस प्रकार का उत्पीड़न कहा जाता है?
(a) सक्रिय उत्पीड़न
(b) निष्क्रिय उत्पीडन (Passive Abuse)
(c) कानूनी उत्पीड़न
(d) शैक्षिक उत्पीड़न

**प्रश्न 5.** बाल उत्पीड़न के चार प्रमुख तत्वों में से कौनसा एक तत्व नहीं है-?
(a) कर्ता )Perpetrator)
(b) पीड़ित )Victim)
(c) दर्शक )Spectator)
(d) परिणाम )Consequence)

## 6.8 बाल श्रम की समस्या -

बाल श्रम आज भी भारत सहित विश्व के अनेक देशों के लिए एक गम्भीर सामाजिक, आर्थिक और मानवीय समस्या है। "बालक भविष्य के निर्माता हैं"-यह विचार भले ही आदर्श लगे, परन्तु वास्तविकता यह है कि आज भी लाखों बच्चे अपने बचपन, शिक्षा और स्वास्थ्य से वंचित होकर जीविका के लिए श्रम करने को विवश हैं। यह न केवल बच्चों के अधिकारों का हनन है, बल्कि देश के विकास पर भी नकारात्मक प्रभाव डालता है।

बाल श्रम भारत जैसे विकासशील देशों में एक **मौन लेकिन व्यापक समस्या** है। आज भी लाखों बच्चे अपने बचपन के अधिकारों से वंचित होकर मजदूरी, घरेलू कार्य, खतरनाक उद्योगों और सड़क पर काम

करने को विवश हैं। यह स्थिति केवल गरीबी का परिणाम नहीं है, बल्कि सामाजिक असमानता, अशिक्षा और कानूनी शिथिलता का भी परिणाम है। महात्मा गांधी ने कहा था- "देश की आत्मा उसके गांवों और बच्चों में बसती है।" लेकिन जब वही बच्चे श्रम के बंधन में जकड़े हों, तो समाज की आत्मा घायल हो जाती है।

बाल श्रम का अर्थ है- "ऐसा कोई भी कार्य जिसमें बच्चा अपनी शिक्षा, स्वास्थ्य, विकास और सम्मानजनक जीवन के अधिकार से वंचित होकर कार्य करता है।" **अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO)** की परिभाषा के अनुसार- "14 वर्ष से कम आयु का कोई भी बच्चा जो आर्थिक लाभ के लिए कार्य करता है, जिससे उसकी शिक्षा बाधित होती है या स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, वह बाल श्रम कहलाता है।"

भारत में **"बाल श्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986"** के अनुसार- "14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी भी कारखाने, खान या खतरनाक उद्योग में नियोजित करना अपराध है।"

### 6.8.1 बाल श्रम के प्रमुख कारण:

बाल श्रम की समस्या के पीछे अनेक गहरे सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक कारण निहित हैं। भारत जैसे विकासशील देश में इसका सबसे मूल कारण **गरीबी** है। गरीबी से ग्रस्त परिवारों के लिए बच्चों की आय भी परिवार की जीविका का आवश्यक साधन बन जाती है। जब परिवार की आमदनी इतनी कम होती है कि भोजन, वस्त्र और आवास तक की पूर्ति कठिन हो, तब माता-पिता अपने बच्चों को मजदूरी या किसी कार्य में भेजने को विवश हो जाते हैं। कई बार यह मजबूरी उन्हें **बंधुआ मजदूरी** तक पहुँचा देती है।

बाल श्रम की जड़ें केवल गरीबी में ही नहीं, बल्कि **अशिक्षा और अज्ञानता** में भी गहराई से जमी हैं। अशिक्षित माता-पिता शिक्षा के महत्व को नहीं समझते। वे यह मानते हैं कि "काम सीखना पढ़ाई से अधिक उपयोगी है।" शिक्षा की उपेक्षा और जागरूकता की कमी के कारण बच्चे विद्यालयों से दूर होकर श्रम में लग जाते हैं। दूसरी ओर, शिक्षा की गुणवत्ता, विद्यालयों की दूरी, शिक्षकों की कमी तथा आर्थिक कठिनाइयाँ भी बच्चों को स्कूल छोड़ने पर मजबूर करती हैं। यहां बाल श्रम के प्रमुख कारणों की बिन्दुवार चर्चा की जा रही है जो निम्नलिखित है-

**सामाजिक कारण-** समाज में आज भी बाल श्रम को अपराध की बजाय एक सामान्य सामाजिक व्यवहार के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। ढाबों, दुकानों, घरों या उद्योगों में बच्चों को काम करते देखकर भी लोग उदासीन रहते हैं। यह सामाजिक मौन इस कुप्रथा को जीवित रखता है। इसके साथ ही परिवार का बड़ा आकार, जनसंख्या वृद्धि और लैंगिक असमानता भी बाल श्रम की दर बढ़ाते हैं। अनेक गरीब परिवारों में अधिक बच्चों का होना आर्थिक बोझ बन जाता है और लड़कियों को शिक्षा से वंचित कर घरेलू कार्यों या नौकरानी के रूप में कार्यरत कर दिया जाता है।

**आर्थिक व्यवस्था की विषमता और बेरोजगारी-** जब वयस्कों को पर्याप्त रोजगार नहीं मिलता, तो बच्चे सस्ते श्रमिक के रूप में आसानी से नियोजित किए जाते हैं। उद्योगपतियों और ठेकेदारों को बच्चों की सस्ती मजदूरी आकर्षित करती है क्योंकि वे अधिक मेहनत करते हैं, कम वेतन लेते हैं और विरोध नहीं करते। इस प्रकार बाल श्रम एक "आर्थिक व्यवहार" का रूप ले लेता है, जिससे शोषण की परंपरा बनी रहती है।

**प्रशासनिक और कानूनी ढाँचा - प्रशासनिक और कानूनी ढाँचा** भी कई बार इस समस्या को रोकने में असफल सिद्ध होता है। यद्यपि भारत में बाल श्रम निषेध और विनियमन अधिनियम (1986, संशोधन 2016), शिक्षा का अधिकार अधिनियम (2009) और संविधान के अनुच्छेद 24 जैसे सशक्त प्रावधान हैं, परंतु इनका क्रियान्वयन प्रायः कमजोर रहता है। निरीक्षण तंत्र सीमित, भ्रष्टाचार प्रचलित और निगरानी व्यवस्था असंगठित क्षेत्र में लगभग न के बराबर है। परिणामस्वरूप बाल श्रम कानून कागज़ों में रह जाते हैं।

**सांस्कृतिक या पारंपरिक स्वरूप-** कुछ क्षेत्रों में बाल श्रम का **सांस्कृतिक या पारंपरिक स्वरूप** भी देखने को मिलता है। परिवारिक व्यवसायों जैसे- कारीगरी, बुनाई, लोहारगिरी, मिट्टी के बर्तन बनाना या जरी-जरदोसी कार्य में बच्चे "सीखने" के नाम पर छोटी उम्र से काम में लगा दिए जाते हैं। समाज इसे बाल श्रम नहीं बल्कि प्रशिक्षण मानता है। यह सोच बच्चों के शिक्षा और खेल के अधिकार को नष्ट कर देती है।

**प्राकृतिक आपदाएँ, प्रवासन और आधुनिक उपभोक्तावाद-** इसके अतिरिक्त **प्राकृतिक आपदाएँ, प्रवासन और आधुनिक उपभोक्तावाद** भी बाल श्रम को बढ़ाते हैं। जब परिवार आजीविका की तलाश में गाँव से शहर आते हैं, तो बच्चों के लिए न तो स्कूल होता है न कोई सामाजिक सुरक्षा। इस स्थिति में बच्चे असंगठित क्षेत्रों में काम करने लगते हैं। वहीं, सस्ते उत्पादों की वैश्विक मांग- जैसे आतिशबाज़ी, कालीन, परिधान, मिठाई या खिलौनों का उद्योग-बच्चों के श्रम का शोषण करके उत्पादन लागत कम करने का माध्यम बन जाती है।

इस प्रकार बाल श्रम के कारण बहुआयामी हैं- इनमें **गरीबी, अशिक्षा, सामाजिक उदासीनता, बेरोजगारी, प्रशासनिक कमजोरी और सांस्कृतिक परंपराएँ** सबसे प्रमुख हैं। ये सभी मिलकर बाल श्रम को एक गहरी सामाजिक जड़ता में बदल देते हैं। जब तक इन कारणों को समग्र रूप से नहीं समझा जाएगा और गरीबी, शिक्षा, रोजगार तथा जनजागरूकता के मोर्चे पर ठोस कदम नहीं उठाए जाएँगे, तब तक बाल श्रम जैसी अमानवीय समस्या का अंत संभव नहीं है। बाल श्रम केवल आर्थिक विवशता नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना की परीक्षा है- और इस परीक्षा में सफलता तभी मिलेगी जब समाज यह स्वीकार करे कि **हर बच्चा मजदूर नहीं, बल्कि विद्यार्थी है।**

### 6.8.2 बाल श्रम के दुष्परिणाम-

बाल श्रम केवल एक आर्थिक या सामाजिक समस्या नहीं है, बल्कि यह **मानवता के विरुद्ध अपराध** है। इसके परिणाम न केवल व्यक्तिगत स्तर पर बच्चे के जीवन को प्रभावित करते हैं, बल्कि यह पूरे समाज

और राष्ट्र के विकास पर भी गहरा नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। बाल श्रम के दुष्परिणामों को यदि हम व्यापक दृष्टि से देखें, तो यह बच्चों के **शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, शैक्षिक और राष्ट्रीय** जीवन को गहराई से आघात पहुँचाते हैं।

**शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव-** सबसे पहले, बाल श्रम का सबसे प्रत्यक्ष दुष्परिणाम बच्चे के **शारीरिक स्वास्थ्य** पर पड़ता है। बचपन शरीर के विकास का सबसे महत्वपूर्ण काल होता है, परंतु जब बच्चा कठिन परिश्रम करने लगता है जैसे ईंट- भट्टों, कारखानों, खदानों, ढाबों या घरेलू कार्यों में तो उसका शरीर थकान, पोषण की कमी और बीमारियों का शिकार हो जाता है। लंबी कार्यावधि, अपर्याप्त भोजन और अस्वच्छ वातावरण उसके शरीर की वृद्धि को रोक देते हैं। अनेक बच्चे श्वसन, त्वचा, दृष्टि और हड्डियों से संबंधित रोगों से पीड़ित हो जाते हैं। इस प्रकार बाल श्रम उनके जीवन की अवधि और गुणवत्ता दोनों को कम कर देता है।

**मानसिक और भावनात्मक विकास पर प्रभाव-** दूसरा प्रमुख प्रभाव **मानसिक और भावनात्मक विकास** पर पड़ता है। बाल्यावस्था में बच्चे का मस्तिष्क जिज्ञासु और सृजनशील होता है, जिसे खेल, शिक्षा और स्नेह की आवश्यकता होती है। जब वह भय, दमन और शोषण के वातावरण में पलता है, तो उसमें आत्मविश्वास, कल्पनाशक्ति और सहानुभूति का विकास नहीं हो पाता। निरंतर अपमान और हिंसा के कारण उनमें **हीनता, डर और आक्रोश** घर कर जाता है। ऐसे बच्चे बड़े होकर या तो असामाजिक प्रवृत्तियों में लिप्त हो जाते हैं या फिर आजीवन आत्मग्लानि से ग्रस्त रहते हैं।

**शिक्षा से वंचित-** बाल श्रम का बड़ा दुष्परिणाम **शिक्षा से वंचित होना** है। जब बच्चा काम में लगा होता है, तो वह विद्यालय नहीं जा पाता। शिक्षा की कमी उसे गरीबी के दुष्चक्र से कभी बाहर नहीं निकलने देती। इस प्रकार बाल श्रम **"गरीबी का पुनरुत्पादन"** करता है- गरीब परिवार से उत्पन्न बच्चा अशिक्षा के कारण फिर से गरीब बन जाता है और यही क्रम पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है। **सामाजिक दृष्टि से,** भी बाल श्रम समाज में असमानता और अन्याय को स्थायी बनाता है। जब अमीर वर्ग सस्ते श्रम का लाभ उठाता है, तो गरीब वर्ग हमेशा शोषित बना रहता है। बच्चों से काम करवाना सामाजिक नैतिकता और संवेदनशीलता का ह्रास दर्शाता है। इससे समाज में **मानवीय मूल्यों, सहानुभूति और न्याय की भावना** कमजोर पड़ती है। यह समस्या केवल बच्चों की नहीं रहती, बल्कि पूरे समाज के नैतिक पतन का संकेत बन जाती है।

**राष्ट्रीय प्रभाव**- बाल श्रम का **राष्ट्रीय प्रभाव** भी अत्यंत गम्भीर है। बच्चे किसी भी देश की सबसे बड़ी पूंजी होते हैं वे भविष्य के नागरिक, वैज्ञानिक, शिक्षक, डॉक्टर, कलाकार और नेता हैं। जब यही बच्चे अशिक्षित और अस्वस्थ रह जाते हैं, तो राष्ट्र की उत्पादक क्षमता घट जाती है। मानव संसाधन विकास रुक जाता है और आर्थिक प्रगति का संतुलन बिगड़ता है। इस प्रकार बाल श्रम राष्ट्र की प्रगति में एक बड़ी बाधा बन जाता है। इसके अतिरिक्त, बाल श्रम का **नैतिक और कानूनी पक्ष** भी चिंताजनक है। यह बच्चों के मूल अधिकारों- जैसे शिक्षा का अधिकार, बाल्यावस्था की सुरक्षा और सम्मानजनक जीवन का अधिकार का खुला उल्लंघन है। संविधान के अनुच्छेद 24 में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी कारखाने या खतरनाक उद्योग में कार्य नहीं कराया जाएगा। परंतु

जब यह कानून व्यवहार में लागू नहीं हो पाता, तो यह न केवल शासन की विफलता बल्कि सामाजिक चेतना की कमी को भी दर्शाता है।

**मनोवैज्ञानिक स्तर पर**, बाल श्रमिकों में प्रेम, स्नेह और सुरक्षा की भावना का ह्रास हो जाता है। वे बहुत जल्दी बड़े हो जाते हैं, लेकिन भीतर से असुरक्षित और अकेले रह जाते हैं। बचपन की हँसी, खेल और सपने उनसे छिन जाते हैं। यही बाल श्रम का सबसे बड़ा और अमानवीय परिणाम है - **बचपन का खो जाना।**

अंततः, बाल श्रम केवल एक सामाजिक बुराई नहीं, बल्कि एक **विकास अवरोधक समस्या** है। यह न केवल बच्चों के अधिकारों का हनन करता है, बल्कि समाज की संवेदनशीलता और राष्ट्र की उन्नति दोनों को बाधित करता है। इसलिए बाल श्रम का अंत केवल कानूनों से नहीं, बल्कि समाज की सामूहिक चेतना, शिक्षा के प्रसार, गरीबी उन्मूलन और नैतिक पुनर्जागरण से ही संभव है। जब तक हर बच्चा स्कूल में नहीं होगा और हर परिवार सम्मानजनक जीवन नहीं जी सकेगा, तब तक बाल श्रम के दुष्परिणाम समाज को भीतर से कमजोर करते रहेंगे। अतः यह समय की माँग है कि हम सब मिलकर यह संकल्प लें **कि कोई भी बच्चा मजदूर नहीं, बल्कि हर बच्चा विद्यार्थी होगा।**

### 6.8.3 भारत में बाल श्रम की वर्तमान स्थति-

U.S. Department of Labor की रिपोर्ट के अनुसार, भारत ने बाल श्रम के "सबसे ख़राब रूपों" को समाप्त करने में *मध्यम प्रगति* की है, लेकिन काम अभी भी शेष है—विशेष रूप से ऐसे कार्य जिसमें बच्चों को नुकसान पहुँचता है।

अक्टूबर 2025 में दि इंण्यिन एक्सप्रेस में छपें रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2024-25 में Telangana (11,063 बचाए गए बच्चे), Bihar (3,974), Rajasthan (3,847), Uttar Pradesh (3,804) और Delhi (2,588) प्रमुख राज्य हैं जहाँ से ये बच्चे बचाये गये।

National Commission for Protection of Child Rights (NCPCR) को अप्रैल–दिसंबर 2024 में लगभग **19,645 बाल श्रम-सम्बंधित शिकायतें** मिली थीं और ये मामले वर्ष अंत तक लंबित थे।

वर्ष 2024–25 के दौरान, Just Rights for Children नेटवर्क और 250 से अधिक एनजीओ तथा प्रवर्तन एजेंसियों द्वारा देशभर में लगभग **53,651 बच्चों को बाल श्रम, तस्करी व बचपन-उन्मुख श्रम से मुक्त** कराया गया। इनमें से लगभग **90% बच्चे (लगभग 48,000 +) "सबसे खराब रूपों वाले बाल श्रम" (खतरनाक कार्य, तस्करी, प्रवासी श्रम आदि) में पाए गए।** इसी अवधि में लगभग **38,388 बचाव अभियान (rescue operations)** हुए, और लगभग **5,809 व्यक्तियों को गिरफ्तार** किया गया, जिनमें 85 % गिरफ्तारी बाल श्रम-मामलों से सम्बंधित थीं।

बचाव अभियान-आधारित आँकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि **बाल श्रम का अंत अभी नहीं हुआ है** बल्कि बहुत बड़ी संख्या में बच्चे अभी भी खतरनाक श्रम, तस्करी, प्रवासी श्रम या घरेलू नौकरानी आदि रूपों में लगे हुए हैं। शिकायतों की संख्या इतनी अधिक है और अधिकांश लंबित हैं, जिससे यह संकेत मिलता है कि **प्रशासनिक प्रक्रिया, पंजीकरण, निगरानी और पुनर्वास तंत्र** अभी भी कमजोर पाए जा रहे हैं। तथ्यों के आधार पर यह भी स्पष्ट है कि भारत को अपने लक्ष्य-Sustainable Development Goal 8.7 (जो 2025 तक सभी रूपों में बाल श्रम समाप्त करने का है) तक पहुँचने में **समय से पीछे** चल रहा है। विगत वर्षो की तुलना में भारत में बाल श्रम की संख्या में कमी आई है, और बचाव-कार्रवाई सक्रिय हो रही है, लेकिन यह समस्या अभी **समाप्त** नहीं हुई है। विशेष रूप से खतरनाक श्रम रूपों में बच्चों की भागीदारी और **बचाव-पुनर्वास तंत्र** की कमजोरियाँ चिंताजनक हैं। यदि **निरंतर, समन्वित एवं संसाधन-समर्थित प्रयास** नहीं किए गए, तो लक्ष्य 2025 तक बाल श्रम समाप्त करने का अधूरा रह सकता है।

## 6.9 सारांश-

भारत में बाल उत्पीड़न और बाल श्रम की समस्या एक गंभीर सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और कानूनी चुनौती है। बच्चे राष्ट्र का भविष्य हैं, किंतु गरीबी, अशिक्षा, सामाजिक असमानता और कानूनी शिथिलता के कारण वे शोषण और उपेक्षा के शिकार बनते हैं। बाल उत्पीड़न में शारीरिक, मानसिक, यौन तथा उपेक्षा—चार प्रमुख रूप शामिल हैं, जो बच्चे के शारीरिक, भावनात्मक और सामाजिक विकास को गहराई से प्रभावित करते हैं। रिपोर्टों के अनुसार, लगभग दो-तिहाई भारतीय बच्चों ने किसी न किसी रूप में शारीरिक या मानसिक उत्पीड़न का अनुभव किया है। POCSO Act (2012), किशोर न्याय अधिनियम (2015) और शिक्षा का अधिकार अधिनियम (2009) जैसे कानून बच्चों की सुरक्षा के लिए बनाए गए हैं, किंतु इनका प्रभावी क्रियान्वयन अभी भी एक चुनौती है। बाल श्रम भी बच्चों के अधिकारों का गंभीर उल्लंघन है। आर्थिक विवशता, बेरोजगारी, अशिक्षा और सामाजिक उदासीनता इसके प्रमुख कारण हैं। बच्चे कारखानों, होटलों और घरों में सस्ते श्रमिकों की तरह काम करने को मजबूर हैं, जिससे उनका बचपन, शिक्षा और स्वास्थ्य नष्ट हो रहे हैं। बाल श्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम (1986) और उसके 2016 संशोधन ने इसे अपराध घोषित किया है। अतः आवश्यक है कि समाज बच्चों को स्नेह, सुरक्षा और शिक्षा प्रदान करे ताकि वे शोषण-मुक्त होकर देश के विकास में योगदान दे सकें।

## 6.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1. **उत्तर:** (c) बच्चे के साथ ऐसा व्यवहार जिससे उसके विकास और गरिमा को ठेस पहुँचे
2. **उत्तर:** (c) बाल लैंगिक अपराधों से संरक्षण अधिनियम (POCSO Act), 2012
3. **उत्तर:** (b) विद्यालयों में शारीरिक या मानसिक दंड
4. **उत्तर:** (b) निष्क्रिय उत्पीड़न (Passive Abuse)

5. **उत्तर:** (c) दर्शक (Spectator)

## 6.11 संदर्भ सूची-


1. Sharma, R.N. & Sharma, R.K. (2019). *Child Psychology and Child Welfare.* Atlantic Publishers, New Delhi.
2. Rao, M.S.A. (2017). *Social Problems in India.* Allied Publishers, New Delhi.
3. Singh, B.B. (2020). *Child Labour in India: Causes and Consequences.* Deep and Deep Publications, New Delhi.
4. Mishra, R.C. (2019). *Human Rights Education and Child Protection.* APH Publishing, New Delhi.
5. Gupta, R.K. (2021). *Child Abuse and Neglect in India: Issues and Challenges.* Concept Publishing, New Delhi.
6. https://www.dol.gov/sites/dolgov/files/ILAB/child_labor_reports/tda2024/India.pdf?utm_source=chatgpt.com
7. https://indianexpress.com/article/india/rajasthan-telangana-bihar-child-labour-rescues-2024-25-report-10083485/?utm_source=chatgpt.com
8. https://www.theweek.in/wire-updates/national/2025/09/29/del23-children-ncpcr-complaints.html?utm_source=chatgpt.com
9. https://www.tribuneindia.com/news/delhi/over-53k-children-rescued-from-child-labour-trafficking-in-india-report?utm_source=chatgpt.com
10. https://www.thequint.com/news/india/child-labour-report-trafficking-sexual-abuse-exploitation-bonded-workers-firs-filed-arrests-data-story-latest?utm_source=chatgpt.com
11. *The Times of India* (February 2024). "77 Child Abuse Complaints in Child Care Institutions in 5 Years, Govt Data Shows."
12. *The Week Magazine* (October 2025). "POCSO Cases Rise by 94% in Five Years: Childlight Global Report."
13. *The Economic Times* (December 2024). "NCPCR Received 1 Lakh Child Rights Complaints in 8 Months."
14. *The Hindu* (July 2023). "Child Labour Persists in Informal Sectors Despite Legal Prohibition."
15. *BBC Hindi* (September 2025). "हरियाणा में स्कूली छात्र को उल्टा लटकाने का मामला: शिक्षा में बढ़ती हिंसा की चिंता।"
16. https://wcd.nic.in — Ministry of Women and Child Development, Govt. of India

17. https://ncpcr.gov.in — National Commission for Protection of Child Rights
18. https://labour.gov.in — Ministry of Labour & Employment, Govt. of India
19. https://www.unicef.org/india — UNICEF India
20. https://www.ilo.org — International Labour Organization

## 6.12 निबंधात्मक प्रश्न-

**प्रश्न 1.** बाल उत्पीड़न की परिभाषा लिखिए तथा इसके प्रमुख प्रकारों की व्याख्या कीजिए।

**प्रश्न 2.** भारत में बाल यौन उत्पीड़न की वर्तमान स्थिति, उसके कानूनी प्रावधानों तथा मनोवैज्ञानिक प्रभावों का वर्णन कीजिए।

**प्रश्न 3.** बाल श्रम की समस्या के सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक कारणों पर प्रकाश डालिए।

**प्रश्न 4.** बाल उपेक्षा को "मौन सामाजिक अपराध" क्यों कहा जाता है? इसके प्रकारों और परिणामों का विश्लेषण कीजिए।

**प्रश्न 5.** बाल उत्पीड़न एवं बाल श्रम को रोकने हेतु भारत सरकार द्वारा बनाए गए प्रमुख कानूनों का विवरण दीजिए और उनके प्रभावों का मूल्यांकन कीजिए।

# इकाई 07 : सामाजिक समस्याओं और मानवाधिकारों की अवधारणा (Concept of Societal Problems and Human Rights)

**7.1 प्रस्तावना**
**7.2 उद्देश्य**
**7.3 सामाजिक समस्याओं की अवधारणा**
**7.3.1 सामाजिक समस्याओं की परिभाषा**
**7.3.2 सामाजिक समस्याओं की प्रमुख विशेषताएँ**
**7.3.3 सामाजिक समस्याओं के प्रकार**
**7.3.4 सामाजिक समस्याओं के कारण**
**7.3.5 सामाजिक समस्याओं के समाधान के उपाय**
**अपनी उन्नति जाँचिए**
भाग-दो
**7.4 मानवाधिकार की अवधारणा एवं परिभाषा**
**7.4.1 मानवाधिकार की प्रमुख विशेषताएँ**
**7.4.2 मानवाधिकार के प्रकार**
**7.4.3 मानवाधिकार के संवर्धन और संरक्षण के उपाय**
**7.4 सामाजिक समस्याओं और मानवाधिकारों का अंतर्संबंध**
**अपनी उन्नति जाँचिए**
**7.7 सारांश**
**7.8 शब्दावली**
**7.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**
**7.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची**
**7.11 निबंधात्मक प्रश्न**

## 7.1 प्रस्तावना (Introduction)

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसका जीवन परिवार, समूह और समाज के सहारे चलता है किंतु जब किसी समाज में ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं, जो उसके संतुलन और विकास में

बाधक बनती हैं और सामूहिक जीवन को अव्यवस्थित कर उसके सामूहिक कल्याण में बाधा डालती है, तो वे परिस्थितियाँ सामाजिक समस्याएँ कहलाती हैं। सामाजिक समस्याएँ केवल व्यक्तिगत संकट नहीं होतीं, बल्कि वे सामूहिक जीवन को प्रभावित करती हैं। जैसे – गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, अपराध, दहेज प्रथा, बाल श्रम, लैंगिक भेदभाव आदि। ये समस्याएँ न केवल सामाजिक व्यवस्था को असंतुलित करती हैं, बल्कि मानवाधिकारों के उल्लंघन का कारण भी बनती हैं। गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता, लिंग असमानता, जातिगत भेदभाव, भ्रष्टाचार, नशा, बाल श्रम एवं प्रदूषण जैसी चुनौतियाँ हमारे सामाजिक ताने-बाने को कमजोर करती हैं। ये समस्याएँ केवल आर्थिक या सांस्कृतिक मुद्दे नहीं होतीं, बल्कि ये मानवाधिकारों से भी गहरे जुड़ी होती हैं। मानवाधिकार वे मूलभूत अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को केवल मानव होने के नाते प्राप्त होते हैं, चाहे उसका धर्म, जाति, भाषा, लिंग या राष्ट्रीयता कुछ भी हो। ये अधिकार व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता, समानता, गरिमा एवं सुरक्षा की गारंटी प्रदान करते हैं। सामाजिक समस्याएँ समाज की असमानताओं और अव्यवस्था की द्योतक हैं, वहीं मानव अधिकार व्यक्ति की गरिमा, समानता और स्वतंत्रता के प्रतीक हैं। दोनों ही तत्व एक स्वस्थ, लोकतांत्रिक और समरस समाज के लिए आवश्यक हैं। इस इकाई में सामाजिक समस्याओं की अवधारणा , परिभाषा, विशेषताएँ , प्रकार, कारण एवं मानवाधिकारों की अवधारणा, विशेषता, वर्गीकरण तथा सामाजिक समस्याओं एवं मानवाधिकारों के परस्पर संबंध और उनके समाधान के उपायों का विस्तार से अध्ययन किया जाएगा, जिससे विद्यार्थी न केवल सैद्धांतिक जानकारी प्राप्त करेंगे, बल्कि एक संवेदनशील और सक्रिय नागरिक के रूप में अपनी जिम्मेदारी को भी समझ पाएंगे।

## 13.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप सक्षम होंगे :

1. सामाजिक समस्याओं की अवधारणा एवं परिभाषा की व्याख्या करने में।
2. सामाजिक समस्याओं की विशेषताओं का वर्णन करने में।
3. सामाजिक समस्याओं के प्रकारों का विश्लेषण करने में।
4. सामाजिक समस्याओं के समाधान के उपाय बताने में।
5. मानवाधिकारों का वर्गीकरण की व्याख्या करने में।
6. मानवाधिकारों की मूल अवधारणा की विवेचना करने में।
7. मानवाधिकारों की विशेषताओं को समझने में।
8. मानवाधिकार के संवर्धन और संरक्षण के उपाय
9. सामाजिक समस्याओं और मानवाधिकारों का अंतर्संबंध का विश्लेषण करने में।

## 7.3 सामाजिक समस्याओं की अवधारणा (Concept of Societal Problems)

सामाजिक समस्या वह स्थिति है, जो समाज की व्यवस्था और मान्यताओं के विरुद्ध होकर असंतुलन और अव्यवस्था पैदा करती है। समाज के विकास और परिवर्तन की प्रक्रिया में अनेक बार ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जो समाज की समरसता, संतुलन और प्रगति में बाधा डालती हैं। जब

किसी विशेष स्थिति या व्यवहार को समाज का एक बड़ा हिस्सा अवांछनीय मानता है और उसके समाधान की अपेक्षा करता है, तो उसे सामाजिक समस्या कहा जाता है।

यह केवल किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत कठिनाई नहीं होती, बल्कि वह समस्या होती है जो सामूहिक जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है और जिसके निवारण हेतु सामूहिक प्रयास अपेक्षित होते हैं। समाज में कुछ ऐसी स्थितियाँ होती हैं जो उन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। सामान्यतः सामाजिक समस्याएँ उन स्थितियों को माना जाता है जो समाज पर हानिकारक प्रभाव डालती है और समाज में विस्तृत रूप से फैली होती है। एक समय में जिसे हानिकारक नहीं माना जाता उसे कुछ समय पश्चात् हानिकारक माना जा सकता है। जैसे धूम्रपान को बहुत समय तक गंभीर समस्या नहीं माना जाता था। लेकिन अब स्वास्थ्य के प्रति बढ़ती जागरूकता से यह चिंता का विषय बन गया है। इसी प्रकार एक समाज में जिसे सामाजिक समस्या माना जाता है, आवश्यक नहीं है कि उसे दूसरे समाज में उसी प्रकार समस्या माना जाए। सभी समाजों में कुछ इस प्रकार के व्यवहार होते हैं, जिन्हें विचलनकारी या हानिकारक माना जाता है जैसे हत्या, मानसिक रूग्णता आदि। इन स्थितियों में कोई मूल्य-संघर्ष नहीं होता। हालांकि, भिन्न-भिन्न समाजों में इन समस्याओं के समाधान के रास्ते अलग-अलग हो सकते हैं।

### 7.3.1 सामाजिक समस्याओं की परिभाषा

सामाजिक समस्या वह परिस्थिति या घटना है, जो समाज के बड़े वर्ग के जीवन में असंतोष, असुरक्षा अथवा अव्यवस्था उत्पन्न करती है और जिसके निवारण के लिए सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता होती है। यह न केवल व्यक्ति की सामाजिक स्थिति को प्रभावित करती है, बल्कि समाज की संरचना और उसकी स्थिरता के लिए भी चुनौती बनती है।

**विभिन्न विद्वानों के अनुसार परिभाषा —**

**एंडरसन एवं पार्क के अनुसार** – 'ऐसी परिस्थितियाँ या व्यवहार, जिन्हें बड़ी संख्या में लोग हानिकारक समझते हैं और जिन्हें बदलना आवश्यक समझा जाता है, सामाजिक समस्याएँ कहलाती हैं।'

**हॉर्टन और लेसवेल** के अनुसार, "सामाजिक समस्या वह स्थिति है, जिसे समाज का एक महत्वपूर्ण वर्ग अवांछनीय मानता है और जिसके समाधान के लिए सामूहिक क्रियाओं की आवश्यकता होती है।"सरल शब्दों में, सामाजिक समस्या ऐसी अवांछनीय सामाजिक स्थिति है, जो समाज के विकास एवं व्यक्तियों के कल्याण में बाधा उत्पन्न करती है और जिसके निवारण हेतु संगठित प्रयास आवश्यक होते हैं।

**गिलिन एवं गिलिन** के अनुसार – सामाजिक समस्या वह स्थिति है, जो समाज के कल्याण में रुकावट पैदा करती है और जिसे समाज का एक बड़ा वर्ग अवांछनीय मानता है।

**फेयरचाइल्ड** के अनुसार – सामाजिक समस्या वह परिस्थिति है, जो समाज के अनेक व्यक्तियों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है और जिसके सुधार हेतु सामाजिक हस्तक्षेप आवश्यक हो जाता है।

**ऑगबर्न और निमकॉफ** के अनुसार, "जब सामाजिक मूल्यों और वास्तविक परिस्थितियों के बीच टकराव होता है, तब सामाजिक समस्या जन्म लेती है।"

सारांशतः, सामाजिक समस्या समाज के जीवन को प्रभावित करने वाली सामूहिक कठिनाई है, जिसके समाधान हेतु संगठित सामाजिक और राजनीतिक प्रयास आवश्यक हैं।

### 7.3.2 सामाजिक समस्याओं की प्रमुख विशेषताएँ

सामाजिक समस्याओं की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

**1. सामूहिक स्वरूप** – यह एक व्यक्ति की कठिनाई नहीं होती, बल्कि समाज के एक बड़े समुदाय से सम्बंधित होती हैं, जो केवल व्यक्तिगत न होकर सामूहिक जीवन को प्रभावित करती हैं। जैसे गरीबी, बेरोज़गारी, भुखमरी, आर्थिक असमानता आदि।

**2. अवांछनीयता** – ऐसी समस्याएँ जो सामाजिक प्रगति और विकास में बाधा उत्पन्न करती हैं। समाज के मानदंडों, मूल्यों और परम्पराओं के विपरीत होती है वह समाज की मान्यताओं एवं मूल्यों के अनुसार समाज द्वारा अस्वीकार्य और अवांछनीय मानी जाती हैं।

3.**सामाजिक मूल्यों के विपरीत** – अपराध, नशाखोरी, वेश्यावृत्ति, दहेज, बाल विवाह, जातिवाद, लैंगिक असमानता, नारी उत्पीड़न, भ्रष्टाचार, आतंकवाद, राजनीतिक अस्थिरता आदि समस्याएँ समाज में स्थापित नैतिक, सांस्कृतिक एवं कानूनी मान्यताओं का उल्लंघन करती है। इन समस्याओं के समाधान के लिए सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक और विधिक उपाय अपेक्षित हैं।

**4. परिवर्तन की आवश्यकता** –निरक्षरता, शिक्षा में असमानता, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अभाव। प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, संसाधनों का क्षरण। इसे सुधारने या समाप्त करने के लिए सामाजिक, कानूनी या आर्थिक हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है।

**5. विस्तृत प्रभाव** – यह न केवल सामाजिक क्षेत्र में, बल्कि आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में भी प्रभाव डाल सकती है।

**6. समय और स्थान के अनुसार भिन्नता** – जो समस्या एक समय या क्षेत्र में गंभीर मानी जाती है, वह दूसरे समय या स्थान पर समस्या न भी हो सकती है। ऐसी समस्याएँ समय और परिस्थितियों के साथ बदलती रहती हैं।

### 7.3.4 सामाजिक समस्याओं के प्रकार

व्यक्ति समाज में रहकर परस्पर सहयोग और सहभागिता से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। किंतु जब समाज में ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं, जो व्यक्तियों और समूहों के लिए कष्टदायक, असंतोषजनक तथा प्रगति में बाधक बनती हैं, तो उन्हें सामाजिक समस्या कहा जाता है। सामाजिक मुद्दे वह समस्या है जो हमारे समाज की स्थिति व विकास को प्रभावित करती है इसमें गरीबी, शिक्षा की कमी, बेरोजगारी, महिलाओं का शोषण, जातिवाद, धार्मिक विवाद और पर्यावरणीय समस्याएँ आदि सामाजिक समस्याएं हैं जो कई प्रकार की होती हैं, जिन्हें विभिन्न श्रेणियों में बांटा जा सकता है। मुख्य प्रकारों में व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामुदायिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समस्याएं शामिल हैं। सामाजिक समस्याओं को विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत भी किया जा सकता है। वर्गीकरण के आधार पर सामाजिक समस्या निम्नवत हैं -

**1.आर्थिक आधार पर** – गरीबी और असमानता सामाजिक न्याय और विकास के लिए बड़ी बाधाएं हैं। गरीबी, बेरोजगारी, आर्थिक असमानता, श्रमिक शोषण और अशिक्षा आर्थिक विकास में बाधा डालती है।

**2. सामाजिक आधार पर** –जातिगत भेदभाव, लैंगिक असमानता, दहेज प्रथा, बाल विवाह आदि।

**3. नैतिक/व्यक्तिगत आधार पर** –मादक पदार्थों का सेवन, अपराध और हिंसा, वेश्यावृत्ति, भ्रष्टाचार आदि।

**4. पर्यावरणीय आधार पर** –वायु, जल एवं ध्वनि प्रदूषण, वनों की कटाई, जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण आदि।

**5. राजनीतिक आधार पर** –राजनीतिक अस्थिरता, चुनावी अनियमितताएँ, शासन में भ्रष्टाचार, मानवाधिकारों का हनन आदि।

मुख्य प्रकारों में व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामुदायिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समस्याएं शामिल हैं जो निम्नलिखित हैं-

**1.व्यक्तिगत समस्याएं:-**ये समस्याएं व्यक्ति के जीवन से जुड़ी होती हैं, जैसे कि नशाखोरी, वेश्यावृत्ति, स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं और मानसिक रोग। नशाखोरी व्यक्ति और समाज दोनों के लिए हानिकारक है इससे पारिवारिक विघटन होता है। वेश्यावृत्ति महिलाओं और बच्चों के लिए एक गंभीर समस्या है। इससे एचआईवी/एड्स जैसी जानलेवा बीमारियां होती हैं जो गंभीर व्यक्तिगत और सामाजिक समस्याएं हैं।

**2. पारिवारिक समस्याएं:** ये समस्याएं परिवार के भीतर होती हैं, जैसे कि बाल विवाह, बाल श्रम, पारिवारिक कलह, दहेज, घरेलू हिंसा, और तलाक। बाल श्रम बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास को नुकसान पहुंचाता है। स्वास्थ्य संबंधी अनेक समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

**3. सामुदायिक समस्याएं:-**ये समस्याएं किसी विशेष समुदाय या क्षेत्र में होती हैं, जैसे कि जातिवाद, वर्ग संघर्ष, और साम्प्रदायिकता।

**4. राष्ट्रीय समस्याएं:-** ये समस्याएं पूरे देश को प्रभावित करती हैं, जैसे कि जनसंख्या वृद्धि, श्रमिक असंतोष और छात्र असंतोष, अपराध, गरीबी, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, और आतंकवाद। जनसंख्या वृद्धि एक बड़ी सामाजिक राष्ट्रीय समस्या है, जो संसाधनों पर दबाव डालती। भ्रष्टाचार सार्वजनिक जीवन को दूषित करता है और विकास को बाधित करता है। अपराध सामाजिक व्यवस्था को बाधित करता है और लोगों के जीवन को खतरे में डालता है। ऐसे ही श्रमिक और छात्र असंतोष सामाजिक अशांति का कारण बन सकते हैं। इन समस्याओं से निपटने के लिए सामूहिक प्रयास और जागरूकता की आवश्यकता है।

**5. अंतर्राष्ट्रीय समस्याएं:-** अंतर्राष्ट्रीय समस्याएं एक से अधिक देशों को प्रभावित करती हैं, जैसे कि आतंकवाद, युद्ध, जलवायु परिवर्तन, और वैश्विक महामारी। पर्यावरण प्रदूषण, मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए खतरा है। आतंकवाद विश्व शांति और सुरक्षा के लिए खतरा है।

### 7.3.4 सामाजिक समस्याओं के कारण

प्रत्येक सामाजिक समस्या का कोई न कोई कारण अवश्य होता है। समस्याएँ अचानक उत्पन्न नहीं होतीं, बल्कि समाज की संरचना, आर्थिक स्थिति, राजनीतिक व्यवस्था, सांस्कृतिक मान्यताओं और व्यक्तियों की सोच का परिणाम होती हैं। सामाजिक समस्याओं के कारण बहुआयामी होते हैं, जिन्हें समझना उनके समाधान के लिए आवश्यक है। सामाजिक समस्याओं के निम्नलिखित कारण हैं -

**1. आर्थिक कारण** :- आर्थिक कारण के अंतर्गत गरीबी, बेरोजगारी और आर्थिक असमानता आती है। गरीबी सामाजिक समस्याओं की जड़ मानी जाती है। निर्धनता के कारण व्यक्ति शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार से वंचित रह जाता है। बेरोजगारी युवाओं में हताशा और अपराध की प्रवृत्ति बढ़ाती है। आर्थिक असमानता समाज में वर्ग संघर्ष और असंतोष को जन्म देती है।

**2. शैक्षिक कारण:** -अशिक्षा अज्ञान और अंधविश्वास को जन्म देती है, जिससे कुरीतियाँ पनपती हैं। शिक्षा में असमानता समाज में अवसरों की कमी और असंतुलन पैदा करती है। व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा का अभाव भी बेरोजगारी और पिछड़ेपन को बढ़ाता है।

**3. सामाजिक-सांस्कृतिक कारण:** -जातिवाद और लैंगिक भेदभाव समाज में असमानता को स्थायी रूप देते हैं।अंधविश्वास और पुरानी परंपराएँ व्यक्ति की सोच को बाधित करती हैं। परिवार और सामुदायिक संस्थाओं की कमजोरी भी समस्याओं को बढ़ाती है।

**4. राजनीतिक कारण:** -भ्रष्टाचार समाज में असमानता और अन्याय को बढ़ाता है।सत्ता संघर्ष और अस्थिरता सामाजिक जीवन को असुरक्षित बना देती है। नीति निर्माण में दूरदृष्टि का अभाव भी सामाजिक समस्याओं को जन्म देता है।

**5. जनसंख्या और पर्यावरण संबंधी कारण:** - जनसंख्या वृद्धि संसाधनों पर दबाव डालती है, जिससे गरीबी, बेरोजगारी और प्रदूषण बढ़ता है। प्रदूषण और पर्यावरणीय असंतुलन स्वास्थ्य समस्याएँ पैदा करते हैं।

**6. मानसिक और मनोवैज्ञानिक कारण:** - तनाव, असुरक्षा और अलगाव की भावना व्यक्ति को अपराध और नशाखोरी की ओर ले जाती है साथ ही समाज से असंतोष और हताशा भी सामाजिक समस्याओं का कारण बनती है।

### 3.3.4 सामाजिक समस्याओं के समाधान के उपाय

सामाजिक समस्याएँ जटिल और बहुआयामी होती हैं, इसलिए उनके समाधान भी बहुआयामी होने चाहिए। जब तक आर्थिक, शैक्षिक, सामाजिक, राजनीतिक, पर्यावरणीय और मनोवैज्ञानिक स्तर पर ठोस कदम नहीं उठाए जाएँगे, तब तक इन समस्याओं का पूर्ण निवारण संभव नहीं है। क्योंकि सामाजिक समस्याएँ किसी भी राष्ट्र और समाज की प्रगति में सबसे बड़ी बाधा होती हैं। गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, भ्रष्टाचार, दहेज, जातिवाद, प्रदूषण और अपराध जैसी समस्याएँ समाज को अस्थिर बनाती हैं। इनका समाधान केवल सरकार के प्रयासों से संभव नहीं है, बल्कि समाज, सरकार और प्रत्येक व्यक्ति को मिलकर इसमें योगदान देना होगा और एक स्वस्थ, समतामूलक और न्यायपूर्ण समाज के निर्माण के लिए आगे आना होगा। सामाजिक समस्याओं के समाधान के निम्नलिखित प्रयास किये जा सकते हैं –

**1. आर्थिक समाधान:** - रोजगार के अवसर बढ़ाना सबसे महत्वपूर्ण है। इसके लिए उद्योग, कृषि और सेवा क्षेत्र में अधिक अवसर उत्पन्न किए जाएँ। स्वरोजगार और लघु उद्योगों को बढ़ावा दिया जाए, ताकि ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में आर्थिक सशक्तिकरण हो सके। निर्धन वर्ग को आर्थिक सुरक्षा योजनाएँ (पेंशन, बीमा, आवास योजनाएँ) प्रदान की जाएँ।

**2. शैक्षिक समाधान:** - सर्वसुलभ शिक्षा का प्रावधान हो, जिससे हर वर्ग शिक्षा प्राप्त कर सके। शिक्षा का स्तर केवल साक्षरता तक न रहकर गुणवत्तापूर्ण और व्यावसायिक होना चाहिए, ताकि युवाओं को

रोजगार मिल सके। वयस्क शिक्षा और निरंतर शिक्षा को भी बढ़ावा दिया जाए, ताकि अशिक्षित लोग भी समाज की मुख्यधारा से जुड़ सकें।

**3. सामाजिक-सांस्कृतिक समाधान**: - सामाजिक समस्याएँ समाज के असंतुलन और अव्यवस्था का परिणाम हैं। ये समस्याएँ व्यक्ति और समाज दोनों के विकास में बाधक हैं। इनके निवारण के लिए केवल सरकार ही नहीं, बल्कि समाज और व्यक्ति की भी जिम्मेदारी है। शिक्षा, समानता, न्याय, पारदर्शिता और सहयोग से ही हम इन समस्याओं को दूर कर एक स्वस्थ, न्यायपूर्ण और प्रगतिशील समाज का निर्माण कर सकते हैं। इसके लिए महिला सशक्तिकरण पर विशेष ध्यान दिया जाए। महिलाओं को आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक अधिकार दिए जाएँ। सामाजिक जागरूकता अभियान चलाकर दहेज प्रथा, बाल विवाह, जातिवाद और नशाखोरी जैसी कुरीतियों का उन्मूलन किया जाए। समाज में नैतिक मूल्यों, सहिष्णुता, सद्भावना और आदर्शों की शिक्षा दी जाए।

**4. राजनीतिक समाधान: -** राजनीति और प्रशासन से भ्रष्टाचार का उन्मूलन किया जाए। शासन व्यवस्था पारदर्शी, उत्तरदायी और जवाबदेह होनी चाहिए। समाजहितकारी योजनाओं को निष्पक्ष रूप से लागू किया जाए, ताकि उनका लाभ गरीब और जरूरतमंद तक पहुँचे। जनप्रतिनिधियों में नैतिकता और सेवा भाव को बढ़ावा दिया जाए।

**5. जनसंख्या और पर्यावरण संबंधी समाधान: -** जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए परिवार नियोजन को बढ़ावा दिया जाए। ताकि जनसंख्या विस्फोट को नियंत्रित किया जा सके। पर्यावरण संरक्षण के लिए वृक्षारोपण, प्रदूषण नियंत्रण और स्वच्छता अभियान को सफल बनाया जाए ताकि प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित और विवेकपूर्ण उपयोग किया जा सके और नवीकरणीय ऊर्जा और सतत विकास की दिशा में और अधिक प्रयास किए जा सकते हैं।

**6. मनोवैज्ञानिक समाधान: -** युवाओं में तनाव और निराशा को दूर करने के लिए परामर्श केंद्र स्थापित कर युवाओं को मार्गदर्शन और मानसिक परामर्श सेवाएँ उपलब्ध कराई जाएँ। स्वस्थ मनोरंजन और खेलों को प्रोत्साहित किया जाए, ताकि लोग नशाखोरी और अपराध से दूर रहें। परिवार और समुदाय का सहयोगात्मक वातावरण मजबूत किया जाए, जिससे व्यक्ति अकेलेपन और असुरक्षा की भावना से मुक्त रह सके। युवाओं में आत्मविश्वास और आशावाद बढ़ाने के लिए व्यक्तित्व विकास कार्यक्रम चलाए जाएँ।

**4. राजनीतिक समाधान: -** राजनीति से भ्रष्टाचार समाप्त किया जाए। प्रशासनिक तंत्र को पारदर्शी और जवाबदेह बनाया जाए। समाजहितकारी योजनाओं को निष्पक्ष रूप से लागू किया जाए।

**5. जनसंख्या और पर्यावरण संबंधी समाधान: -** जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए परिवार नियोजन को बढ़ावा दिया जाए। पर्यावरण संरक्षण के लिए वृक्षारोपण, प्रदूषण नियंत्रण और संसाधनों का संतुलित उपयोग किया जाए।

**भाग-दो**

## 7.3 मानवाधिकार की अवधारणा एवं परिभाषा

मानव अधिकार वे बुनियादी अधिकार हैं जो केवल मानव होने के नाते प्रत्येक व्यक्ति को स्वतः प्राप्त होते हैं। ये अधिकार मनुष्य की स्वतंत्रता, समानता और गरिमा की रक्षा करते हैं। भारत के संविधान ने

भी मानवाधिकारों को मौलिक अधिकारों और राज्य के नीति निदेशक तत्वों के रूप में स्थान प्रदान किया । यद्यपि मानवाधिकार की जड़ें प्राचीन भारतीय दर्शन, बौद्ध-जैन विचारधारा और अशोक के शिलालेखों में मिलती हैं, किंतु इन्हें आधुनिक अर्थों में पहली बार 18वीं शताब्दी में स्पष्ट रूप मिला । 1776 की अमेरिकी स्वतंत्रता घोषणा ने समानता का विचार प्रस्तुत किया, और 1789 की फ्रांसीसी मानव एवं नागरिक अधिकार घोषणा ने मानवाधिकारों की स्पष्ट अवधारणा को जन्म दिया। आगे चलकर 1919 में राष्ट्र संघ और 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना ने इसे अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया । अंततः 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा पारित सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणा ने पहली बार मानवाधिकारों को वैश्विक, औपचारिक और सार्वभौमिक मान्यता दी । यह विश्व इतिहास में वह पहला अवसर था जब मानवाधिकारों को वैश्विक स्तर पर एक आधिकारिक और सार्वभौमिक संकल्पना के रूप में मान्यता मिली । इस घोषणा ने स्पष्ट किया कि सभी मनुष्य स्वतंत्र और समान अधिकारों के साथ जन्म लेते हैं, और उन्हें बिना किसी भेदभाव के सम्मान और स्वतंत्रता का अधिकार है । आज मानवाधिकार की अवधारणा केवल राजनीतिक अधिकारों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय अधिकार भी सम्मिलित हैं।

भारतीय संदर्भ में, भारत की प्राचीन परंपरा में मानवाधिकार की अवधारणा का आधार धर्म, नैतिकता और कर्तव्य था । वेदों और उपनिषदों में मानव को 'अमानिव्य' मानते हुए उसकी गरिमा पर बल दिया गया । बौद्ध और जैन दर्शन ने अहिंसा, करुणा और समानता जैसे सिद्धांतों को मानव जीवन के मूलभूत अधिकारों से जोड़ा ।
मौर्य सम्राट अशोक के शिलालेखों में प्रजा के कल्याण, धार्मिक सहिष्णुता और अहिंसा के सिद्धांत स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं । इसे मानवाधिकार की संकल्पना का प्रारंभिक स्वरूप माना जा सकता है । मानवाधिकारों का संरक्षण और संवर्धन भारतीय संविधान के मौलिक अधिकारों (Fundamental Rights) और राज्य के नीति निदेशक तत्वों (Directive Principles of State Policy) के माध्यम से सुनिश्चित किया गया है । भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में इन अधिकारों की रक्षा अत्यंत आवश्यक है । इसी उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम,1993 के अंतर्गत राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) की स्थापना **12** अक्तूबर, 1993 को किया गया । इस आयोग का उद्देश्य व्यक्ति की गरिमा (Human Dignity), स्वतंत्रता (Liberty), समानता (Equality) और न्याय (Justice) की रक्षा करना है । यह आयोग नागरिकों के मौलिक एवं कानूनी अधिकारों की सुरक्षा हेतु एक स्वायत्त संस्था है । मानवाधिकार की अवधारणा को निम्न परिभाषाओं से समझा जा सकता है –

**संयुक्त राष्ट्र संघ** के अनुसार – "मानव अधिकार वे अधिकार हैं, जो केवल मानव होने के कारण प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त होते हैं।''

**डॉ. बी. आर. अम्बेडकर** के अनुसार – मानव अधिकार वे साधन हैं जिनके द्वारा व्यक्ति गरिमापूर्ण और स्वतंत्र जीवन जी सकता है। मानवाधिकार वैसे अधिकार हैं जो हमारे पास इसलिये हैं क्योंकि हम मनुष्य हैं।

**भारत के राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग** के अनुसार- संविधान द्वारा गारंटीकृत व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता, समानता और सम्मान से संबंधित अधिकारों के रूप में मानवाधिकार या अंतर्राष्ट्रीय अनुबंधों में सन्निहित तथा भारत में अदालतों द्वारा लागू किये जाने योग्य हैं।

**संयुक्त राष्ट्र (UNO):** मानव अधिकार ऐसे अधिकार हैं जो जाति, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक या अन्य किसी आधार पर भेदभाव किए बिना सभी मनुष्यों को समान रूप से प्राप्त हैं।

**7.4.1 मानवाधिकार की प्रमुख विशेषताएँ**

**1. सार्वभौमिकता :–** सार्वभौमिकता का आशय है कि सभी व्यक्तियों पर समान रूप से लागू होना। मानव अधिकार विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त होते हैं, चाहे उसकी राष्ट्रीयता, धर्म, जाति, भाषा या लिंग कुछ भी हो। ये सभी मनुष्यों पर समान रूप से लागू होते हैं।

**2. जन्मजात एवं अविच्छेद्य :-** मानव अधिकार जन्म से ही प्राप्त होते हैं और सामान्य परिस्थितियों में छीने नहीं जा सकते। अविच्छेद्य का अर्थ है कि ये अधिकार छीने नहीं जा सकते, केवल कानून द्वारा सीमित किए जा सकते हैं। (जैसे–आपातकाल)।

**3. समानता और गैर-भेदभाव** :– जाति, लिंग, धर्म, भाषा या क्षेत्र के आधार पर इनमें भेदभाव नहीं होता। मानवाधिकार सभी के लिए समान हैं और इनके प्रयोग में किसी भी प्रकार के भेदभाव की अनुमति नहीं है। अत: सभी अधिकार समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं।

**4. परस्पर संबद्धता :–** सभी मानवाधिकार आपस में जुड़े होते हैं और एक-दूसरे को सुदृढ़ करते हैं।

**5. विधिक संरक्षण** :– इन अधिकारों की रक्षा के लिए राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कानून और संस्थाएँ मौजूद हैं। ये अधिकार राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संरक्षित। इनका मूल उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा और स्वतंत्रता की रक्षा करना है।

**6. गतिशीलता :–** बदलते सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिदृश्यों के अनुसार मानवाधिकारों की परिभाषा और दायरा विकसित होता रहता है।

**7.4.2 मानवाधिकार के प्रकार :-**

मानवाधिकार के प्रकार निम्लिखित हैं -

**1. नागरिक अधिकार: -** नागरिक अधिकार किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की नींव हैं। ये अधिकार प्रत्येक व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता और गरिमा की रक्षा करते हैं। प्रत्येक नागरिक को इस अधिकार के अंतर्गत निम्न अधिकार प्राप्त हैं -

**(a) जीवन का अधिकार :-** प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षित और सम्मानजनक जीवन जीने का अधिकार है। बिना उचित कारण के किसी की जान नहीं ली जा सकती।

**(b) स्वतंत्रता का अधिकार :-** प्रत्येक व्यक्ति को अपनी इच्छा के अनुसार सोचने, बोलने, कार्य करने और कहीं भी आने-जाने का अधिकार है, बशर्ते वह कानून का उल्लंघन न करे।

**(c) समानता का अधिकार :-** सभी व्यक्ति कानून की नजर में समान हैं। जाति, लिंग, धर्म, रंग, भाषा आदि के आधार पर किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता। उदाहरण: भारतीय संविधान का अनुच्छेद 14 (समानता का अधिकार), अनुच्छेद 21 (जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार)।

**2. राजनीतिक अधिकार: -** ये अधिकार व्यक्ति को शासन और राजनीतिक प्रक्रिया में भागीदारी का अवसर प्रदान करते हैं -

**(a) मतदान का अधिकार :-** प्रत्येक वयस्क नागरिक को चुनाव में मतदान करने और प्रतिनिधि चुनने का अधिकार।

**(b) अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता :-** विचारों, विचारधाराओं और मतों को व्यक्त करने की स्वतंत्रता।

**(c) संगठन बनाने का अधिकार :-** राजनीतिक दल, यूनियन, संगठन आदि बनाने और उनमें शामिल होने का अधिकार। उदाहरण: भारत में 18 वर्ष की आयु के बाद प्रत्येक नागरिक को मतदान का अधिकार प्राप्त है।

**3. आर्थिक अधिकार: -** ये अधिकार व्यक्ति को आर्थिक रूप से सुरक्षित और स्वतंत्र बनाने से जुड़े हैं।

**(a) कार्य करने का अधिकार :-** प्रत्येक व्यक्ति को अपनी योग्यता और क्षमता के अनुसार रोजगार पाने का अधिकार।

**(b) समान वेतन का अधिकार :-** समान कार्य करने पर पुरुष और महिला दोनों को समान वेतन मिलना चाहिए।

**(c) संपत्ति का अधिकार :-**अपनी संपत्ति अर्जित करने, रखने और उपयोग करने का अधिकार। उदाहरण: भारत में "समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976" के अंतर्गत समान कार्य के लिए समान वेतन की व्यवस्था की गई है।

**4. सामाजिक अधिकार: -**ये अधिकार व्यक्ति के सामाजिक जीवन, विकास और कल्याण से संबंधित हैं।

**(a) शिक्षा का अधिकार :-** प्रत्येक बच्चे को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार।

**(b) स्वास्थ्य सेवाओं का अधिकार :-** प्रत्येक नागरिक को स्वास्थ्य सुविधाएँ और उपचार उपलब्ध कराना।

**(c) सामाजिक सुरक्षा का अधिकार :-** बीमारी, बेरोजगारी, वृद्धावस्था या विकलांगता की स्थिति में सामाजिक सुरक्षा और सहयोग प्राप्त करने का अधिकार । उदाहरण: भारत में शिक्षा का अधिकार अधिनियम (2009) प्रत्येक बच्चे को 6–14 वर्ष तक नि:शुल्क व अनिवार्य शिक्षा सुनिश्चित करता है।

**5. सांस्कृतिक अधिकार: -** ये अधिकार व्यक्ति की सांस्कृतिक पहचान, परंपरा और धरोहर की रक्षा करते हैं।

**(a) भाषा का अधिकार :-** अपनी मातृभाषा का प्रयोग और विकास करने का अधिकार।

**(b) धर्म का अधिकार :-** अपनी आस्था और धर्म का पालन करने व उसका प्रचार करने का अधिकार।

**(d ) कला व परंपरा का अधिकार :-**अपनी सांस्कृतिक धरोहर, कला, साहित्य और परंपराओं को सुरक्षित रखने और विकसित करने का अधिकार। उदाहरण: भारत में अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा, धर्म और संस्कृति की रक्षा करने का अधिकार संविधान द्वारा दिया गया है (अनुच्छेद 29 व 30)।

**3. एकजुटता या सामूहिक अधिकार :-**सामूहिक अधिकार समूह या समुदाय के सामूहिक हितों की रक्षा के लिए होते हैं, यह निम्नलिखित हैं -

(a )विकास का अधिकार

(b) स्व-निर्णय का अधिकार

(c) स्वच्छ पर्यावरण संरक्षण का अधिकार

(d) शांति का अधिकार

(e) आत्मनिर्णय का अधिकार

## 7.5 सामाजिक समस्याओं और मानवाधिकारों का अंतर्संबंध

सामाजिक समस्याएँ और मानवाधिकार आपस में गहराई से जुड़े हुए हैं। जब समाज में गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, जातीय या लैंगिक भेदभाव, भ्रष्टाचार, मादक पदार्थों का दुरुपयोग, पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्याएँ मौजूद रहती हैं, तो

अनेक सामाजिक समस्याएँ मानव अधिकारों के उल्लंघन से उत्पन्न होती हैं। जैसे -गरीबी और बेरोज़गारी "आजीविका के अधिकार" का उल्लंघन है। जो व्यक्ति के उचित जीवन स्तर के अधिकार का हनन करती है। जातिवाद और लैंगिक भेदभाव "समानता के अधिकार" का हनन करते हैं । जातिगत भेदभाव सामाजिक न्याय एवं गरिमा के अधिकार के विरुद्ध है। वहीं लिंग असमानता महिलाओं और अन्य लैंगिक अल्पसंख्यकों के समानता के अधिकार का उल्लंघन करती है । शिक्षा का अभाव "शिक्षा के अधिकार" का उल्लंघन है। अशिक्षा, शिक्षा के अधिकार को बाधित करती है और रोजगार के अवसर सीमित करती है। पर्यावरण प्रदूषण जीवन और स्वास्थ्य के अधिकार को खतरे में डालता है। अतः सामाजिक समस्याओं के समाधान और मानव अधिकारों की रक्षा एक-दूसरे के पूरक हैं । इस प्रकार, सामाजिक समस्याओं का समाधान केवल सामाजिक व्यवस्था में सुधार के लिए ही आवश्यक नहीं है, बल्कि यह मानवाधिकारों के संरक्षण और संवर्धन का भी आधार है । मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति के जन्मसिद्ध अधिकार हैं, जो जीवन, स्वतंत्रता, समानता और गरिमा की रक्षा करते हैं। सामाजिक समस्याएँ और मानवाधिकार एक-दूसरे से अलग नहीं किए जा सकते। जब तक समाज से गरीबी, भेदभाव, अशिक्षा और असमानता जैसी समस्याएँ समाप्त नहीं होतीं, तब तक मानवाधिकारों का वास्तविक आनंद सभी को नहीं मिल सकता । इसके लिए शिक्षा, जन-जागरूकता, विधिक सुधार, सामाजिक-आर्थिक नीतियाँ और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है ।

### 7.4.3 मानवाधिकारों के संवर्धन और संरक्षण के उपाय

मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता और समानता का आधार हैं । संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 10 दिसम्बर 1948 को मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (Universal Declaration of Human Rights) को अंगीकार किया, जिससे यह सुनिश्चित हुआ कि सभी मनुष्यों को जाति, धर्म, लिंग, भाषा, राष्ट्रीयता या किसी अन्य आधार पर भेदभाव किए बिना समान अधिकार प्राप्त होंगे । भारत के संविधान में भी इन अधिकारों को मौलिक अधिकारों और मौलिक कर्तव्यों के माध्यम से सशक्त रूप से सुनिश्चित किया गया है। किंतु व्यवहार में गरीबी, अशिक्षा, सामाजिक असमानता, लैंगिक भेदभाव, पुलिस अत्याचार, भ्रष्टाचार, आतंकवाद और राजनीतिक अस्थिरता के कारण मानवाधिकारों का उल्लंघन होता रहता है । इनका संरक्षण तभी संभव है जब सरकार, प्रशासन, न्यायपालिका, समाज और नागरिक मिलकर प्रयास करें । शिक्षा, जागरूकता, समानता, न्याय और सामाजिक सहयोग के माध्यम से ही मानवाधिकारों का वास्तविक संवर्धन और संरक्षण संभव है । यदि मानवाधिकार सुरक्षित होंगे, तो समाज में न्याय, शांति और विकास का मार्ग प्रशस्त होगा । इसलिए मानवाधिकारों के संवर्धन (विकास और विस्तार) तथा संरक्षण (सुरक्षा और रक्षा) हेतु ठोस और बहुआयामी उपायों की आवश्यकता है । मानवाधिकार के संरक्षण के निम्नलिखित उपाय हैं -

**1. संवैधानिक और कानूनी उपाय: -** मानवाधिकार केवल कानूनी प्रावधान नहीं हैं, बल्कि ये मानव जीवन की गरिमा और स्वतंत्रता का आधार हैं। भारतीय संविधान के मौलिक अधिकार (जीवन का अधिकार, समानता, स्वतंत्रता, शोषण के विरुद्ध अधिकार, धर्म की स्वतंत्रता आदि) मानवाधिकारों की रक्षा करते हैं। मानवाधिकारों के उल्लंघन पर त्वरित एवं कठोर कार्रवाई हो। भारत में मानवाधिकारों के संवर्धन एवं संरक्षण हेतु निम्न संवैधानिक अधिकारों का वर्णन किया गया है –

भारतीय संविधान के भाग-3 (मौलिक अधिकार) मानवाधिकारों की बुनियादी सुरक्षा करते हैं-

- जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 21),
- समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14),
- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (अनुच्छेद 19),
- शोषण के विरुद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23-24),
- धर्म की स्वतंत्रता (अनुच्छेद 25-28) आदि।

- संविधान का भाग-4 (राज्य के नीति निदेशक तत्व) समाज में समानता, सामाजिक न्याय और मानवोचित जीवन की व्यवस्था को प्रोत्साहन देता है।

**मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993** के तहत राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) और राज्य मानवाधिकार आयोग (SHRC) की स्थापना की गई, जो मानवाधिकार हनन की शिकायतों की जाँच करते हैं।

- महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष कानून— घरेलू हिंसा अधिनियम, दहेज निषेध अधिनियम, बाल विवाह निषेध अधिनियम, बाल श्रम निषेध अधिनियम आदि।
- अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए— SC/ST अत्याचार निवारण अधिनियम।

**2. प्रशासनिक उपाय: - प्रशासनिक उपाय निम्नलिखित हैं -**

- पुलिस, जेल प्रशासन और सुरक्षा बलों को **मानवाधिकारों के प्रति संवेदनशील** बनाया जाए।
- हिरासत, थानों और जेलों में बंदियों के साथ अमानवीय व्यवहार पर रोक लगाने के लिए **कड़ी निगरानी व्यवस्था** हो।
- पीड़ितों को त्वरित राहत, पुनर्वास और मुआवज़ा दिया जाए।
- सरकारी अधिकारियों और कर्मचारियों को नियमित रूप से **मानवाधिकार प्रशिक्षण** दिया जाए।
- लोकपाल और लोकायुक्त जैसी संस्थाओं को सशक्त बनाकर भ्रष्टाचार और शक्ति के दुरुपयोग को रोका जाए।

**3. न्यायिक उपाय: -** न्यायपालिका को स्वतंत्र और निष्पक्ष बनाए रखना आवश्यक है ताकि पीड़ित को न्याय मिल सके। न्यायिक उपाय निम्नवत हैं-

- लोकहित याचिका (PIL) के माध्यम से समाज के कमजोर वर्ग न्याय प्राप्त कर सकते हैं।

**संवैधानिक उपचार (अनुच्छेद 32 और 226)** के तहत सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय मौलिक अधिकारों के उल्लंघन पर सीधे हस्तक्षेप कर सकते हैं। न्यायपालिका को स्वतंत्र और निष्पक्ष बनाए रखना आवश्यक है ताकि पीड़ित को न्याय मिल सके। फास्ट-ट्रैक कोर्ट और विशेष अदालतों से त्वरित न्याय। विशेष अदालतें और फास्ट-ट्रैक कोर्ट स्थापित करके मानवाधिकार मामलों का त्वरित निपटारा सुनिश्चित किया जा सकता है।

**4. शैक्षिक और जागरूकता संबंधी उपाय :-** शिक्षा व्यक्ति को सोचने, समझने और अपने अधिकारों के प्रति सजग बनाती है। मानवाधिकार शिक्षा को विद्यालय और उच्च शिक्षा स्तर पर अनिवार्य किया जाना चाहिए। जन-जागरूकता अभियान चलाकर नागरिकों को उनके अधिकारों और कर्तव्यों की जानकारी देना आवश्यक है। नागरिकों को यह जानकारी दी जाए कि उनके अधिकार क्या हैं और उन्हें कैसे सुरक्षित किया जा सकता है। मानवाधिकार जागरूकता के लिए एनजीओ और सामाजिक संगठनों को ग्रामीण और पिछड़े इलाकों तथा शहरी क्षेत्रों में जन-जागरूकता अभियान चलाकर अधिकारों की जानकारी पहुँचाने में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए।

**5. सामाजिक और सांस्कृतिक उपाय: -** समाज में जाति, धर्म, भाषा और लिंग के आधार पर भेदभाव समाप्त किया जाए। महिला सशक्तिकरण और लैंगिक समानता सुनिश्चित की जाए। गरीब, विकलांग, बुजुर्ग और कमजोर वर्गों के अधिकारों की रक्षा के लिए विशेष सुविधाएँ दी जाएँ। महिलाओं, बच्चों और हाशिए पर स्थित समुदायों के लिए विशेष कल्याणकारी योजनाओं और स्वास्थ्य, शिक्षा और आवास जैसी मूलभूत सुविधाओं तक समान पहुँच सुनिश्चित होना चाहिए।

6. **नागरिक समाज एवं गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) की भूमिका: -** NGOs मानवाधिकारों की रक्षा, पीड़ितों को सहायता और जन-जागरूकता बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा देकर स्थानीय स्तर पर समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

**6. अंतर्राष्ट्रीय उपाय:-** भारत को संयुक्त राष्ट्र द्वारा पारित मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (1948) तथा अन्य मानवाधिकार संधियों का पालन करना चाहिए। अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संगठनों (जैसे Amnesty International, Human Rights Watch) से सहयोग लेकर मानवाधिकारों की निगरानी और सुरक्षा की जानी चाहिए और वैश्विक स्तर पर शांति, न्याय और मानवता को बढ़ावा देना चाहिए। शरणार्थियों, युद्ध पीड़ितों और अंतरराष्ट्रीय अपराधों के पीड़ितों के अधिकारों की रक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय कानूनों का अनुपालन किया जाना चाहिए। मानवाधिकारों की रक्षा हेतु अंतर्राष्ट्रीय संधियों और घोषणाओं का पालन होना चाहिए। सरकार को संयुक्त राष्ट्र और अन्य वैश्विक संगठनों के साथ मिलकर समस्याओं के समाधान के लिए प्रयास करने चाहिए।

**7. मीडिया और सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग :-** मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों को उजागर करने और सामाजिक समस्याओं पर बहस उत्पन्न करने में मीडिया की भूमिका अहम है। सोशल मीडिया के माध्यम से जन-जागरूकता और जन-भागीदारी को बढ़ावा दिया जा सकता है।

**8. व्यक्तिगत और नागरिक स्तर पर उपाय: -** प्रत्येक व्यक्ति दूसरों के अधिकारों का सम्मान करे। दूसरों के अधिकारों का सम्मान करना ही वास्तविक मानवाधिकार संरक्षण है। हर नागरिक को अपने अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों का भी पालन करना चाहिए। सामाजिक जिम्मेदारियों और नैतिक मूल्यों का निर्वाह करते हुए प्रत्येक व्यक्ति को कानून का पालन करना चाहिए और समाज में समानता और भाईचारे का वातावरण बनाना चाहिए।

## अपनी उन्नति जाँचिए (Check your Progress)

1. मानवाधिकारों की आवश्यकता क्यों है?

3. गरीबी और मानवाधिकार हनन का संबंध स्पष्ट कीजिए।

4. मानवाधिकार केवल वयस्क नागरिकों के लिए होते हैं। सत्य / असत्य

6.मानवाधिकार सभी मनुष्यों को समान रूप से प्राप्त होते हैं। सत्य / असत्य

## 7.7 सारांश (Summary)

सामाजिक समस्याएँ वे परिस्थितियाँ हैं जो समाज के सामान्य संचालन में रुकावट पैदा करती हैं और बड़ी संख्या में लोगों को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती हैं। इनमें गरीबी, बेरोज़गारी, अशिक्षा, भेदभाव, लैंगिक असमानता, भ्रष्टाचार, अपराध, बाल श्रम और पर्यावरण प्रदूषण जैसी स्थितियाँ प्रमुख हैं। इनका उद्भव आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और नैतिक कारणों से होता है, जो समाज के संतुलन और प्रगति में बाधा डालते हैं। मानवाधिकार ऐसे बुनियादी और सार्वभौमिक अधिकार हैं जो हर व्यक्ति को मानव होने के कारण प्राप्त होते हैं। इनमें जीवन, स्वतंत्रता, गरिमा, शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा और न्याय जैसे अधिकार शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र की 1948 की सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणा-पत्र तथा भारतीय संविधान के मौलिक अधिकार और नीति-निदेशक तत्व इनकी सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं। एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में हम सभी की यह जिम्मेदारी है कि हम सामाजिक समस्याओं के समाधान और मानवाधिकारों की रक्षा में सक्रिय योगदान दें, ताकि एक न्यायसंगत, समान और मानवीय समाज का निर्माण हो सके।

## 7.8 शब्दावली (Glossary)

**1. सामाजिक समस्या** – ऐसी स्थिति या परिस्थिति जो समाज के सामान्य संचालन में बाधा उत्पन्न करे और बड़ी संख्या में लोगों को नकारात्मक रूप से प्रभावित करे।

2. **मानवाधिकार** – प्रत्येक व्यक्ति को मानव होने के नाते मिलने वाले जन्मजात, अविच्छिन्न और सार्वभौमिक अधिकार।

**3. लैंगिक असमानता** – पुरुष और महिला के बीच अवसरों और अधिकारों में असमानता।

4. **सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणा-पत्र** – 1948 में UNO द्वारा स्वीकृत दस्तावेज जिसमें सभी मनुष्यों के मौलिक अधिकारों की घोषणा की गई।

## 7.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)

**भाग 1-**

**उत्तर 1.** समाज में व्याप्त वह स्थिति या परिस्थिति जिससे अधिकांश लोग पीड़ित होते हैं और जिसे अवांछनीय माना जाता है, सामाजिक समस्या कहलाती है।

**उत्तर2.** (i) सामाजिक समस्या समाज के बड़े हिस्से को प्रभावित करती है। (ii) यह अवांछनीय और हानिकारक मानी जाती है।

उत्तर 3. असत्य

उत्तर 4. सत्य

**भाग 2-**

**उत्तर 1.** मानवाधिकारों की आवश्यकता – मानव की गरिमा बनाए रखने, स्वतंत्रता, समानता और न्याय सुनिश्चित करने के लिए मानवाधिकार आवश्यक हैं।

**उत्तर** 3.गरीबी के कारण लोग शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छ पानी और रोजगार जैसे बुनियादी अधिकारों से वंचित रह जाते हैं, जिससे मानवाधिकार का हनन होता है।

उत्तर 4. असत्य

उत्तर 5. सत्य

## 7.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)


1. ओमप्रकाश, एस. (2010). मानवाधिकार: सिद्धांत एवं व्यवहार. जयपुर: राजस्थान प्रकाशन।
2. एंडरसन, आर. एवं पार्क, जे. (1998). Introduction to Sociology. न्यूयॉर्क: वर्थ पब्लिशर्स।
3. गिलिन, जे.एल. एवं गिलिन, जे.पी. (2003). सामाजिक समस्याएँ. नई दिल्ली: सुरजीत पब्लिकेशन।
4. दत्त, जी. (2018). भारतीय समाज और सामाजिक समस्याएँ. नई दिल्ली: मैकमिलन इंडिया।
5. नेशनल ह्यूमन राइट्स कमीशन ऑफ इंडिया। (2022). NHRC Annual Reports. www.nhrc.nic.in
6. भारत का संविधान (1950). भारत सरकार, विधि एवं न्याय मंत्रालय।
7. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC)। (1993). वार्षिक प्रतिवेदन। नई दिल्ली: भारत सरकार।
8. संयुक्त राष्ट्र संघ (1948). मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (Universal Declaration of Human Rights)। न्यूयॉर्क: संयुक्त राष्ट्र।
9. संयुक्त राष्ट्र महासभा (1966). अंतर्राष्ट्रीय नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार अनुबंध (ICCPR) और अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार अनुबंध (ICESCR)।


## 7.11 निबंधात्मक प्रश्न )Essay Type Questions)

1. सामाजिक समस्याओं की परिभाषा, विशेषताएँ और प्रकार स्पष्ट कीजिए।
2. मानवाधिकारों की अवधारणा और उनके प्रकारों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. सामाजिक समस्याओं और मानवाधिकारों के अंतर्संबंध का विश्लेषण कीजिए।
4 . मानवाधिकारों की रक्षा हेतु कानूनी और सामाजिक उपायों की विवेचना कीजिए।

# इकाई 08 : अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति की समस्याएं, शिक्षा एवं शैक्षिक सुविधाएँ (Problems of SC & ST, Education and Education Facility)

**8.1 प्रस्तावना (Introduction)**
**8.2 उद्देश्य (Objectives)**
**8.3. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं संवैधानिक प्रावधान**
**(Historical Background and Constitutional Provisions)**
**8.4 अनुसूचित जाति एवं जनजाति की प्रमुख समस्याएँ**
**(Major Problems of SC & ST)**
**8.5 अनुसूचित जाति एवं जनजाति की समस्याओं के समाधान हेतु उपाय**
**(Measures to Solve the Problems of SC & ST )**
**8.7 अनुसूचित जाति एवं जनजाति हेतु शैक्षिक सुविधाएँ एवं योजनाएँ**
**(Educational Facilities and Schemes for SC & ST)**
**8.8. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत अनुसूचित जाति एवं जनजाति हेतु शैक्षिक सुविधाएँ**
**(Educational facilities for SC/ST under National Education Policy 2020)**
**अपनी प्रगति जाँचें (Check your progress)**
**8.9 सारांश (Summary)**
**8.10 शब्दावली (Glossary)**
**अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Exercise Questions)**
**8.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Bibliography )**
**8.12निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)**

## 8.1 प्रस्तावना (Introduction)

भारत विविधताओं का देश है यहाँ विभिन्न जातियाँ, जनजातियाँ, भाषाएँ एवं संस्कृतियाँ विद्यमान हैं। यह विविधता जहाँ एक ओर भारत की सांस्कृतिक धरोहर का परिचायक है, वहीं दूसरी ओर सामाजिक विषमताओं और असमानताओं का भी प्रतीक रही है। भारतीय समाज की परंपरागत जाति व्यवस्था ने कुछ जातियों को उच्च स्थान प्रदान किया तो कुछ वर्गों को सामाजिक बहिष्कार और उपेक्षा का शिकार होना पड़ा। इन्हीं वंचित वर्गों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति प्रमुख हैं। संविधान के अनुच्छेद 341 एवं 342 के अंतर्गत राष्ट्रपति द्वारा अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की सूची को क्रमशः अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति से अधिसूचित कहा गया है। अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति समुदाय भारतीय समाज का वह वर्ग है, जिसे ऐतिहासिक रूप से सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा माना गया है। सामाजिक भेदभाव, शोषण एवं उपेक्षा ने इन के सर्वांगीण विकास को बाधित किया। समाज में जातिगत भेदभाव, आर्थिक असमानता, शिक्षा की न्यूनतम उपलब्धता, स्वास्थ्य संबंधी कठिनाइयाँ तथा बेरोज़गारी जैसी समस्याएँ आज भी इनके जीवन को प्रभावित कर रही हैं। अनुसूचित जनजातियाँ तो और भी अधिक चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों का सामना करती हैं क्योंकि वे प्रायः दूरस्थ, दुर्गम एवं प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित क्षेत्रों में निवास करती हैं। यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय संविधान ने समानता, न्याय एवं स्वतंत्रता के मूल्यों पर बल देते हुए विशेष संरक्षण प्रदान करते हुए संवैधानिक प्रावधानों और शैक्षिक योजनाओं के माध्यम से इन्हें विकास की मुख्यधारा से जोड़ने के प्रयास किए गए हैं। फिर भी शिक्षा, रोजगार और सामाजिक समानता की दिशा में अभी लंबा सफर तय करना बाकी है। इस अध्ययन के माध्यम से अनुसूचित जाति एवं जनजाति की समस्याओं, शिक्षा की स्थिति और उपलब्ध शैक्षिक सुविधाओं का गहन विश्लेषण कर यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि इन समुदायों के वास्तविक विकास और सशक्तिकरण के लिए शिक्षा किस प्रकार निर्णायक भूमिका निभा सकती है। इस इकाई में हम अनुसूचित जाति एवं जनजाति की समस्याओं, उनकी शैक्षिक स्थिति, उपलब्ध शैक्षिक सुविधाओं तथा इन वर्गों की उन्नति हेतु किए गए प्रयासों का विस्तार से अध्ययन करेंगे।

## 8.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी निम्नलिखित बिन्दुओं को समझने में सक्षम होंगे–

1. अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की अवधारणा एवं परिभाषा को समझना।
2. इन वर्गों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं संवैधानिक प्रावधानों का अध्ययन करना।
3. अनुसूचित जातियों की प्रमुख सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक एवं राजनीतिक समस्याओं का विश्लेषण करना।
4. अनुसूचित जनजातियों की विशिष्ट समस्याओं, सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक, स्वास्थ्य एवं शैक्षिक की पहचान करना।
5. शिक्षा के महत्व को इन वर्गों के सामाजिक उत्थान के परिप्रेक्ष्य में स्पष्ट करना।

6. अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के लिए सरकार द्वारा प्रदान की गई शैक्षिक योजनाओं एवं सुविधाओं का अवलोकन करना।
7. शिक्षा नीति 2020 एवं अन्य नीतियों में SC/ST वर्ग के लिए किए गए प्रावधानों को समझना।
8. अनुसूचित जाति एवं जनजातियों की समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव एवं उपायों का विवेचन करना।
9. विद्यार्थियों में सामाजिक न्याय, समानता एवं समावेशी दृष्टिकोण के प्रति संवेदनशीलता विकसित करना।

## 8.1 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं संवैधानिक प्रावधान

## (Historical Background and Constitutional Provisions)

भारतीय समाज में जाति-व्यवस्था का विकास प्राचीन काल से ही हुआ। समय के साथ यह व्यवस्था कठोर रूप धारण करती गई और कुछ जातियों को 'अस्पृश्य' मानकर समाज की मुख्यधारा से अलग कर दिया गया। सामाजिक दृष्टि से इन्हें निम्नतम स्थान पर रखा गया और इन्हें शिक्षा, मंदिर-प्रवेश, जलस्रोतों के उपयोग जैसी बुनियादी सुविधाओं से वंचित किया गया। इनका जीवन लंबे समय तक शोषण, पराधीनता एवं हीनभावना में बीता। अनुसूचित जातियाँ जो ऐतिहासिक रूप से 'अस्पृश्यता' एवं जातिगत भेदभाव का शिकार रही हैं।

अनुसूचित जनजातियाँ जो प्रायः वनांचल, पर्वतीय एवं दुर्गम क्षेत्रों में निवास करते हैं। इनकी जीवनशैली प्रकृति एवं पारंपरिक संस्कृति पर आधारित होती है। इनका सामाजिक संगठन कबीलाई ढाँचे पर आधारित होता है, जिसमें सामूहिकता एवं परम्परागत रीति-रिवाजों का महत्त्व होता है। ये प्रायः मुख्यधारा की शिक्षा एवं आर्थिक विकास से दूर रहते हैं। इससे उनकी सामाजिक चेतना कम विकसित हो पाती है। आधुनिक सभ्यता एवं परम्परागत आदिवासी संस्कृति के बीच टकराव देखा जाता है। पश्चिमीकरण व शहरीकरण ने उनकी संस्कृति को प्रभावित किया है। कई स्थानों पर इन्हें "आदिवासी" या "जंगली" कहकर सामाजिक हीनता की दृष्टि से देखा जाता है। बालविवाह, मद्यपान, अंधविश्वास, झाड़-फूँक जैसी परंपराएँ इनके सामाजिक जीवन को प्रभावित करती हैं। औद्योगिक परियोजनाओं, खनन कार्यों एवं बाँधों के कारण इनका पुनर्वास ठीक से नहीं हो पाता और इन्हें अपनी सांस्कृतिक जड़ों से कटना पड़ता है। ब्रिटिश शासनकाल में इन जातियों एवं जनजातियों की स्थिति अत्यंत दयनीय रही। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात संविधान निर्माताओं ने इन वर्गों को न्याय दिलाने हेतु संविधान में SC/ST के लिए आरक्षण, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, शिक्षा, आर्थिक सहायता, सांस्कृतिक संरक्षण और सामाजिक न्याय जैसे व्यापक प्रावधान किए हैं। इनका उद्देश्य ऐतिहासिक रूप से वंचित वर्गों को मुख्यधारा में लाना और उन्हें समान अवसर उपलब्ध कराना है। अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक उन्नति को ध्यान में रखते हुए किए गए संवैधानिक प्रावधान निम्नलिखित हैं -

**1. समानता का अधिकार (Equality of Rights)**

**अनुच्छेद 14** – सभी नागरिकों को कानून के समक्ष समानता एवं समान संरक्षण का अधिका र।

**अनुच्छेद 15(1)** – धर्म, जाति, लिंग, जन्म स्थान आदि के आधार पर भेदभाव निषिद्ध।

**अनुच्छेद 15(4)** – राज्य अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़े वर्गों की उन्नति हेतु विशेष प्रावधान कर सकता है।

**अनुच्छेद 16(4)** – सरकारी नौकरियों में SC/ST एवं पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण।

**2. सामाजिक न्याय और अस्पृश्यता का उन्मूलन**

**अनुच्छेद 17** – अस्पृश्यता का अंत एवं उसका किसी भी रूप में व्यवहार दंडनीय अपराध।

**अनुच्छेद 46** – राज्य का दायित्व है कि वह SC/ST एवं अन्य कमजोर वर्गों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों की विशेष देखभाल करे और सामाजिक अन्याय तथा शोषण से उनकी रक्षा करे।

**3. राजनीतिक प्रतिनिधित्व**

**अनुच्छेद 330** – लोकसभा में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण।

**अनुच्छेद 332** – राज्य विधानसभाओं में SC/ST के लिए सीटों का आरक्षण।

**अनुच्छेद 334** – प्रारंभ में यह प्रावधान 10 वर्षों के लिए था, किंतु समय-समय पर संशोधन कर इसकी अवधि बढ़ाई गई।

**4. विशेष संस्थागत प्रावधान**

**अनुच्छेद 338** – राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (National Commission for Scheduled Castes) का गठन।

**अनुच्छेद 338A** – राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग (National Commission for Scheduled Tribes) का गठन। इन आयोगों का कार्य इन वर्गों के अधिकारों की रक्षा, शिकायतों की जांच एवं नीतियों का सुझाव देना है।

**5. सांस्कृतिक एवं शैक्षिक अधिकार**

**अनुच्छेद 29 और 30** – अल्पसंख्यक समुदायों सहित SC/ST को अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति की रक्षा का अधिकार।

**अनुच्छेद 45** – 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था (अब शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के अंतर्गत लागू)।

**6. अनुसूचित क्षेत्र एवं जनजातीय क्षेत्र**

**अनुच्छेद 244(1)** – अनुसूचित क्षेत्रों का प्रशासन पाँचवीं अनुसूची के अनुसार।

**अनुच्छेद 244(2)** – जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन छठी अनुसूची के अनुसार (मुख्यतः पूर्वोत्तर भारत के लिए)।

पाँचवीं अनुसूची – अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन एवं नियंत्रण की व्यवस्था।

छठी अनुसूची – असम, मेघालय, त्रिपुरा एवं मिजोरम में जनजातीय क्षेत्रों के प्रशासन के लिए विशेष स्वायत्त परिषदों की व्यवस्था।

**7. आर्थिक और शैक्षिक संरक्षण**

**अनुच्छेद 275 (1)** – केंद्र सरकार राज्यों को SC/ST के कल्याण और उन्नति हेतु विशेष अनुदान देती है।

**अनुच्छेद 335** – सरकारी सेवाओं में नियुक्ति करते समय SC/ST के दावों का ध्यान रखा जाएगा।

**8. अन्य संवैधानिक प्रावधान**

**अनुच्छेद 340** – राष्ट्रपति पिछड़े वर्गों की स्थिति का अध्ययन एवं सुझाव देने हेतु आयोग की नियुक्ति कर सकते हैं।

**अनुच्छेद 342** – राष्ट्रपति द्वारा अनुसूचित जनजातियों की सूची का निर्धारण।

**अनुच्छेद 341** – राष्ट्रपति द्वारा अनुसूचित जातियों की सूची का निर्धारण।

## 8.4 अनुसूचित जाति एवं जनजाति की प्रमुख समस्याएँ (Major Problems of SC & ST)

अनुसूचित जाति एवं जनजातियाँ बहुआयामी समस्याओं से ग्रस्त हैं। सामाजिक अपमान, आर्थिक अभाव, शैक्षिक पिछड़ापन और राजनीतिक शोषण ने मिलकर इन्हें लंबे समय तक हाशिये पर रखा। हालांकि संवैधानिक प्रावधानों, आरक्षण नीतियों एवं विभिन्न सरकारी योजनाओं ने इनकी स्थिति में सुधार लाने का प्रयास किया है, परन्तु अभी भी लंबा रास्ता तय करना शेष है। आज भी इन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इनकी समस्याएँ निम्नलिखित हैं -

**1. सामाजिक समस्याएँ**

यद्यपि संविधान द्वारा अस्पृश्यता अपराध घोषित किया गया है, फिर भी ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अस्पृश्यता की परम्परा का पालन आज भी देखने को मिलता है। मंदिर-प्रवेश, सार्वजनिक कुओं या तालाबों के उपयोग, यहाँ तक कि विवाह एवं उत्सवों में भी सामाजिक भेदभाव की घटनाएँ मिलती हैं। जातिगत अपमान एवं बहिष्कार के कारण इन वर्गों में आत्मविश्वास की कमी एवं हीनभावना उत्पन्न होती है। कई बार उच्च जातियों के लोग अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों को सम्मानजनक व्यवसायों या पदों पर देखकर भी स्वीकार नहीं करते। जातिगत पहचान भी व्यक्ति की प्रगति में बाधक बनती है।

**2. आर्थिक समस्याएँ**

अनुसूचित जातियाँ मुख्यतः आर्थिक दृष्टि से कमजोर रही हैं।अधिकांश परिवार भूमिहीन हैं और कृषि मजदूर के रूप में कार्य करते हैं। आर्थिक संसाधनों के अभाव में इनका जीवन गरीबी, अभाव एवं असुरक्षा से ग्रस्त है। उद्योग-धंधों और सरकारी-गैरसरकारी नौकरियों में इनकी भागीदारी अपेक्षाकृत कम है और तकनीकी एवं औद्योगिक क्षेत्रों में अपेक्षित कौशल की कमी के कारण ये वर्ग आधुनिक रोजगार के अवसरों से वंचित रहते हैं। SC/ST वर्गों की आजीविका प्रायः कृषि मजदूरी, छोटी-मोटी मजदूरी या पारंपरिक असंगठित क्षेत्र तक सीमित रही है। साहूकारों एवं बिचौलियों पर निर्भरता के कारण यह वर्ग ऋणग्रस्त होकर आर्थिक शोषण का शिकार होता आया है। अनुसूचित जनजातियाँ प्रायः जंगलों व प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रही हैं। खनन, औद्योगिकीकरण और बाँध परियोजनाओं के कारण वे अपने मूल आवास से विस्थापित होती रही हैं।

**3. शैक्षिक पिछड़ापन**

अशिक्षा इनकी सबसे बड़ी समस्या है। शिक्षा किसी भी वर्ग के उत्थान का मुख्य साधन है, किन्तु अनुसूचित जातियों की स्थिति इस क्षेत्र में अत्यंत कमजोर रही है। अनेक अनुसूचित जाति परिवारों में अब भी अशिक्षा की उच्च दर व्याप्त है। विद्यालयों में भी कई बार जातिगत भेदभाव देखने को मिलता है,

जिससे छात्र हतोत्साहित हो जाते हैं। विद्यालयों में उच्च ड्रॉपआउट दर, संसाधनों की कमी, विद्यालयों तक पहुँच में कठिनाई इनकी शिक्षा में बाधा डालते हैं। तकनीकी एवं उच्च शिक्षा में इनकी भागीदारी बहुत कम है। आर्थिक कठिनाइयों एवं पारिवारिक परिस्थितियों के कारण बच्चों का जल्दी विद्यालय छोड़ देना सामान्य बात है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की उपलब्धता न होने से इनका शैक्षिक स्तर कम रहता है। अनुसूचित जाति की बालिकाओं की शिक्षा में विशेष कठिनाइयाँ आती हैं, जैसे बाल-विवाह, घरेलू काम का बोझ एवं सामाजिक प्रतिबंध आदि।

**4. स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ**

दूरस्थ क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव है । स्वास्थ्य सेवाओं की कमी, और मद्यपान जैसी समस्याएँ आदिवासियों के जीवन-स्तर को प्रभावित करती हैं। शराब का अत्यधिक सेवन स्वास्थ्य को प्रभावित करता है और परिवार की आय का बड़ा हिस्सा इसी पर खर्च होता है। आदिवासी क्षेत्रों में अस्पताल, दवाइयाँ व चिकित्सक उपलब्ध नहीं होते। गरीबी व संतुलित आहार की कमी के कारण बच्चों व महिलाओं में कुपोषण की समस्या गंभीर है । शुद्ध पेयजल की कमी से जनजातीय समुदाय में जलजनित रोग व्यापक हैं । स्वच्छता व स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता की कमी से मलेरिया, डेंगू, क्षय रोग जैसे संक्रामक बीमारियाँ अधिक फैलती हैं। मातृ एवं शिशु मृत्यु दर, संक्रामक रोग, स्वच्छ पेयजल एवं स्वास्थ्य सेवाओं की कमी इन वर्गों की गंभीर समस्या है । स्वास्थ्य केंद्रों की अनुपलब्धता के कारण वे झाड़-फूँक व घरेलू नुस्खों पर निर्भर रहते हैं ।

**5. राजनीतिक समस्याएँ**

यद्यपि SC/ST को संवैधानिक आरक्षण प्राप्त है, फिर भी वे अपने राजनीतिक अधिकारों का पूर्ण उपयोग नहीं कर पाते। ग्रामीण क्षेत्रों में दबंग जातियों का प्रभाव इनकी राजनीतिक स्वतंत्रता को सीमित कर देता है। भारतीय संविधान ने अनुसूचित जातियों को राजनीति में आरक्षण का अधिकार दिया है, किन्तु व्यवहारिक जीवन में अभी भी कई बाधाएँ हैं । राजनीतिक चेतना के अभाव में अधिकांश लोग राजनीति को समझने एवं उसमें भाग लेने की स्थिति में नहीं हैं। अनुसूचित जातियों से आने वाले नेताओं की संख्या बढ़ी है, लेकिन वे नेतृत्व क्षमता की कमी के कारण अक्सर अपनी जाति की वास्तविक समस्याओं को हल करने में असफल रहते हैं। इन वर्गों के मतदाता प्रायः स्थानीय नेताओं एवं उच्च जातियों पर निर्भर रहते हैं । कई बार विभिन्न दल इनके वोट बैंक का उपयोग कर इनका राजनीतिक शोषण करते हैं, परन्तु इनके वास्तविक सशक्तिकरण हेतु गंभीर प्रयास नहीं करते।

**6. सांस्कृतिक समस्याएँ**

अनुसूचित जनजातियों की भाषा, परंपराएँ और संस्कृति मुख्यधारा से भिन्न होने के कारण उपेक्षित होती हैं । आधुनिक शिक्षा और शहरीकरण के दबाव से उनकी संस्कृति और पहचान पर संकट उत्पन्न हो रहा है। दूरस्थ क्षेत्रों में विद्यालयों की संख्या अपर्याप्त है । अनेक आदिवासी भाषाएँ अलग होती हैं जिससे भाषायी अवरोध और बालिका शिक्षा में पिछड़ापन जनजातीय शिक्षा को सीमित कर देता है । शिक्षकों की अनुपस्थिति और आदिवासी क्षेत्रों में योग्य शिक्षकों का अभाव और प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में न होने से बच्चे शिक्षा से विमुख हो जाते हैं । कई बार आदिवासी छात्रों को मुख्यधारा के स्कूलों में हीन दृष्टि से देखा जाता है, जिससे उनमें हीनभावना पनपती है । इनमें सामाजिक सुरक्षा का अभाव रहता है । इन वर्गों के लोग असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं, जहाँ सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का लाभ नहीं पहुँचता । वृद्धावस्था, बेरोजगारी और आकस्मिक दुर्घटनाओं में इन्हें कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

**7. अपराध एवं शोषण**

SC/ST वर्गों के साथ जातिगत अत्याचार, बलपूर्वक विस्थापन, यौन शोषण, भूमि कब्जा जैसी घटनाएँ होती रहती हैं। अनुसूचित जनजातियाँ अक्सर नक्सलवाद एवं चरमपंथ की चपेट में आ जाती हैं, जिससे उनका जीवन और भी असुरक्षित हो जाता है। अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की समस्याएँ बहुआयामी रही हैं। सामाजिक भेदभाव, अशिक्षा, निर्धनता और सांस्कृतिक उपेक्षा इनकी प्रगति में बाधक रही है। इन समस्याओं के समाधान के लिए शिक्षा, आर्थिक सशक्तिकरण, स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार, राजनीतिक जागरूकता और सामाजिक समानता की भावना आवश्यक है।

## 8.5 अनुसूचित जाति एवं जनजाति की समस्याओं के समाधान हेतु उपाय (Measures to Solve the Problems of SC & ST)

अनुसूचित जाति (SC) एवं अनुसूचित जनजाति (ST) की समस्याएँ ऐतिहासिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से गहराई से जुड़ी हुई हैं। अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की समस्याओं का समाधान केवल सरकारी योजनाओं से संभव नहीं है। इसके लिए सामाजिक मानसिकता में परिवर्तन, शिक्षा का व्यापक प्रसार, आर्थिक आत्मनिर्भरता, सांस्कृतिक सम्मान और राजनीतिक भागीदारी आवश्यक है। जब तक समाज इन्हें बराबरी का दर्जा नहीं देगा, तब तक सच्ची सामाजिक न्याय की अवधारणा पूर्ण नहीं हो सकेगी। इनकी समस्याओं के स्थायी समाधान के निम्नलिखित उपाय हैं-

**1. सामाजिक सुधार एवं समानता की स्थापना के उपाय**

अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के विकास में सामाजिक सुधार एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। समाज में व्याप्त जातिगत पूर्वाग्रहों एवं छुआछूत जैसी कुप्रथाओं को समाप्त करना आवश्यक है। इसके लिए जनजागरूकता अभियान, सामाजिक संगठनों की सक्रियता तथा धार्मिक-सांस्कृतिक आंदोलनों की आवश्यकता है। अस्पृश्यता के पूर्ण उन्मूलन हेतु संविधान के अनुच्छेद 17 को प्रभावी ढंग से लागू करना चाहिए। जनजागरण एवं शिक्षा के द्वारा समाज में जागरूकता फैलाकर जातिगत भेदभाव को समाप्त किया जा सकता है। विवाह, मंदिर प्रवेश, सार्वजनिक स्थलों पर समानता हेतु सकारात्मक सामाजिक वातावरण निर्मित करना चाहिए।

**2. शिक्षा का प्रसार एवं नीतिगत उपाय**

शिक्षा सामाजिक व आर्थिक उत्थान का सबसे सशक्त साधन है। शैक्षिक नीतिगत उपाय SC/ST समुदाय को ज्ञान, कौशल और प्रतिस्पर्धा की मुख्यधारा से जोड़ते हैं। छात्रवृत्ति, निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें, वर्दी एवं मध्याह्न भोजन जैसी सुविधाएँ शिक्षा ग्रहण करने हेतु प्रोत्साहित करती हैं। प्राथमिक से उच्च शिक्षा तक SC/ST विद्यार्थियों को मुफ्त एवं गुणवत्तापूर्ण नि: शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराना चाहिए। प्री-मैट्रिक व पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति, एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय आदि का विस्तार हो। तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा हेतु आईटीआई, पॉलिटेक्निक, उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थानों में प्रवेश की विशेष व्यवस्था होनी चाहिए। विश्वविद्यालयों, व्यावसायिक संस्थानों एवं तकनीकी शिक्षा में आरक्षण, प्रवेश में रियायतें एवं अनुसंधान छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जानी चाहिए। शैक्षिक संस्थानों की स्थापना हो ताकि आदिवासी एवं पिछड़े क्षेत्रों में आवासीय विद्यालय, आश्रम पद्धति विद्यालय तथा

तकनीकी संस्थानों की स्थापना से शिक्षा का प्रसार सम्भव हो सके। प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के माध्यम से निरक्षरता उन्मूलन हेतु प्रौढ़ शिक्षा तथा सतत शिक्षा कार्यक्रम चलाना आवश्यक है। नई शिक्षा नीति का समावेशी दृष्टिकोण लागू हो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में 'समान अवसर' और 'गुणवत्तापूर्ण शिक्षा' की परिकल्पना अनुसूचित जाति एवं जनजाति लाभन्वित हो सके।

**3. आर्थिक एवं रोजगारपरक उपाय**

आर्थिक उपाय अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की आत्मनिर्भरता और सम्मानजनक जीवन सुनिश्चित करते हैं। आर्थिक सशक्तिकरण अनुसूचित जाति एवं जनजाति की उन्नति का आधार है। रोजगार सृजन से ग्रामीण और शहरी दोनों स्तरों पर सरकारी व गैर-सरकारी रोजगार अवसर उपलब्ध कराना आवश्यक है। स्वरोजगार को प्रोत्साहन देकर लघु उद्योग, हस्तशिल्प, कृषि-आधारित उद्योग, वन उत्पादों के व्यवसाय एवं स्वरोजगार योजनाओं को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। ऋण सुविधा देकर बैंकों व सहकारी समितियों के माध्यम से बिना जमानत के ऋण उपलब्ध कराना इन समुदायों के लिए सहायक है। आर्थिक आरक्षण उनके जीवन स्तर को उन्नतशील बनाने में सहायक हो सकता है। कौशल विकास कार्यक्रम के माध्यम से यह समुदाय आधुनिक तकनीकी व व्यावसायिक प्रशिक्षण पाकर रोजगार पा सकते हैं। आर्थिक सशक्तिकरण हेतु भूमि सुधार के प्रयास हों। भूमिहीन परिवारों को भूमि वितरण किए जाय। स्वरोजगार योजनाएँ, कौशल विकास कार्यक्रम और ऋण सुविधा उपलब्ध कराकर रोजगार के अवसर प्रदान किए जाय। सरकारी नौकरियों और शिक्षा संस्थानों में आरक्षण का सही ढंग से क्रियान्वयन हो।

**4. स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार: -**ग्रामीण व आदिवासी क्षेत्रों में स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना की जाए। आंगनबाड़ी केन्द्रों में पोषण कार्यक्रम के माध्यम से मध्यान्ह भोजन, गर्भवती महिलाओं हेतु विशेष योजनाएँ संचालित की जाय और स्वच्छ पेयजल एवं स्वच्छता अभियान का संचालन किया जाय।

**5. राजनीतिक सशक्तिकरण: -** आरक्षण आधारित प्रतिनिधित्व हो, संसद, विधानसभाओं, पंचायतों व नगर निकायों में SC/ST के लिए आरक्षित सीटें की जाए। राजनीतिक शिक्षा व नेतृत्व विकास हेतु प्रशिक्षण व जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से उनकी भागीदारी बढ़ाना चाहिए।

**6. सांस्कृतिक संरक्षण: -** भाषा और संस्कृति के संरक्षण के लिए जनजातीय भाषाओं और सांस्कृतिक परंपराओं को शिक्षा एवं मीडिया में स्थान मिलना चाहिए।

**7. सुरक्षा एवं न्याय: -** पुलिस एवं प्रशासनिक निगरानी बढ़ाई जाए और SC/ST अत्याचार निवारण अधिनियम (1989) का कठोर पालन किया जाए। विशेष अदालतों के माध्यम से शीघ्र न्याय दिलाने हेतु तेज न्यायिक प्रक्रिया लागू किया जाए।

**8. योजनाओं और नीतियों का प्रभावी कार्यान्वयन: -** भ्रष्टाचार व बिचौलियों पर रोक लगाकर योजनाओं की पारदर्शिता सुनिश्चित कर केंद्र और राज्य सरकार की कल्याणकारी योजनाओं का लाभ सीधे लाभार्थियों तक पहुँचाना चाहिए। सामाजिक ऑडिट और जनभागीदारी को बढ़ावा देकर अनुसूचित क्षेत्रों में स्वायत्त परिषदें (पाँचवीं और छठी अनुसूची) को सशक्त बनाना चाहिए। वनाधिकार अधिनियम 2006 के अंतर्गत जनजातियों के भूमि एवं वन अधिकारों को सुरक्षित करना चाहिए।

## 8.7 अनुसूचित जाति एवं जनजाति हेतु शैक्षिक सुविधाएँ एवं योजनाएँ (Educational Facilities and Schemes for SC & ST)

भारतीय संविधान ने शिक्षा को प्रत्येक नागरिक का मौलिक अधिकार घोषित किया है, परन्तु अनुसूचित जाति (SC) एवं अनुसूचित जनजाति (ST) के लिए यह केवल अधिकार ही नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और समान अवसर की प्राप्ति का माध्यम भी है। केन्द्र एवं राज्य सरकारों ने विभिन्न योजनाओं एवं नीतिगत पहलों के माध्यम से विशेष सुविधाएँ प्रदान की हैं जो निम्नलिखित है –

1. **शैक्षिक सुविधाएँ**

**(क) आरक्षण नीति: -** संविधान में SC/ST के लिए शिक्षा एवं रोजगार दोनों में आरक्षण का प्रावधान किया गया है। वर्तमान समय में उच्च शिक्षा संस्थानों में 15% सीटें SC तथा 7.5% सीटें ST छात्रों के लिए आरक्षित हैं। यह प्रावधान उनके सामाजिक-शैक्षिक पिछड़ेपन को संतुलित करने का प्रयास है। शिक्षा संस्थानों (विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों) में SC/ST विद्यार्थियों के लिए प्रवेश में आरक्षण और तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा संस्थानों में भी आरक्षण की व्यवस्था की गई है।

**(ख) नि: शुल्क एवं रियायती शिक्षा: -** प्राथमिक स्तर पर नि: शुल्क शिक्षा एवं पाठ्यपुस्तकें, गणवेश और स्टेशनरी नि: शुल्क उपलब्ध कराई जाती है।

**(ग) छात्रावास सुविधा:** -SC/ST विद्यार्थियों के लिए अलग से छात्रावासों का निर्माण किया गया है। भोजन एवं आवास की सुविधाएँ न्यूनतम शुल्क पर उपलब्ध है।

**(घ) विशेष विद्यालय एवं आवासीय संस्थाएँ**

**आश्रम पद्धति विद्यालय :** विशेष रूप से दूर-दराज़ के जनजातीय क्षेत्रों में बच्चों को निःशुल्क शिक्षा, भोजन एवं आवास उपलब्ध कराने के लिए।

**कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय :** ग्रामीण व पिछड़े क्षेत्रों की SC/ST बालिकाओं के लिए संचालित।

**नवोदय विद्यालय व एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय :** इनमें SC/ST छात्रों के लिए विशेष प्राथमिकता होती है।

**(इ.) उच्च शिक्षा हेतु वित्तीय सुविधा:**-राष्ट्रीयकृत बैंकों के माध्यम से शिक्षा ऋण (Education Loan) पर ब्याज में छूट। केंद्र सरकार द्वारा "टॉप-क्लास एजुकेशन स्कीम फॉर SC/ST" के अंतर्गत देश के प्रमुख उच्च शिक्षण संस्थानों में नामांकित छात्रों की पूरी फीस का वहन। पाठ्यपुस्तकों, लैपटॉप और अध्ययन सामग्री हेतु सहायता। छात्रावास व परिवहन भत्ते। नि:शुल्क पुस्तकों, वेशभूषा और स्टेशनरी का वितरण। SC/ST छात्रों के लिए कोचिंग योजनाएँ ताकि वे प्रतियोगी परीक्षाओं में भाग ले सकें। विदेश में अध्ययन हेतु छात्रवृत्तियाँ।

**2. शैक्षिक योजनाएँ**

भारत सरकार एवं राज्य सरकारें अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उन्नति के लिए अनेक योजनाएँ संचालित करती हैं। इनका उद्देश्य उन्हें मुख्यधारा की शिक्षा से जोड़ना, शिक्षा प्राप्त करने में आने वाली आर्थिक एवं सामाजिक बाधाओं को दूर करना तथा समान अवसर उपलब्ध कराना है। ये योजनाएं निम्न हैं -

**(क) छात्रवृत्ति योजनाएँ**

**प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना :** यह योजना प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर SC/ST विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने हेतु बनाई गई है। कक्षा 1 से 10 तक के SC/ST विद्यार्थियों हेतु ।

**पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना :** यह कक्षा 11 से लेकर उच्च शिक्षा तक। उच्च माध्यमिक से लेकर स्नातक, स्नातकोत्तर एवं शोध स्तर तक की शिक्षा में SC/ST छात्रों को दी जाती है। इसके अंतर्गत ट्यूशन फीस, हॉस्टल फीस, पुस्तक भत्ता एवं अन्य खर्चों की प्रतिपूर्ति की जाती है।

**राष्ट्रीय स्तर की मेरिट आधारित छात्रवृत्तियाँ :** मेधावी SC/ST विद्यार्थियों के लिए। जैसे कि "नेशनल फेलोशिप फॉर SC/ST" जो उच्च शिक्षा और शोध में प्रवेश को बढ़ावा देती है।

**3. कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना (KGBV):-**6वीं से 12वीं तक की बालिकाओं के लिए आवासीय विद्यालय। विशेष रूप से उन जिलों में जहाँ महिला साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से कम है।

**4. राजीव गांधी राष्ट्रीय बालिका माध्यमिक शिक्षा योजना (RGNBGES):** अनुसूचित जाति एवं जनजाति की बालिकाओं को कक्षा 9-12 तक पढ़ाई हेतु सहायता। छात्रावास, वेशभूषा और छात्रवृत्ति की सुविधा।

**5. बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ अभियान:** अनुसूचित जाति एवं जनजाति समुदाय की बालिकाओं को प्रोत्साहन। शिक्षा के साथ सामाजिक दृष्टिकोण बदलने पर बल।

**6. सर्व शिक्षा अभियान** व **समग्र शिक्षा अभियान** के अंतर्गत SC/ST बच्चों की शिक्षा पर विशेष बल।

**7. मिड-डे मील योजना** – विद्यालय आने के लिए प्रेरित करना और पोषण सुनिश्चित करना।

8. **पोषक छात्रावास योजना:-** एससी/एसटी छात्राओं के लिए नि:शुल्क आवास, भोजन और पुस्तकालय। विशेषकर ग्रामीण व आदिवासी क्षेत्रों की बालिकाओं हेतु।

**(ख) कोचिंग योजनाएँ**

प्रतियोगी परीक्षाओं जैसे UPSC, SSC, बैंकिंग, इंजीनियरिंग, मेडिकल आदि के लिए **नि**:शुल्क कोचिंग। निजी कोचिंग संस्थानों में दाखिले हेतु आर्थिक सहायता।

**(ग) उच्च एवं व्यावसायिक शिक्षा हेतु योजनाएँ -**

**1. राजीव गांधी राष्ट्रीय फैलोशिप** – राजीव गांधी फेलोशिप (UGC के अंतर्गत SC/ST छात्राओं हेतु)। SC/ST छात्रों को शोध व पीएच.डी. करने हेतु । पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति योजनाएँ (PG/Ph.D. स्तर तक)। उच्च शिक्षा संस्थानों जैसे IIT, IIM, केंद्रीय विश्वविद्यालयों, राज्य विश्वविद्यालयों तथा मेडिकल कॉलेजों में SC/ST छात्रों के लिए निर्धारित आरक्षण। फीस में रियायतें एवं विशेष छात्रवृत्ति प्रावधान। अनुसंधान कार्यों के लिए "राजीव गांधी नेशनल फेलोशिप" जैसी योजनाएँ । आईटीआई (Industrial Training Institutes) एवं पॉलीटेक्निक कॉलेजों में SC/ST छात्रों के लिए विशेष सीटें आरक्षित। कौशल विकास मिशन (Skill India Mission) के अंतर्गत निशुल्क प्रशिक्षण व रोजगारपरक कोर्स। नर्सिंग, फार्मेसी, टीचिंग, कृषि एवं तकनीकी शिक्षा के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम । उच्च एवं व्यावसायिक शिक्षा के लिए की गई ये योजनाएं समाज के वंचित वर्गों को केवल पढ़ने-

लिखने तक ही नहीं बल्कि रोजगार, शोध एवं उद्यमिता तक पहुँचने का अवसर देती हैं। इन योजनाओं के कारण SC/ST समुदाय के छात्रों की संख्या विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में निरंतर बढ़ रही है। शिक्षा के उच्च स्तर तक पहुँचने से इन समुदायों में आत्मविश्वास, आर्थिक स्वावलंबन एवं सामाजिक सम्मान की भावना मजबूत हो रही है।

**2. नेशनल ओवरसीज स्कॉलरशिप** – विदेशों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए।

**4. प्रशासनिक एवं नीतिगत प्रयास**

**1. अनुसूचित जाति एवं जनजाति उप-योजना (SCSP एवं TSP)** – शिक्षा, स्वास्थ्य और विकास के लिए अलग बजट प्रावधान। पाठ्यपुस्तकों, लैपटॉप और अध्ययन सामग्री हेतु सहायता। छात्रावास व परिवहन भत्ते । नि:शुल्क पुस्तकों, वेशभूषा और स्टेशनरी का वितरण। SC/ST छात्रों के लिए कोचिंग योजनाएँ ताकि वे प्रतियोगी परीक्षाओं में भाग ले सकें। विदेश में अध्ययन हेतु छात्रवृत्तियाँ।

**2. पंचवर्षीय योजनाओं** में विशेष प्रावधान ।

**3. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अवसर:** SC/ST छात्रों के लिए विदेश में अध्ययन हेतु विशेष छात्रवृत्ति योजनाएँ। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद (ICCR) एवं मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा वैश्विक शिक्षा विनिमय कार्यक्रमों में प्राथमिकता।

## 8.8 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत अनुसूचित जाति एवं जनजाति हेतु शैक्षिक सुविधाएँ (Educational facilities for SC/ST under National Education Policy 2020)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारत की शिक्षा व्यवस्था में ऐतिहासिक सुधार का दस्तावेज है। इसमें समान अवसर, सामाजिक न्याय एवं समावेशी शिक्षा को विशेष महत्व दिया गया है। अनुसूचित जाति एवं जनजाति के छात्रों के लिए यह नीति एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर सिद्ध होती है। NEP 2020 SC/ST विद्यार्थियों को शिक्षा की मुख्यधारा में लाने हेतु छात्रवृत्ति, विशेष शैक्षिक क्षेत्र, डिजिटल शिक्षा, मातृभाषा आधारित शिक्षण, उच्च शिक्षा में अवसर, कौशल विकास और शिक्षक प्रशिक्षण जैसी अनेक सुविधाएँ प्रदान करता है । इससे शिक्षा में समानता, सामाजिक न्याय और अवसरों की वृद्धि सुनिश्चित की जा सकेगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में SC/ST हेतु शैक्षिक सुविधाएँ निम्नलिखित हैं -

**1. समान एवं समावेशी शिक्षा: -** SC/ST तथा अन्य वंचित समूहों के लिए शिक्षा को समान व न्यायसंगत बनाने पर विशेष बल दिया गया है । "विशेष शैक्षिक क्षेत्र" (Special Education Zones) स्थापित करने की योजना ताकि पिछड़े समुदायों को शिक्षा के लिए अतिरिक्त सुविधा मिल सके।

**2. प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा में प्रावधान: -** शिक्षा का माध्यम कक्षा 5 तक मातृभाषा/स्थानीय भाषा रखने की सुविधा, ताकि SC/ST बच्चे अपनी भाषा में आसानी से सीख सकें। पिछड़े व आदिवासी क्षेत्रों में विद्यालयों का बुनियादी ढाँचा मजबूत करने और विद्यालयों में छात्रवृत्ति योजनाएँ और मिड-डे मील योजना जैसी सुविधाएँ ताकि आर्थिक रूप से कमजोर छात्र पढ़ाई जारी रख सकें। शिक्षा छोड़ने की दर (Dropout Rate) कम करने के लिए विशेष कार्यक्रम पर बल दिया गया है ।

**3. उच्च शिक्षा में अवसर: -** विश्वविद्यालयों एवं कॉलेजों में SC/ST छात्रों के लिए आरक्षण व्यवस्था यथावत रहेगा। पिछड़े क्षेत्रों में मॉडल कॉलेज व उच्च शिक्षा संस्थान स्थापित करने की योजना। SC/ST छात्रों को छात्रवृत्ति, फीस में रियायत और आर्थिक सहयोग उपलब्ध कराने का प्रावधान। उच्च शिक्षा में प्रवेश और अनुसंधान कार्यों में उनकी संख्या बढ़ाने हेतु विशेष ध्यान देने का सुझाव दिया गया है।

**4. आर्थिक सहयोग एवं छात्रवृत्ति: -** SC/ST छात्रों के लिए केन्द्र एवं राज्य सरकार की छात्रवृत्ति योजनाओं को और अधिक प्रभावी बनाना। वंचित वर्गों के विद्यार्थियों को शिक्षा सामग्री, यूनिफॉर्म, पुस्तकें और अन्य सुविधाएँ निःशुल्क या रियायती दर पर उपलब्ध कराना है।

**5. तकनीकी एवं डिजिटल शिक्षा:** -SC/ST छात्रों को डिजिटल शिक्षा से जोड़ने के लिए National Educational Technology Forum (NETF) की स्थापना। ग्रामीण व आदिवासी क्षेत्रों में डिजिटल लाइब्रेरी और ऑनलाइन शिक्षा की सुविधा उपलब्ध कराना। तकनीकी साधनों के माध्यम से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सभी तक पहुँचाना अनिवार्य है।

**6. शिक्षक प्रशिक्षण एवं संवेदनशीलता: -** शिक्षकों को SC/ST विद्यार्थियों की सामाजिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विशेष प्रशिक्षण देना। विद्यालयों में भेदभाव खत्म करने और समान व्यवहार सुनिश्चित करने पर बल दिया गया है।

**7. कौशल विकास एवं व्यावसायिक शिक्षा: --** SC/ST विद्यार्थियों को स्वरोजगार और उद्यमिता की ओर अग्रसर करने के लिए कौशल विकास कार्यक्रम। कक्षा 6 से ही व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education) की सुविधा। हस्तशिल्प, कला और स्थानीय रोजगारोन्मुख कौशलों को शिक्षा में सम्मिलित करना।

**8. भारतीय ज्ञान परंपरा और स्थानीय भाषाओं का संरक्षण: -** SC/ST समुदायों की भाषाओं और लोकपरंपराओं को शिक्षा में स्थान देना। उनकी सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखते हुए मुख्यधारा की शिक्षा से जोड़ने का सुझाव दिया गया है।

अनुसूचित जातियों और जनजातियों की शिक्षा के लिए आरक्षण, छात्रवृत्ति, विशेष विद्यालय, कोचिंग योजनाएँ और उच्च शिक्षा हेतु सहायता अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन योजनाओं ने SC/ST विद्यार्थियों के शैक्षिक स्तर में उल्लेखनीय वृद्धि की है, यद्यपि अभी भी इनकी पहुँच और क्रियान्वयन को अधिक प्रभावी बनाने की आवश्यकता बनी हुई है।

## अपनी प्रगति जाँचें (Check your progress)

**1.** अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए प्रथम आरक्षण व्यवस्था किसने लागू की थी?

(क) डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

(ख) महात्मा गांधी

(ग) डॉ. भीमराव आंबेडकर

(घ) जवाहरलाल नेहरू

**2. सत्य-असत्य पहचानिए :**

**(क).** अनुसूचित जाति एवं जनजाति के छात्रों के लिए केवल प्राथमिक स्तर पर ही छात्रवृत्ति उपलब्ध है।

**(ख)** शिक्षा नीति 2020 का उद्देश्य अनुसूचित जाति एवं जनजाति समुदाय को मुख्यधारा की शिक्षा से जोड़ना है।

**3.** NEP 2020 में SC/ST विद्यार्थियों के लिए तकनीकी एवं डिजिटल सशक्तिकरण हेतु क्या प्रावधान हैं?

## 8.10 सारांश (Summary)

अनुसूचित जाति एवं जनजाति भारतीय समाज का अभिन्न हिस्सा हैं। इनके विकास के बिना राष्ट्र का समग्र विकास संभव नहीं है। यद्यपि संविधान एवं सरकार ने इनकी उन्नति हेतु कई योजनाएँ लागू की हैं, फिर भी सामाजिक, शैक्षिक एवं आर्थिक चुनौतियाँ अभी भी इनके सामने विद्यमान हैं। जबकि शिक्षा के क्षेत्र में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए विविध सरकारी योजनाएँ जैसे छात्रवृत्ति, आरक्षण, विशेष विद्यालय, आवासीय विद्यालय तथा कोचिंग योजनाएँ चलाई गई। साथ ही, उच्च शिक्षा एवं व्यावसायिक शिक्षा हेतु अनुसूचित जाति/जनजाति छात्रों को विशेष प्रोत्साहन, शुल्क में रियायत, संस्थानों में आरक्षित सीटें तथा शोध हेतु वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई गई। महिला शिक्षा एवं सशक्तिकरण को भी योजनाओं का विशेष केन्द्र बनाया गया है। कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना, बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ, तथा आवासीय छात्रावास योजनाओं ने अनुसूचित जाति एवं जनजाति बालिकाओं को शिक्षा की मुख्यधारा से जोड़ने में योगदान दिया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भी अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए शिक्षा में समान अवसर, गुणवत्तापूर्ण अधिगम, मातृभाषा में शिक्षा, डिजिटल पहुँच और विशेष छात्रवृत्तियों का प्रावधान सुनिश्चित किया है। अतः स्पष्ट है कि शिक्षा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बहुआयामी विकास का आधार है। निरंतर योजनाओं, नीतियों और सुधारों के माध्यम से ही इनके जीवन में वास्तविक परिवर्तन लाया जा सकता है।

## 8.11 शब्दावली (Glossary)

**1. अनुसूचित जाति (Scheduled Castes)** – भारतीय संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त वे जातियाँ जो ऐतिहासिक रूप से सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़ी रही हैं।

**2. अनुसूचित जनजाति (Scheduled Tribes)** – वे समुदाय जो परम्परागत रूप से जंगलों एवं दूरस्थ क्षेत्रों में निवास करते हैं तथा सांस्कृतिक एवं सामाजिक दृष्टि से विशिष्ट पहचान रखते हैं।

**5. आवासीय विद्यालय (Residential School)** – ऐसे विद्यालय जहाँ छात्र शिक्षा के साथ-साथ निवास, भोजन एवं अन्य सुविधाएँ भी प्राप्त करते हैं।

**7. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020)** –भारत सरकार की नवीनतम शिक्षा नीति, जिसका उद्देश्य गुणवत्तापूर्ण, समावेशी एवं बहुआयामी शिक्षा सुनिश्चित करना है।

## 8.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Exercise Questions)

1. (ग) डॉ. भीमराव आंबेडकर
2 . (क) असत्य (ख ) सत्य
3. NEP 2020 में SC/ST विद्यार्थियों के लिए तकनीकी एवं डिजिटल सशक्तिकरण - डिजिटल लाइब्रेरी, ऑनलाइन शिक्षा, ओपन लर्निंग सिस्टम तथा "National Educational Technology Forum (NETF)" की स्थापना की गई है ।

## 8.13 संदर्भ सूची (Reference)

1. अग्गरवाल, जे. सी. (2015). भारतीय शिक्षा और समस्याएँ। नई दिल्ली : आर्य बुक डिपो।
2. चौधरी, रामनारायण (2018). भारतीय समाज एवं शिक्षा। जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
3. शर्मा, ओ. पी. (2016). समकालीन भारतीय शिक्षा। दिल्ली : विवेक पब्लिकेशन।
4. गुप्ता, वी. (2017). समावेशी शिक्षा एवं विशेष आवश्यकता वाले शिक्षार्थी। नई दिल्ली : शारदा प्रकाशन।
5. सिंह, एच. (2014). भारतीय संविधान एवं शिक्षा। आगरा : लक्ष्मी नारायण प्रकाशन।
6. NCERT (2020). National Education Policy 2020. नई दिल्ली : भारत सरकार।
7. Government of India (2015). Schemes for Scheduled Castes and Scheduled Tribes. नई दिल्ली : Ministry of Social Justice and Empowerment.
8. UNESCO (2019). Education and Social Inclusion. पेरिस : UNESCO Publication.

## 8.14 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. अनुसूचित जाति एवं जनजाति की परिभाषा दीजिए। आरक्षण व्यवस्था का उद्देश्य क्या है?
2. अनुसूचित जाति एवं जनजाति की शिक्षा में आने वाली प्रमुख बाधाओं का वर्णन कीजिए।
3. सरकार द्वारा SC/ST के लिए चलाए जा रहे शैक्षिक सुधार कार्यक्रमों की विवेचना कीजिए।
5. शिक्षा नीति 2020 में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए सुझाए गए सुधारात्मक उपायों पर प्रकाश डालिए।

# इकाई- 9 पदानुक्रम की समस्याऐं, अनुसूचित जातियाँ, अल्पसंख्यक एवं महिलाऐं (Problems of Hierarchy, Scheduled Castes, Minorities and Women)


**9.1 प्रस्तावना**

**9.2 उद्देश्य**

**9.3 पदानुक्रम की अवधारणा**

**9.4 पदानुक्रम का अर्थ एवं परिभाषा**

**9.5 पदानुक्रम के प्रकार**

- **9.5.1 सामाजिक पदानुक्रम**
- **9.5.2 आर्थिक पदानुक्रम**
- **9.5.3 राजनीतिक पदानुक्रम**
- **9.5.4 धार्मिक पदानुक्रम**
- **9.5.5 शैक्षिक पदानुक्रम**
- **9.5.6 लैंगिक पदानुक्रम**
- **अपनी प्रगति जानिये**

**9.6 भारतीय जाति व्यवस्था में पदानुक्रम का स्वरूप**

- **9.6.1 अनुसूचित जातियाँ और पदानुक्रम**
- **9.6.2 पदानुक्रम में अनुसूचित जातियों की समस्याएँ**
- **9.6.3 पदानुक्रम और आधुनिक भारत**

**9.7 पदानुक्रम में अल्पसंख्यकों की समस्याएँ**

- **9.7.1 सामाजिक पदानुक्रम और अल्पसंख्यकों का मनोवैज्ञानिक प्रभाव**

**9.8 पदानुक्रम में महिलाओं की समस्याएँ**

- **9.8.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की स्थिति**
- **9.8.2 पदानुक्रम में महिलाओं की प्रमुख समस्याएँ**

**9.9 सारांश**

**9.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**

**9.11 संदर्भग्रन्थ सूची**

9.12 निबन्धात्मक प्रश्न

## 9.1 प्रस्तावना

भारतीय समाज एक बहुआयामी और विविधताओं से युक्त समाज है, जिसमें जाति, वर्ग, धर्म, लिंग, भाषा और क्षेत्रीय असमानताएँ गहराई से विद्यमान हैं। समाज में विद्यमान पदानुक्रम (Hierarchy) की व्यवस्था ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक असमानताओं को जन्म दिया है। इस पदानुक्रम ने कहीं ना कहीं विशेष रूप से अनुसूचित जातियों, अल्पसंख्यकों और महिलाओं को सामाजिक मुख्यधारा से अलग-थलग करने का कार्य किया है । भारत में यद्यपि संविधान ने समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व का अधिकार प्रदान किया है, फिर भी सामाजिक संरचना में निहित भेदभावपूर्ण परंपराएँ आज भी समाज के वंचित वर्गों को समान अवसरों से वंचित करती हैं।

यद्यपि पदानुक्रम सामाजिक संगठन का एक स्वाभाविक रूप है, किन्तु जब यह असमानता और भेदभाव का आधार बन जाता है, तब यह सामाजिक न्याय और लोकतांत्रिक मूल्यों के लिए गंभीर चुनौती प्रस्तुत करता है। भारतीय संदर्भ में यह पदानुक्रम विशेषतः **जाति व्यवस्था, वर्ग व्यवस्था, लैंगिक असमानता** और **धार्मिक भेदभाव** के रूप में विकसित हुआ है। इसी क्रम में **अनुसूचित जातियाँ, अल्पसंख्यक समूह** और **महिलाएँ** इस पदानुक्रमित संरचना के सबसे निचले पायदान पर रही हैं। सदियों से चली आ रही सामाजिक असमानताओं ने इन्हें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और शैक्षिक रूप से हाशिए पर पहुँचा दिया। अनुसूचित जातियाँ जातिगत भेदभाव और अस्पृश्यता की शिकार रहीं, अल्पसंख्यक समुदाय धार्मिक पहचान के कारण उपेक्षा और असुरक्षा से जूझते रहे, जबकि महिलाओं को पितृसत्तात्मक सोच ने सामाजिक रूप से गौण बना दिया। संविधान निर्माताओं ने समानता, स्वतंत्रता और न्याय के सिद्धांतों को इन असमानताओं के उन्मूलन के लिए अपनाया तथा अनुसूचित जातियों, जनजातियों, अल्पसंख्यकों और महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान किए। फिर भी, आज भी भारतीय समाज में पदानुक्रम की जड़ें कहीं न कहीं बनी हुई हैं, जो समानता और सामाजिक एकता के मार्ग में बाधा उत्पन्न करती हैं।

अतः इस अध्याय में हम अध्ययन करेंगे कि किस प्रकार पदानुक्रम ने भारतीय समाज में अनुसूचित जातियों, अल्पसंख्यकों और महिलाओं की स्थिति को प्रभावित किया है, उनकी प्रमुख समस्याएँ क्या हैं।

## 9.2 उद्देश्य :

इस इकाई के अध्ययन के बाद शिक्षार्थी-

- शिक्षार्थी पदानुक्रम के अर्थ, अवधारणा तथा पदानुक्रम के प्रकारों को समझ सकेंगे।
- शिक्षार्थी भारतीय जाति व्यवस्था के स्वरूपों का अवलोकन कर सकेंगे।
- शिक्षार्थी भारतीय जाति व्यवस्था की समस्याओं से परिचित होंगे।

- शिक्षार्थी भारतीय जाति व्यवस्था के अर्न्तगत **महिलाओं की स्थिति का मूल्यांकन कर सकेंगे।**

## 9.3 पदानुक्रम (Hierarchy) की अवधारणा

मानव समाज स्वभावतः संगठनप्रिय और संरचनात्मक होता है। हर समाज में व्यक्ति, वर्ग, जाति, लिंग, धर्म, भाषा और आर्थिक स्थिति के आधार पर एक निश्चित व्यवस्था विकसित होती है, जिसे "पदानुक्रम" कहा जाता है। पदानुक्रम समाज में ऊँच-नीच, अधिकार और प्रतिष्ठा का क्रम निर्धारित करता है। यह सामाजिक संरचना (Social Structure) का एक प्रमुख तत्व है जो व्यक्तियों और समूहों के बीच संबंधों को नियंत्रित करता है। भारतीय समाज में यह पदानुक्रम विशेष रूप से **जाति व्यवस्था, वर्ग व्यवस्था, लिंग आधारित असमानता** और **धार्मिक भेदभाव** के रूप में धीरे धीरे विकसित हुआ और और इस वर्ग संरचना को बढाने मे राजनीति दलों की प्रमुख भूमिका से भी नकारा नहीं जा सकता है। यद्यपि यह सामाजिक संगठन का एक रूप है, किन्तु जब यह कभी कभी भेदभाव और असमानता का आधार बन जाता है, तो सामाजिक न्याय, समानता और लोकतंत्र के सिद्धांतों के लिए चुनौती बन जाता है।

## 9.4 पदानुक्रम का अर्थ एवं परिभाषा-

**पदानुक्रम (Hierarchy)** का अर्थ है— एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था जिसमें व्यक्तियों या समूहों की स्थिति वर्ग संरचना के आधार पर निर्धारित होती है। यह किसी समाज में शक्ति, प्रतिष्ठा, धन, या जाति के अनुसार क्रमबद्ध होती है। भारतीय समाज में यह अवधारणा मुख्यतः **जाति व्यवस्था** के रूप में विकसित हुई। इस व्यवस्था में समाज को उच्च और निम्न जातियों में विभाजित किया गया, जिससे सामाजिक असमानता और भेदभाव की जड़ें गहरी हुई।

"Hierarchy" शब्द ग्रीक भाषा के *'Hieros'* (पवित्र) और *'Arche'* (शासन) से मिलकर बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है "पवित्र शासन"। सामाजिक संदर्भ में इसका अर्थ है —"एक ऐसी संगठित व्यवस्था जिसमें समाज के सदस्यों की स्थिति, भूमिका, अधिकार और प्रतिष्ठा एक क्रम (Order) में निर्धारित होती है।" पदानुक्रम किसी समाज के **मूल्यों (Values)** और **मान्यताओं (Norms)** पर आधारित होता है। यह केवल सामाजिक ही नहीं बल्कि **राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक और शैक्षिक** संरचनाओं में भी दिखाई देता है।

विभिन्न समाजशास्त्रियों ने पदानुक्रम को अलग-अलग दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है —

1. **ऑगस्ट कॉम्ट (Auguste Comte)** के अनुसार —
   "समाज एक ऐसी संरचना है जिसमें व्यक्ति और संस्थाएँ एक निश्चित क्रम में संगठित रहती हैं, जहाँ कुछ को अधिक अधिकार और प्रतिष्ठा प्राप्त होती है।"

2. **मैक्स वेबर (Max Weber)** के अनुसार —
   "पदानुक्रम शक्ति और अधिकार के वितरण का ढाँचा है, जो यह निर्धारित करता है कि कौन निर्णय लेगा और कौन उनका पालन करेगा।"
3. **एमिल दुर्खीम (Émile Durkheim)** के अनुसार —
   "समाज में पदानुक्रम सामाजिक विभाजन (Division of Labour) का परिणाम है, जहाँ कार्यों और भूमिकाओं का वितरण असमान रूप से किया जाता है।"
4. **भारतीय परिप्रेक्ष्य में**, पदानुक्रम का तात्पर्य उस व्यवस्था से है जिसमें जाति, धर्म, लिंग या वर्ग के आधार पर लोगों को उच्च और निम्न दर्जों में बाँटा गया है।

## 9.5 पदानुक्रम के प्रकार

पदानुक्रम विभिन्न आधारों पर विभाजित किया जा सकता है। प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं —

### 9.5.1 सामाजिक पदानुक्रम (Social Hierarchy)

यह समाज में व्यक्तियों की स्थिति और प्रतिष्ठा का क्रम है। इसमें जाति, वर्ग, लिंग, भाषा और धर्म जैसी विशेषताएँ महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

- भारत में जाति व्यवस्था इसका प्रमुख उदाहरण है। **जातिगत पदानुक्रम** : ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र – चार वर्णों की व्यवस्था।
- आधुनिक समाजों में वर्ग आधारित असमानता सामाजिक पदानुक्रम को दर्शाती है।

### 9.5.2 आर्थिक पदानुक्रम (Economic Hierarchy)

यह धन और संसाधनों के वितरण पर आधारित होती है। समाज में धनी, मध्यमवर्गीय और गरीब वर्गों का निर्माण इसी से होता है।

- पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में आर्थिक पदानुक्रम सबसे स्पष्ट होता है।

### 9.5.3 राजनीतिक पदानुक्रम (Political Hierarchy)

राजनीतिक सत्ता और अधिकारों के वितरण में ऊँच-नीच की व्यवस्था।
उदाहरण: सरकार में मंत्री, सचिव, अधिकारी और सामान्य नागरिकों के स्तर पर अधिकारों का क्रम।

### 9.5.4 धार्मिक पदानुक्रम) Religious Hierarchy)

धर्म के क्षेत्र में पुजारी, संत, भक्त या अनुयायियों के बीच का क्रम।

- उदाहरण: चर्च में पादरी, बिशप, पोप का क्रम।
- हिंदू धर्म में ब्राह्मणों को धार्मिक रूप से सर्वोच्च स्थान प्राप्त रहा है।

### 9.5.5 शैक्षिक पदानुक्रम (Educational Hierarchy)

शैक्षणिक संस्थानों में प्रशासनिक और अकादमिक स्तरों पर पदों की श्रेणी जैसे —प्रोफेसर, एसोसिएट प्रोफेसर, असिस्टेंट प्रोफेसर, छात्र आदि। साथ ही, ज्ञान और योग्यता के स्तर पर भी एक पदानुक्रम निर्मित होता है।

### 9.5.6 लैंगिक पदानुक्रम (Gender Hierarchy)

लैंगिक पदानुक्रम (Gender Hierarchy) का तात्पर्य है — *समाज में स्त्री और पुरुष के बीच शक्ति, सम्मान, अवसर और अधिकारों में असमानता का ढाँचा।* यह व्यवस्था प्रायः *पितृसत्तात्मक (Patriarchal)* समाज पर आधारित होती है, जहाँ पुरुष को श्रेष्ठ, निर्णयकर्ता और नियंत्रणकर्ता माना जाता है, जबकि महिला को *गौण, आश्रित और आज्ञाकारी* समझा जाता है। प्राचीन भारतीय समाज में स्त्री को देवी, ज्ञान और शक्ति का प्रतीक माना गया — *सरस्वती, लक्ष्मी और दुर्गा* के रूप में उसकी पूजा की गई। **जबकि मनुस्मृति** में उल्लेख है — "पिता रक्षति कौमारे, पति रक्षति यौवने, पुत्र रक्षति वार्धके।" अर्थात स्त्री जीवन भर किसी न किसी पुरुष के संरक्षण में रहती है। यह वाक्य लैंगिक पदानुक्रम का धार्मिक-सांस्कृतिक आधार प्रस्तुत करता है।

**अपनी प्रगति जानिये :**

अ. "Hierarchy" शब्द किन दो शब्दों से मिलकर बना है एवं उसका अर्थ बताइये।

ब. "पदानुक्रम शक्ति और अधिकार के वितरण का ढाँचा है, जो यह निर्धारित करता है कि कौन निर्णय लेगा और कौन उनका पालन करेगा।" पदानुक्रम की यह परिभाषा निम्नलिखित में से किसने दी ?

स. पदानुक्रम के विभिन्न प्रकार बताइये।

## 9.6 भारतीय जाति व्यवस्था में पदानुक्रम का स्वरूप

भारतीय समाज की जाति व्यवस्था में चार प्रमुख वर्णों – **ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र** – की संरचना ने सामाजिक पदानुक्रम को जन्म दिया। इनके अतिरिक्त वर्ण व्यवस्था से बाहर रहने वाले लोग – जिन्हें *अवर्ण* कहा गया – समाज के सबसे निचले पायदान पर रखे गए। यही वर्ग आगे चलकर **अनुसूचित जातियाँ** कहलाया।

यह पदानुक्रम धर्म, जन्म, पेशा और सामाजिक संपर्कों तक सीमित नहीं था बल्कि उसने व्यक्ति के पूरे जीवन – जैसे भोजन, विवाह, शिक्षा, मंदिर-प्रवेश, जल-स्रोतों के उपयोग आदि पर नियंत्रण स्थापित कर दिया। इससे एक **सामाजिक दूरी (Social Distance)** और **बहिष्कार (Exclusion)** की परंपरा विकसित हुई, जिसने अनुसूचित जातियों को मुख्यधारा से अलग-थलग कर दिया।

भारतीय समाज प्राचीन काल से ही विविधताओं, जटिलताओं और सामाजिक संरचनाओं का समाज रहा है। इस समाज की एक प्रमुख विशेषता रही है—**सामाजिक पदानुक्रम (Social Hierarchy)**। यह व्यवस्था व्यक्ति को उसके जन्म, जाति, कर्म और स्थिति के आधार पर सामाजिक स्थान प्रदान करती है। इसी पदानुक्रम के परिणामस्वरूप कुछ वर्ग समाज के शीर्ष पर पहुँच गए जबकि कुछ को सामाजिक रूप से हाशिए पर धकेल दिया गया। इन्हीं वंचित और शोषित वर्गों में **अनुसूचित जातियाँ (Scheduled Castes)** आती हैं, जिन्हें परंपरागत रूप से "दलितया "हरिजन" कहा गया। " भारतीय पदानुक्रम की यह व्यवस्था केवल सामाजिक असमानता का प्रतीक नहीं बल्कि एक गहराई से जड़ें जमाए **धार्मिक और आर्थिक शोषण तंत्र** की परिणति है।

### 9.6.1 अनुसूचित जातियाँ और पदानुक्रम-

अनुसूचित जातियों की उत्पत्ति के संबध में पश्चिम के सभी एवं भारत के अधिकांश विद्वानों का मत है कि भारत में आर्यो के ने से पहले 3000 ई0 पूर्व में यहां के आदिवासी द्रविणों या अनार्यों की एक बहुत उंची सभ्यता देश के पशिमोत्तर भाग में विद्यमान थी । इसे ही इतिहास में सिंधु घाटी या मोहनजोदडो और हडप्पा सभ्यता कहा गया है । जब आर्यों का दबाव बढा तो ये अनार्य दक्षिण मे जाकर रहने लगे और आज ये तमिल कहलाये । ऋग्वेद मे दास और दस्यु शब्द बहुत बार आए हैं । अथर्व वेद के आरंम्भ में शूद्र का उल्लेख जनजाति के रूप मे किया गया है । **अवन्तिका प्रसाद मम्मट** ने अपनी पुस्तक 'वेदकालीन जातियां: राजाओं और संस्कृतियों की खोज' में शूद्र शब्द का अर्थ विभिन्न प्रमाणों के आधार पर निम्नप्रकार किया है :

1. शूद्र वह है जो कि शोक मे दौड गया है या दुखी हो गया है ।
2. शूद्र वह है जो खिन्न हो गया है ।
3. शूद्र वह है जो गवांर है तथा शारीरिक श्रम के लिए बना है ।

छांदोग्य उपनिषद् (5.10.7) में कहा गया है कि जो अच्छे काम (पुण्य) करते हैं, वे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य जैसी जातियों को प्राप्त होते हैं और जो पाप करते करते हैं, वे कुत्ते, सूअर या शूद्र जाति को प्राप्त होते हैं ।

अनुसूचित जातियाँ वे समुदाय हैं जिन्हें ऐतिहासिक रूप से **अस्पृश्यता (Untouchability), सामाजिक भेदभाव, आर्थिक शोषण** और **राजनीतिक उपेक्षा** का सामना करना पड़ा। मनुस्मृति और अन्य धर्मशास्त्रों ने सामाजिक श्रेणीकरण को धार्मिक औचित्य प्रदान किया और शूद्रों तथा अछूतों को नीच माना। मनुस्मृति (मनु. 10. 129.) मे कहा गया है कि शूद्र को धन एकत्र करने की सुविधा नही होनी चाहिए अन्यथा यह ब्राह्मण को दु:ख देगा । इससे समाज में गहरी **ऊँच-नीच की भावना** पैदा हुई और यह भावना पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती रही। **डॉ. भीमराव अंबेडकर** ने इसे "सामाजिक दासता की प्रणाली" कहा। उनका मानना था कि जाति व्यवस्था के माध्यम से भारतीय समाज ने एक ऐसा **असमानता पर आधारित पदानुक्रम** बनाया जो व्यक्ति की स्वतंत्रता और समानता के सिद्धांतों के विरुद्ध था।

सदियों से चले आ रहे पदानुक्रम ने अनुसूचित जातियों के भीतर **हीन भावना (Inferiority Complex)**, **भय** और **सामाजिक असुरक्षा** की भावना पैदा की। एक ऐसा मानसिक ढांचा निर्मित हुआ जिसमें व्यक्ति स्वयं को "निम्न" मानने लगा और उच्च वर्ग के प्रभुत्व को स्वीकार कर लिया। डॉ. अंबेडकर ने इसे "Slavery of the Mind" कहा अर्थात् ऐसी मानसिक गुलामी जिसमें व्यक्ति अपनी स्थिति को स्वाभाविक मान लेता है।

### 9.6.2 पदानुक्रम में अनुसूचित जातियों की समस्याएँ

### (Problems of Scheduled Castes within Hierarchical Social Structure)

भारतीय समाज की सबसे विशिष्ट और जटिल विशेषता उसकी **जाति व्यवस्था (Caste System)** है। यह एक ऐसा सामाजिक **पदानुक्रम (Hierarchy)** है जिसमें व्यक्ति की सामाजिक स्थिति जन्म से निर्धारित होती है। इस व्यवस्था में समाज को ऊँच और नीच वर्गों में बाँटा गया, जहाँ ऊँची जातियाँ अधिकार, शिक्षा और सम्मान की अधिकारी मानी गईं, वहीं नीची जातियाँ, जिन्हें बाद में **अनुसूचित जातियाँ (Scheduled Castes)** कहा गया, सामाजिक रूप से बहिष्कृत और आर्थिक रूप से शोषित रहीं।

अनुसूचित जातियाँ भारत की जनसंख्या का लगभग **16–17%** हिस्सा हैं, किन्तु लंबे समय तक इन्हें **'अस्पृश्य', 'शूद्र', 'दलित'** आदि अपमानजनक नामों से पुकारा गया। पदानुक्रम की इसी जाति-आधारित संरचना ने इन समुदायों को सामाजिक मुख्यधारा से दूर रखा। संविधान निर्माताओं ने इस असमानता को दूर करने के लिए **विशेष संवैधानिक प्रावधानों** और **आरक्षण नीति** को लागू किया, परंतु आज भी ये वर्ग सामाजिक समानता और आत्मसम्मान के संघर्ष में हैं। डॉ. भीमराव अम्बेडकर एवं महात्मा गांधी हमेशा से ही जाति आधारित पदानुक्रमिक व्यवस्था के विरोधी थे । गेल ओमवेट की पुस्तक 'दलित और प्रजातांन्त्रिक क्रान्ति' जिसका हिन्दी अनुवाद नरेश भार्गव ने किया है, में लिखते हैं कि अम्बेडकर के विचार सदैव क्रमबद्ध नहीं थे । यही बात मार्क्स के बारे में भी कही जा सकती है । न ही जिस समस्या में वे उलझे हुए थे, उसका कोई समाधान उनके पास था । लेकिन कुछ विषय तो ढूंढे ही जा सकते हैं –

पहला- अपने लोगों यानी दलितों की आवश्यकताओं के प्रति गैर- समझौतावादी प्रतिबद्धता सम्पूर्ण बनने के लिए यह आवश्यक है कि सम्पूर्ण जाति व्यवस्था को और उसमें निहित ब्राह्म्णों की श्रेष्ठता का ध्वंस किया जाना चाहिए ।

दूसरा- भारत की यर्थाथता के प्रति प्रतिबद्धता, पर भारत की ऐसी यथार्थता, जिसकी पहचान के आधार ऐतिहासिक- सांस्कृति विश्लेषण, हिन्दू पहचान के न हों । इसका सम्बन्ध लोकप्रिय जन यथार्थता के आधार पर होने चाहिए ।

तीसरा- एक दृढ विश्वास कि यदि जाति व्यवस्था को हटाना है तो हिन्दू धर्म का छोडना पडेगा और उसके स्थान पर किसी वैकल्पिक धर्म स्वीकार करना पडेगा ।

चौथा- एक विशद तार्किकता, हिन्दू अंन्धविश्वासों पर आक्रमण के समय यह अधिक ज्वलंत रहा। बौद्ध धर्म जिसको वे अधिक युक्तिपूर्ण मानते थे, को भी उन्होंने कठोर कसौटी पर कसा। यह मुक्तिदायक धर्मविज्ञानी स्वरूप था।

अम्बेडकर का राजनीतिक परिवेश जिसका सम्बन्ध एक सुदृढ स्वायत दलित आन्दोलन से था। आन्दोलन ने लगातार सामाजिक तथा आर्थिक रूप से शोषितों को एक सूत्र में बांधने की कोशिश की। दलितों को यह संगठन कांग्रेस के विकल्प के रूप में तैयार किया गया। पूंजीवादियों तथा ब्रह्मणों के विरूद्ध यह एक अद्भूत मंच था।

पदानुक्रम में अनुसूचित जातियों की प्रमुख समस्याओं को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझ सकते हैं -

**क.** सामाजिक भेदभाव और अस्पृश्यता

अनुसूचित जातियाँ लंबे समय तक **अस्पृश्यता** और **सामाजिक बहिष्कार** की शिकार रहीं।

- उन्हें मंदिरों में प्रवेश की अनुमति नहीं थी।
- ऊँची जातियों के लोगों के साथ भोजन या जल ग्रहण करने पर सामाजिक दंड दिया जाता था।
- वे गाँवों के बाहर बस्तियों में रहने को विवश थीं।
- अंतर्जातीय विवाह या सामाजिक मेलजोल पर कठोर प्रतिबंध लगाए गए।

यह स्थिति "सामाजिक अपवर्जन (Social Exclusion)" का उदाहरण है, जिसने इन समुदायों की आत्मसम्मान और आत्मविश्वास को गंभीर रूप से प्रभावित किया।

**ख.** आर्थिक शोषण

पदानुक्रम के कारण अनुसूचित जातियों को **भूमिहीन** और **निर्भर वर्ग** बना दिया गया।

- वे परंपरागत रूप से दूसरों के खेतों में मजदूरी करने को बाध्य रहीं।
- औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के बाद भी उनके लिए स्थायी रोजगार के अवसर कम रहे।
- आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था में भी वे "मजदूर वर्ग" तक सीमित हैं।

इस आर्थिक निर्भरता ने उन्हें गरीबी, ऋणग्रस्तता और शोषण के चक्र में बाँध दिया।

**ग.** शैक्षिक पिछड़ापन

शिक्षा किसी भी समाज की प्रगति का आधार है, लेकिन पदानुक्रम ने अनुसूचित जातियों को शिक्षा से दूर रखा।

- प्राचीन काल में गुरुकुल प्रणाली में उन्हें प्रवेश नहीं मिलता था।
- औपनिवेशिक काल में भी शैक्षणिक संस्थान ऊँची जातियों के नियंत्रण में रहे।
- स्वतंत्रता के बाद भी शिक्षण संस्थानों में भेदभाव, उपेक्षा और सामाजिक असमानता बनी रही।

हालाँकि संविधान ने शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाया, परंतु सामाजिक पूर्वाग्रह और आर्थिक कठिनाइयों के कारण शिक्षा की पहुँच अभी भी सीमित है।

**घ.** राजनीतिक उपेक्षा और प्रतिनिधित्व की कमी

संविधान ने अनुसूचित जातियों के लिए **राजनीतिक आरक्षण** की व्यवस्था की है, परंतु राजनीतिक दलों में वास्तविक भागीदारी आज भी सीमित है।

- निर्णयकारी पदों पर उच्च जातियों का प्रभुत्व बना हुआ है।
- ग्राम पंचायतों, विधानसभा और संसद में आरक्षण के बावजूद अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधियों को "सांकेतिक" समझा जाता है।
- नीतियों के निर्माण में उनकी आवाज़ अक्सर अनसुनी रह जाती है।

इससे यह वर्ग लोकतंत्र में "प्रतिनिधि" तो है, परंतु "सशक्त" नहीं।

**ङ.** सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक दमन

पदानुक्रम ने अनुसूचित जातियों के भीतर **हीनता-बोध** और **सामाजिक डर** पैदा किया।

- उनके रीति-रिवाजों, पहनावे और बोली को "नीचा" समझा गया।
- सांस्कृतिक योगदानों को मान्यता नहीं मिली।
- लंबे समय तक उनके भीतर यह मानसिकता बनी रही कि वे "सेवक वर्ग" हैं।

डॉ. भीमराव अंबेडकर ने इस मनोवैज्ञानिक दासता को "Slavery of the Mind" कहा है।

### 9.6.3 पदानुक्रम और आधुनिक भारत

आधुनिक भारत में संविधान ने समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व का वादा किया है। **अनुच्छेद 14 से 17** तक समानता के अधिकार, **अनुच्छेद 46** में अनुसूचित जातियों के शैक्षणिक और आर्थिक हितों की रक्षा का निर्देश है।
फिर भी —

- जातीय भेदभाव अब भी अप्रत्यक्ष रूप में मौजूद है,
- सामाजिक सम्मान और अवसरों की बराबरी अभी अधूरी है,
- आरक्षण नीति को लेकर समाज में द्वंद्व की स्थिति बनी रहती है।

इस प्रकार, पदानुक्रम की जड़ें भले कमजोर पड़ी हों, किंतु पूरी तरह समाप्त नहीं हुई हैं।

## 9.7 पदानुक्रम में अल्पसंख्यकों की समस्याएँ-

भारत एक **बहुधार्मिक, बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक** देश है। यहाँ अनेक धर्म, समुदाय और भाषिक समूह सह-अस्तित्व में रहते हैं। परंतु भारतीय समाज की ऐतिहासिक संरचना **पदानुक्रम (Hierarchy)** पर आधारित रही है — जहाँ कुछ समूह सामाजिक रूप से श्रेष्ठ और कुछ हीन माने गए। यह पदानुक्रम केवल जाति आधारित नहीं रहा, बल्कि धार्मिक, सांस्कृतिक और भाषाई स्तर पर भी इसका प्रभाव देखा गया।

इसी क्रम में **अल्पसंख्यक समुदाय (Minorities)** — जैसे ईसाई, सिख, बौद्ध, पारसी, मुस्लिम आदि — अक्सर सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से उपेक्षित रहे हैं। इस उपेक्षा का कारण न केवल जनसंख्या में उनकी संख्या की कमी है, बल्कि समाज में प्रचलित सत्ता संरचना और बहुसंख्यक दृष्टिकोण भी है।

### 9.7.1 पदानुक्रम और अल्पसंख्यक की अवधारणा

सामाजिक पदानुक्रम एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें समाज के विभिन्न वर्गों को **ऊँच-नीच, श्रेष्ठ-कनिष्ठ,** या **सत्ता-निर्भरता** के आधार पर क्रमबद्ध किया जाता है। यह धार्मिक, आर्थिक या सांस्कृतिक मूल्यों से प्रेरित होता है। संयुक्त राष्ट्र संघ (UN) के अनुसार **अल्पसंख्यक की परिभाषा-** "अल्पसंख्यक वह समुदाय है जो किसी देश की कुल जनसंख्या का अपेक्षाकृत छोटा भाग होता है और जिसकी धर्म, भाषा या संस्कृति बहुसंख्यक समूह से भिन्न होती है।" भारत में **अनुच्छेद 29 और 30** अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करते हैं, ताकि वे अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति का संरक्षण कर सकें।

### 9.7.2 भारत में अल्पसंख्यक समुदायों की शैक्षिक स्थिति

**क-** मुस्लिम समुदाय

- सच्चर समिति (2006) की रिपोर्ट के अनुसार, देश में मुस्लिमों की साक्षरता दर लगभग 59% थी, जो राष्ट्रीय औसत से काफी कम थी।
- उच्च शिक्षा में मुस्लिम छात्रों का नामांकन केवल 4% के आसपास रहा।
- विद्यालय स्तर पर छात्राओं का ड्रॉपआउट दर अधिक था।
- ग्रामीण मुस्लिम परिवारों में लड़कियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता।

**ख-** ईसाई समुदाय

- ईसाई मिशनरियों के प्रयासों के कारण उनकी शैक्षिक स्थिति अपेक्षाकृत बेहतर रही है।
- ईसाई विद्यालयों और कॉलेजों ने शिक्षा के प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

**ग-** सिख और जैन समुदाय

- सिख और जैन समुदायों की साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से अधिक है।
- परंतु ग्रामीण पंजाब या हरियाणा के सिख किसानों में तकनीकी और उच्च शिक्षा की पहुँच सीमित है।

**घ-** बौद्ध और पारसी समुदाय

- बौद्ध समुदाय, विशेषतः नव-बौद्ध (दलित बौद्ध), शैक्षिक रूप से अभी भी संघर्षरत हैं।
- पारसी समुदाय संख्या में छोटा होने के बावजूद उच्च शिक्षा और तकनीकी शिक्षा में अग्रणी है।

## 9.8 पदानुक्रम में महिलाओं की समस्याएँ (Problems of Women in Hierarchical Society)

भारतीय समाज एक बहुस्तरीय पदानुक्रमित (Hierarchical) संरचना वाला समाज है, जिसमें जाति, वर्ग, धर्म और लिंग के आधार पर सामाजिक स्थिति निर्धारित होती रही है। इस संरचना में महिलाओं की स्थिति सदैव निम्न रही है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक महिलाओं को समाज में गौण भूमिका दी गई है। वे पितृसत्तात्मक व्यवस्था (Patriarchal System) के अधीन रही हैं, जहाँ पुरुष को सत्ता, निर्णय और संसाधनों पर नियंत्रण प्राप्त रहा। यह पदानुक्रम महिलाओं के लिए केवल सामाजिक ही नहीं, बल्कि आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक असमानताओं का भी कारण बना। लैंगिक पदानुक्रम (Gender Hierarchy) में पुरुष को ऊँचे स्थान पर और महिला को निम्न स्थान पर रखा गया। पुरुष को परिवार का मुखिया, निर्णयकर्ता और कमाने वाला माना गया, जबकि महिला को गृहस्थी संभालने, बच्चों की देखभाल और आज्ञाकारिता तक सीमित किया गया। यद्यपि 20वीं शताब्दी में अब स्थिति बदल गयी है, महिलाऐं अब प्रत्यके क्षेत्र मे पुरूषों की तुलना मे अधिक दक्ष एवं आत्मनिर्भर होने लगी हैं ।

### 9.8.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की स्थिति

वैदिक काल में महिलाओं को अपेक्षाकृत सम्मानजनक स्थिति प्राप्त थी। वे शिक्षा प्राप्त कर सकती थीं और यज्ञों में भाग लेती थीं। उत्तरवैदिक एवं मध्यकालीन काल में धार्मिक रूढ़ियों और सामाजिक परंपराओं ने महिलाओं की स्थिति को निम्न कर दिया। बाल विवाह, सती प्रथा, पर्दा प्रथा, बहुपत्नी प्रथा आदि ने महिलाओं को पुरुष के अधीन बना दिया। औपनिवेशिक काल में सामाजिक सुधार आंदोलनों — राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, महात्मा फुले, सावित्रीबाई फुले और महात्मा गांधी जैसे नेताओं के प्रयासों से महिलाओं की शिक्षा, विधवा पुनर्विवाह और मताधिकार जैसे अधिकारों की नींव पड़ी।

### 9.8.2 पदानुक्रम में महिलाओं की प्रमुख समस्याएँ

**(1)** सामाजिक असमानता

पितृसत्तात्मक समाज में महिला को द्वितीय श्रेणी का नागरिक माना गया। सामाजिक पदानुक्रम ने यह धारणा बनाई कि पुरुष श्रेष्ठ हैं और महिलाएँ पराश्रित। इस असमानता ने महिला के आत्मसम्मान और विकास को बाधित किया।

**(2)** शैक्षिक पिछड़ापन

लंबे समय तक महिलाओं को शिक्षा से वंचित रखा गया। ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी बालिकाओं की शिक्षा पर सीमाएँ हैं।
साक्षरता दर में लैंगिक अंतर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। शिक्षा की कमी के कारण महिलाओं को रोजगार, निर्णय प्रक्रिया और सामाजिक भागीदारी से वंचित रहना पड़ा।

**(3)** आर्थिक निर्भरता

महिला की आर्थिक स्थिति परिवार और पति पर निर्भर रही है। ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में महिलाओं की श्रम भागीदारी पुरुषों की तुलना में कम है।
महिलाओं के काम को "अनपेड लेबर" (बिना वेतन वाला श्रम) माना जाता है, जिससे उनकी आर्थिक पहचान कमजोर होती है।

**(4)** राजनीतिक प्रतिनिधित्व की कमी

राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी सीमित रही है। संसद और विधानसभाओं में महिलाओं का प्रतिशत अभी भी बहुत कम है। हालाँकि पंचायती राज व्यवस्था में 33% आरक्षण ने स्थिति में सुधार लाने का प्रयास किया है, लेकिन वास्तविक सशक्तिकरण अभी दूर है।

**(5)** घरेलू हिंसा और सामाजिक उत्पीड़न

घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा, यौन उत्पीड़न, बाल विवाह, मानव तस्करी जैसी समस्याएँ महिलाओं के खिलाफ हिंसा के रूप में मौजूद हैं। यह सब पितृसत्तात्मक सोच और पदानुक्रमित समाज के कारण है जहाँ पुरुष को "नियंत्रक" और महिला को "अधीन" माना जाता है।

**(6)** रोज़गार में भेदभाव

काम के समान अवसरों के बावजूद महिलाओं को कम वेतन और सीमित पद प्राप्त होते हैं। कॉर्पोरेट या सरकारी क्षेत्र में ऊँचे पदों पर पुरुषों का प्रभुत्व अभी भी अधिक है।
“ग्लास सीलिंग इफेक्ट” (Glass Ceiling Effect) महिलाओं के करियर को सीमित कर देता है।

**(7)** सांस्कृतिक और धार्मिक सीमाएँ

कई धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताएँ महिलाओं को 'शुद्धता', 'मर्यादा' और 'परंपरा' के नाम पर नियंत्रित करती हैं।
इससे महिला की स्वतंत्रता और व्यक्तित्व विकास पर रोक लग जाती है।

**(8)** रोज़गार में भेदभाव और 'ग्लास सीलिंग'

महिलाओं को औपचारिक क्षेत्र (Corporate, Administration, Education, Politics) में समान अवसर तो मिलते हैं, परंतु ऊँचे पदों तक पहुँचने में अदृश्य बाधाएँ होती हैं, जिसे "Glass Ceiling Effect" कहा जाता है।

पदानुक्रमित समाज में महिलाओं की समस्याएँ केवल सामाजिक भेदभाव नहीं, बल्कि **संरचनात्मक अन्याय** का परिणाम हैं। जब तक समाज की सोच "पुरुष श्रेष्ठता" से "समानता और साझेदारी" की ओर नहीं बदलेगी, तब तक वास्तविक परिवर्तन संभव नहीं। महिला समाज की निर्माता है, यदि उसे समान अवसर, शिक्षा, और सम्मान दिया जाए,
तो वही समाज को न्याय, समानता और प्रगति के मार्ग पर ले जा सकती है।

## 9.9 सारांश:

मानव समाज स्वभावतः संगठनात्मक एवं संरचनात्मक होता है, जिसमें व्यक्ति की स्थिति जाति, वर्ग, लिंग, धर्म, भाषा और आर्थिक स्थिति के आधार पर निर्धारित होती है। इस सामाजिक व्यवस्था को **पदानुक्रम (Hierarchy)** कहा जाता है। यह समाज में ऊँच-नीच, अधिकार और प्रतिष्ठा का क्रम तय करता है। भारतीय समाज में यह व्यवस्था विशेषतः जाति, वर्ग, धर्म और लिंग आधारित असमानता के रूप में विकसित हुई है।

**अनुसूचित जातियाँ (Scheduled Castes)** भारतीय सामाजिक पदानुक्रम की सबसे निचली पायदान पर स्थित समूह रही हैं। इन्हें ऐतिहासिक रूप से अस्पृश्यता, सामाजिक बहिष्कार और आर्थिक शोषण का सामना करना पड़ा। मनुस्मृति जैसी धर्मशास्त्रों ने इस भेदभाव को धार्मिक आधार दिया। परिणामस्वरूप ये वर्ग शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक भागीदारी में पीछे रह गए। संविधान ने समानता का अधिकार और आरक्षण नीति लागू की, परंतु सामाजिक असमानता और भेदभाव आज भी अप्रत्यक्ष रूप से जारी हैं।

**अल्पसंख्यक समुदायों (Minorities)** जैसे मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध, पारसी आदि को भी पदानुक्रमित समाज में उपेक्षा और असमानता का सामना करना पड़ा। सच्चर समिति की रिपोर्ट (2006) के अनुसार, मुस्लिम समुदाय की साक्षरता और आर्थिक स्थिति राष्ट्रीय औसत से कम रही है। अल्पसंख्यक वर्ग सामाजिक असुरक्षा, शैक्षिक पिछड़ेपन, राजनीतिक प्रतिनिधित्व की कमी और सांस्कृतिक असहिष्णुता जैसी समस्याओं से जूझ रहा है। **महिलाएँ** पदानुक्रम में सदैव गौण स्थिति में रही

हैं। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में पुरुष को श्रेष्ठ और महिला को आश्रित माना गया। परिणामस्वरूप महिलाओं को शिक्षा, रोजगार और निर्णय प्रक्रिया से वंचित रखा गया। घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा, यौन उत्पीड़न, आर्थिक निर्भरता और राजनीतिक उपेक्षा जैसी समस्याएँ उनके जीवन का हिस्सा बनीं।

हालाँकि स्वतंत्रता के बाद संविधान ने समानता, स्वतंत्रता और सम्मान के अधिकार प्रदान किए, फिर भी सामाजिक पदानुक्रम की गहरी जड़ें आज भी समाज में मौजूद हैं। अनुसूचित जातियाँ, अल्पसंख्यक और महिलाएँ — ये तीनों वर्ग अब भी सामाजिक न्याय, अवसरों की समानता और आत्मसम्मान की दिशा में संघर्षरत हैं। पदानुक्रम समाज की संगठनात्मक आवश्यकता तो है, परंतु जब यह असमानता और भेदभाव का माध्यम बन जाता है, तब यह लोकतंत्र और समानता के सिद्धांतों के लिए चुनौती बन जाता है। जब तक समाज में बराबरी, सहिष्णुता और साझेदारी की भावना विकसित नहीं होती, तब तक सच्चा सामाजिक न्याय संभव नहीं।

## 9.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर -

अ. “Hierarchy” शब्द ग्रीक भाषा के *‘Hieros’* (पवित्र) और *‘Arche’* (शासन) से मिलकर बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है “पवित्र शासन”

ब. **मैक्स वेबर**

**स. सामाजिक पदानुक्रम, आर्थिक पदानुक्रम, राजनीतिक पदानुक्रम, धार्मिक पदानुक्रम, शैक्षिक पदानुक्रम एवं लैगिंक पदानुक्रम ।**

## 9.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची:

1. सिंह जगवीर. दलित संघर्ष का यथार्थ, अभय पब्लिकेशन सुभाष पार्क, शाहदरा, दिल्ली।

2. यदुलाल कुसुम, दलित शिक्षा का परिदृश्य, कल्पज पब्लिकेशन, दिल्ली।

3. ओमवेट गेल, दलित और प्रजातान्त्रिक क्रान्ति, रावत पब्लिकेशन नई दिल्ली।

4. **शर्मा, के. एल.** *भारतीय समाजशास्त्र : संरचना एवं परिवर्तन।* नई दिल्ली : रावत पब्लिकेशन्स, 2007

5. **देवेन्द्र, के. (संपा.)** *सामाजिक असमानता और विकास।* नई दिल्ली : सेज पब्लिकेशन्स, 2010

6. **गुरू, गौतम** *दलित विमर्श : दृष्टि और दिशा* दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2018

7. **चक्रवर्ती, उषा** *भारतीय महिला और समाज* नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2015

8. **कुमार, अरुण** *भारतीय समाज में अल्पसंख्यक वर्ग की स्थिति* । नई दिल्ली : एन.सी.ई.आर.टी., 2014

## 9.11 निबंधात्मक प्रश्न:

1. पदानुक्रम का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए एवं पदानुक्रम के प्रकारों को स्पष्ट कीजिए।

2. पदानुक्रम में अलपसंख्यकों की स्थिति का वर्णन कीजिए।

3. पदानुक्रम में अनुसूचित जनजातियों की समस्याओं पर प्रकाश डालिए।

4. पदानुक्रम में महिलाओं की स्थिति पर एक लेख लिखिए।

# UNIT-10-आपराधिक न्याय का प्रशासन एवं सुधार : आपराधिक न्याय का प्रशासन, साधारण न्यायालय, विशेष न्यायालय तथा जिला मानवाधिकार न्यायालय (Administration of Criminal Justice and Reform: Administration of Criminal Justice, Ordinary Courts, Special Courts & District Human Right Court)

**10.1 प्रस्तावना (Introduction)**

**10.2 उद्देश्य (Objective)**

**10.3 आपराधिक न्याय प्रणाली (Criminal Justice System)**

**10.3.1 आपराधिक न्याय प्रणाली के उद्देश्य**

**10.3.2 आपराधिक न्याय प्रणाली के प्रमुख घटक**

**10.4 साधारण न्यायालय (Ordinary Courts)**

**10.4.1 साधारण न्यायालय की विशेषताएं**

**10.4.2 साधारण न्यायालय के कार्य**

**10.5 विशेष न्यायालय (Special Courts)**

**10.5.1 विशेष न्यायालयों के प्रकार**

**10.5.2 विशेष न्यायालयों की विशेषताएं**

**10.6 जिला मानवाधिकार न्यायालय (District Human Right Court)**

**10.6.1 जिला मानवाधिकार न्यायालयों के उद्देश्य**

**10.6.2 जिला मानवाधिकार न्यायालयों की विशेषताएं**

**10.7 स्व मूल्यांकन हेतु प्रश्न**

**10.8 सारांश (Summary)**

**10.9 मूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर**

**10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References)**

**10.11 निबंधात्मक प्रश्न (Long Answar Type Questions)**

## 10.1 प्रस्तावना (Introduction)

आपराधिक न्याय का प्रशासन किसी भी राष्ट्र की न्याय व्यवस्था का एक सबसे महत्वपूर्ण अंग है, क्योंकि यह न केवल हमारे समाज में विधि और व्यवस्था बनाए रखने का माध्यम है बल्कि अपराधियों को दंडित करने, पीड़ितों को उचित न्याय दिलाने तथा राज्य के नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करने का भी एक सशक्त साधन है। भारतीय संविधान ने न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुता को राज्य की मूलभूत संकल्पनाओं के रूप में स्वीकार किया है और इन्हीं मूल्यों की पूर्ति के लिए आपराधिक न्याय प्रणाली को विकसित किया गया है। आपराधिक न्याय के प्रशासन में विभिन्न अंगों जैसे पुलिस, अभियोजन तंत्र, न्यायालय और सुधारात्मक संस्थानों के समन्वित प्रयासों पर आधारित है, परंतु न्यायालय इन सभी के केंद्र माने जाते हैं क्योंकि न्याय का अंतिम वितरण न्यायपालिका के माध्यम से ही संभव होता है। भारत में साधारण न्यायालय, विशेष न्यायालय तथा मानवाधिकार न्यायालय इस प्रशासनिक तंत्र को क्रियान्वित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आपराधिक न्याय का प्रशासन और सुधार केवल अपराधियों को दंडित करने तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि यह अपराध की रोकथाम, पीड़ितों की पुनर्स्थापना, अपराधियों के पुनर्वास और समाज में विधि के शासन को सुदृढ़ बनाने की दिशा में भी कार्य करना चाहिए। इस प्रकार साधारण न्यायालय न्याय की मूलभूत गारंटी प्रदान करते हैं, विशेष न्यायालय अपराधों के जटिल स्वरूप से निपटते हैं और मानवाधिकार न्यायालय नागरिकों की गरिमा एवं अधिकारों की रक्षा करते हैं। इन सबके बीच आपराधिक न्याय प्रणाली का मूल उद्देश्य यही है कि समाज में न्याय, शांति और सुरक्षा स्थापित हो, अपराध नियंत्रण में आए और विधि के शासन में जनता का विश्वास बना रहे। अतः यह स्पष्ट है कि आपराधिक न्याय का प्रशासन एवं सुधार न केवल विधिक आवश्यकता है बल्कि लोकतांत्रिक राज्य की स्थिरता, प्रगति और नागरिक कल्याण की आधारशिला भी है।

## 10.2 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्र –

- ✓ छात्र आपराधिक न्याय प्रणाली के बारें में जानकारी रख सकेंगें,
- ✓ छात्र आपराधिक न्याय प्रणाली के घटकों के बारे में जान सकेंगें

- ✓ छात्र आपराधिक न्याय का प्रशासन के बारे में जान सकेंगें,
- ✓ छात्र साधारण न्यायालयों के बारें में जान सकेंगे,
- ✓ छात्र साधारण न्यायालयों के कार्यों के बारे में जान सकेंगे,
- ✓ छात्र विशेष न्यायालयों के बारे में जानकारी रख सकेंगें,
- ✓ छात्र विशेष न्यायालयों के प्रकार के बारे में जान सकेंगें,
- ✓ छात्र जिला मानवाधिकार न्यायालयों के बारे में जानकारी रख सकेंगें,
- ✓ छात्र जिला मानवाधिकार न्यायालयों की विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे,

## 10.3 आपराधिक न्याय प्रणाली (Criminal Justice System)

किसी भी सभ्य और लोकतांत्रिक समाज की मूलभूत आवश्यकता न्याय है। समाज में शांति, व्यवस्था और सुरक्षा बनाए रखने के लिए कानून की स्थापना की जाती है, और कानून को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए आवश्यक है कि एक सुदृढ़ या मजबूत आपराधिक न्याय प्रणाली का (Criminal Justice System) अस्तित्व में होना। यह प्रणाली न केवल अपराधियों को दंडित करती है, बल्कि निर्दोषों को अन्याय से बचाती है और समाज में कानून व्यवस्था का शासन सुनिश्चित करती है।

भारतीय संविधान में "न्याय" को सर्वोच्च मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है। संविधान की प्रस्तावना में "सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय" की स्थापना का उद्देश्य स्पष्ट रूप से उल्लिखित है। इसी न्याय की प्राप्ति के लिए आपराधिक न्याय प्रणाली का निर्माण किया गया है।

"आपराधिक न्याय प्रणाली" उन सभी संस्थाओं, प्रक्रियाओं और कानूनों का समूह है जो अपराधों की रोकथाम, जांच, अभियोजन, सुनवाई और दंड की व्यवस्था से संबंधित हैं। अर्थात सरल शब्दों में "अपराध घटित होने के बाद अपराधी की पहचान, गिरफ्तारी, मुकदमा और दंड देने की कानूनी प्रक्रिया को आपराधिक न्याय प्रणाली कहते हैं।" इस आपराधिक न्याय प्रणाली का उद्देश्य केवल दंड देना नहीं, बल्कि समाज में न्याय, समानता और मानवाधिकारों की रक्षा करना भी है।

आपराधिक न्याय प्रणाली एक सामाजिक नियंत्रण का एक साधन है। यह उन सभी एजेंसियों का समूह है जो देश में कानून और व्यवस्था बनाए रखने में सहायता करती हैं। आपराधिक न्याय प्रणाली का उपयोग सामान्यतया समाज में अपराधियों को दंडित करने के लिए किया जाता है ताकि समाज में बढ़ते अपराधों को रोका जा सकें या उनमें नियंत्रण किया जा सके। आपराधिक न्याय प्रणाली लोगों के अधिकारों और स्वतंत्रता की रक्षा करने में मदद करती है।

### 10.3.1 आपराधिक न्याय प्रणाली के उद्देश्य-

आपराधिक न्याय प्रणाली का मुख्य उद्देश्य समाज में न्याय, जन सुरक्षा और सामाजिक व्यवस्था और शांति को बनाए रखना है। यह प्रणाली समाज में अपराधियों को दंडित करने, निर्दोषों व्यक्तियों की रक्षा करने तथा समाज में विधि के शासन को सुदृढ़ करने का कार्य करती है। आपराधिक न्याय प्रणाली का प्रमुख उद्देश्य निम्नवत हैं-

1. **न्याय की स्थापना करना -** आपराधिक न्याय प्रणाली का मुख्य उद्देश्य अपराधी को उचित दंड देकर और निर्दोष व्यक्ति की रक्षा करके समाज में न्याय की भावना बनाए रखना हैं।

2. **अपराधों की रोकथाम करना-** आपराधिक न्याय प्रणाली का उद्देश्य समाज में दंड एवं कानूनी प्रक्रिया के माध्यम से समाज के लोगों को अपराध करने से रोकना और समाज में शांति तथा सद्भाव बनाये रखना हैं।

3. **सामाजिक व्यवस्था बनाए रखना-** कानून के शासन द्वारा समाज में शांति, सुरक्षा और अनुशासन बनाए रखना।

4. **अपराधियों का सुधार करना-** दंड के साथ-साथ सुधारात्मक उपायों द्वारा अपराधियों को समाज के उपयोगी नागरिक बनाना।

5. **निर्दोष व्यक्ति की रक्षा करना-** गलत आरोपों या अन्यायपूर्ण दंड से निर्दोष व्यक्ति की रक्षा करना।

6. **कानून के शासन की प्रतिष्ठा बनाए रखना-** यह सुनिश्चित करना कि सभी नागरिक कानून के अधीन हैं और कोई भी व्यक्ति कानून से ऊपर नहीं है।

7. **पीड़ितों को न्याय दिलाना-** अपराध से पीड़ित व्यक्तियों को न्याय, सुरक्षा और क्षतिपूर्ति उपलब्ध कराना।

8. **मानवाधिकारों की रक्षा करना-** अपराधी, पीड़ित और समाज के सभी पक्षों के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करना।

### 10.3.2 आपराधिक न्याय प्रणाली के प्रमुख घटक-

आपराधिक न्याय प्रणाली (Criminal Justice System) समाज में कानून व्यवस्था बनाए रखने, अपराधों की रोकथाम करने और न्याय सुनिश्चित करने के लिए कार्य करती है। यह प्रणाली कई संस्थागत अंगों के सहयोग से संचालित होती है। भारत में आपराधिक न्याय प्रणाली के मुख्य घटक निम्नलिखित हैं-

1. **पुलिस (Police):** पुलिस अपराध की रोकथाम, जांच, साक्ष्य एकत्र करने और अपराधी को न्यायालय तक पहुंचाने की पहली कड़ी है। इसका मुख्य कार्य अपराध की रोकथाम, जांच और

अपराधी की गिरफ्तारी करना होता है। यह समाज में कानून व्यवस्था बनाए रखने तथा नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

2. **अभियोजन विभाग (Prosecution):** अभियोजन अधिकारी यह सुनिश्चित करता है कि अपराधी के विरुद्ध न्यायालय में उचित साक्ष्य और तर्क प्रस्तुत किए जाएं। यह न्याय प्रक्रिया में राज्य का प्रतिनिधित्व करता है।

3. **न्यायालय (Judiciary):** न्यायालय अपराधों का निर्णय करता है और यह सुनिश्चित करता है कि निर्दोष व्यक्ति को दंड न मिले और दोषी व्यक्ति को उचित सजा दी जाए। यह विधि और संविधान के अनुसार न्याय प्रदान करता है।

4. **सुधारगृह (Correctional Institutions):** जेल या कारागार अपराधियों को सजा देने का ही नहीं, बल्कि उन्हें सुधारने का स्थान भी है। वर्तमान समय में सुधारात्मक न्याय (Reformative Justice) की अवधारणा को अधिक महत्व दिया जा रहा है।

5. **विधि और संविधान (Law and Constitution):** आपराधिक न्याय प्रणाली का संचालन भारतीय संविधान, दंड संहिता (IPC), दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC) और साक्ष्य अधिनियम (Evidence Act) के आधार पर किया जाता है।

## 10.4 साधारण न्यायालय (Ordinary Courts)-

न्याय किसी भी सभ्य समाज की सबसे महत्वपूर्ण नींव होती है। बिना न्याय के समाज में शांति, व्यवस्था और समानता की कल्पना नहीं की जा सकती हैं। भारत जैसे विशाल लोकतांत्रिक देश में न्याय प्रणाली का प्रमुख उद्देश्य नागरिकों को उनके अधिकारों की रक्षा प्रदान करना है। भारतीय संविधान ने न्यायपालिका को स्वतंत्र और सशक्त संस्था के रूप में स्थापित किया गया है। न्याय प्रदान करने के लिए देश में अनेक प्रकार के न्यायालय कार्यरत हैं, जिनमें साधारण न्यायालय (Ordinary Courts) का विशेष स्थान है। ये न्यायालय सामान्य नागरिकों के बीच उत्पन्न विवादों का निवारण करते हैं।

साधारण न्यायालय वे न्यायालय हैं जो आम नागरिकों के लिए न्याय प्राप्ति का प्रमुख साधन होते हैं। ये न्यायालय आपराधिक, दीवानी, राजस्व तथा अन्य प्रकार के सामान्य मामलों की सुनवाई करते हैं। इन्हें "न्यायपालिका की रीढ़" कहा जाता है क्योंकि अधिकांश मामले इन्हीं साधारण न्यायालय के स्तर पर निपट जाते हैं।

**साधारण न्यायालय की संरचना-**

भारत में साधारण न्यायालय की संरचना सामान्यतः निम्न प्रकार होती है-

- **जिला न्यायाधीश (District Judge) का न्यायालय**
- **अपर जिला न्यायाधीश न्यायालय (Additional District Judge)**
- **सिविल जज (Senior Division)**
- **सिविल जज (Junior Division)**

**10.4.1 साधारण न्यायालय की विशेषताएं-**

साधारण न्यायालय किसी भी देश की न्यायपालिका की मूल एवं बुनियादी इकाई होते हैं। भारत के संदर्भ में साधारण न्यायालय वे न्यायालय हैं जो सिविल और आपराधिक दोनों प्रकार के सामान्य एवं प्रारम्भिक मामलों की सुनवाई करते हैं। ये न्यायालय न्याय प्राप्ति को जनता के निकट लाते हैं तथा न्याय व्यवस्था को सरल, प्रभावी एवं सुचारु रूप से संचालित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। साधारण न्यायालयों का गठन भारतीय संविधान, राज्य सरकारों तथा विभिन्न विधिक अधिनियमों के प्रावधानों के अंतर्गत किया जाता है। इन न्यायालयों की निम्नलिखित मुख्य विशेषताएँ हैं जो निम्नवत हैं –

1. **न्यायिक संरचना का आधार-** साधारण न्यायालय भारतीय न्यायपालिका की नींव माने जाते हैं। न्यायिक पिरामिड के निचले स्तर पर स्थित ये न्यायालय ही आम जनता से सीधे जुड़े होते हैं। देश में अधिकतर मुकदमों की सुनवाई और निस्तारण इसी स्तर पर होता है। इस कारण ये न्यायिक प्रणाली को मजबूत आधार प्रदान करते हैं और उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय पर पड़ने वाले भार को भी कम करते हैं।
2. **न्याय तक सरल एवं सुलभ पहुँच-** साधारण न्यायालयों की उपलब्धता हर जिले या तहसील तक होने के कारण सामान्य नागरिक अपने विवादों के समाधान हेतु आसानी से न्याय की मांग कर सकते हैं। ये न्यायालय न्याय को आम जन-मानस तक पहुचाने में सहायता करते हैं। गरीब, ग्रामीण और सीमांत वर्ग के लोग भी बिना अधिक खर्च और समय के अपने मामलों की सुनवाई करवा सकते हैं।
3. **सिविल और आपराधिक दोनों प्रकार के मामलों की सुनवाई-** साधारण न्यायालयों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि ये दो प्रकार के मामलों सिविल तथा आपराधिक मामलों की सुनवाई करते हैं।

   **सिविल (दीवानी) मामले-** इस प्रकार के न्यायालयों में भूमि विवाद, पारिवारिक विवाद, अनुबंध विवाद, संपत्ति संबंधी आदि मामलों की सुनवाई की जाती हैं।

   **आपराधिक (क्रिमिनल) मामले-** इस प्रकार के न्यायालयों में चोरी, हत्या, दुष्कर्म, मारपीट, धोखाधड़ी आदि मामलों की सुनवाई की जाती हैं।
4. **स्थानीय स्तर पर विवाद समाधान-** साधारण न्यायालय सामान्यतः स्थानीय सामाजिक संरचना और संस्कृति को ध्यान में रखते हुए निर्णय देते हैं। साधारण न्यायालयों के न्यायाधीश प्रायः स्थानीय परिप्रेक्ष्य को समझते हैं, जिससे न्यायिक निर्णय अधिक प्रभावी, व्यावहारिक और स्वीकार्य बनते हैं।
5. **न्यायिक भार का संतुलन-** साधारण न्यायालय बड़ी संख्या में मामलों का निपटान करते हैं। यदि ये न्यायालय न हों, तो संपूर्ण भार उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय पर आ जाएगा, जिससे न्याय प्रक्रिया अत्यंत धीमी और जटिल हो जाएगी। साधारण न्यायालय न्यायिक प्रणाली को गति और संतुलन प्रदान करते हैं।
6. **न्याय व्यवस्था में स्थिरता एवं विश्वास बनाए रखना-** साधारण न्यायालयों के माध्यम से लोगों का न्याय व्यवस्था में विश्वास मजबूत होता है। आम नागरिक जानते हैं कि किसी भी विवाद या अपराध की स्थिति में वे स्थानीय या साधारण न्यायालयों का सहारा ले सकते हैं। यह लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण आधार है।

**10.4.2 साधारण न्यायालय के कार्य-**

साधारण न्यायालयों के मुख्य कार्य निम्नवत हैं-

**1.नागरिक विवादों का निपटारा-**

साधारण न्यायालयों का मुख्य कार्य नागरिक विवादों का निपटारा करना होता हैं, नागरिक विवाद वे विवाद होते हैं जो समाज में व्यक्तियों, परिवारों, व्यवसायों या संस्थाओं के बीच अधिकार, दायित्व और संपत्ति से संबंधित होते हैं। इनमें कोई अपराध शामिल नहीं होता हैं बल्कि दो पक्षों के निजी या वैधानिक अधिकारों का प्रश्न होता है। इन विवादों का निपटारा मुख्यतः साधारण न्यायालयों के माध्यम से किया जाता है।

**2.स्थगन आदेश जारी करना-**

नागरिक मामलों में कई बार ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है, जहाँ किसी विवाद के निर्णय होने तक किसी एक पक्ष को कोई भी कार्य करने से रोकना या किसी कार्य को करने का निर्देश देना आवश्यक हो जाता है। ऐसे में न्यायालय द्वारा जो आदेश जारी किया जाता है, उसे स्थगन आदेश कहा जाता है। यह एक न्यायिक आदेश है, जिसे साधारण न्यायालय नागरिक विवादों में जारी करते हैं ताकि किसी पक्ष को अस्थायी या स्थायी हानि से बचाया जा सकें।

**3.प्रतिपूर्ति का निर्धारण-**

नागरिक विवादों में कई बार किसी एक पक्ष को दूसरे पक्ष के कार्य, लापरवाही, अनुबंध उल्लंघन या संपत्ति हानि के कारण नुकसान उठाना पड़ता है। ऐसे मामलों में साधारण न्यायालय का कार्य पीड़ित पक्ष को नुकसान की भरपाई दिलाने के लिए प्रतिपूर्ति निर्धारित करता है। प्रतिपूर्ति वह आर्थिक राशि होती है जो हानि की पूर्ति के लिए दी जाती है।

**4.अपील सुनना-**

साधारण न्यायालयों का नागरिक न्याय व्यवस्था में अपील सुनना एक महत्वपूर्ण अधिकार या कार्य है, जिसके माध्यम से किसी निचली अदालत के निर्णय से असंतुष्ट पक्ष उच्च न्यायालय में पुनः विचार की माँग कर सकता है।

**5.दस्तावेज़ों और साक्ष्यों की जांच-**

साधारण न्यायालयों का कार्य दस्तावेज़ों और अन्य साक्ष्यों की जाँच न्यायिक प्रक्रिया का अत्यंत महत्वपूर्ण चरण है। किसी भी सिविल या आपराधिक विवाद में साधारण न्यायालय तथ्यों की सत्यता निर्धारित करने के लिए प्रस्तुत दस्तावेज़ों, गवाहियों और भौतिक साक्ष्यों का परीक्षण करता है। यह प्रक्रिया न्याय सुनिश्चित करने, सत्य को स्थापित करने और निष्पक्ष निर्णय देने की आधारशिला है।

इस प्रकार साधारण न्यायालय नागरिक अधिकारों की रक्षा, विवादों के समाधान, न्याय की उपलब्धता, और कानून के अनुपालन को सुनिश्चित करते हैं, तथा साधारण न्यायालय समाज में न्याय व्यवस्था की नींव होते हैं और सामाजिक व्यवस्था को संतुलित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

## 10.5 विशेष न्यायालय (Special Courts) –

किसी भी देश की न्याय व्यवस्था तभी प्रभावी और जनकल्याणकारी होती है जब वह सामान्य लोगों को समय पर तथा निष्पक्ष न्याय प्रदान कर सके। भारत जैसे विशाल जनसँख्या वाले देश में बढ़ते मामलों का बोझ, अपराधों की जटिलता और विभिन्न प्रकार के संवेदनशील विषयों के कारण देश में न्यायालयों पर

दबाव बढ़ता गया। इस परिस्थिति में विशेष न्यायालयों (Special Courts) की स्थापना एक महत्वपूर्ण कदम के रूप में सामने आती है। विशेष न्यायालयों का गठन विशिष्ट प्रकार के मामलों की सुनवाई के लिए किया जाता है ताकि त्वरित, विशेषज्ञ तथा व्यवस्थित न्याय सुनिश्चित हो सके।

विशेष न्यायालय वे न्यायालय हैं जो सामान्य न्यायालयों से अलग और स्वतंत्र रूप से किसी विशेष विषय, अपराध या कानून से संबंधित मामलों की सुनवाई करते हैं। ये न्यायालय सामान्यतः किसी विशेष अधिनियम के अंतर्गत गठित किए जाते हैं और इनमें काम करने की प्रक्रिया भी सामान्य अदालतों से भिन्न होती है। इन विशेष न्यायालयों का उद्देश्य देश की न्यायिक प्रक्रिया को अधिक गति देने, विशेषज्ञतापूर्ण और केंद्रित बनाना है ताकि विशेष प्रकार के अपराधों व विवादों में न्याय समयबद्ध रूप से दिया जा सके। उदाहरण के लिए विशेष न्यायालय जैसे-

- POCSO Act के अंतर्गत बाल यौन अपराधों के लिए विशेष अदालतें,
- NIA Act के तहत राष्ट्रीय जांच एजेंसी के मामलों की अदालतें,
- NDPS Act के तहत नशीले पदार्थों से जुड़े मामलों की अदालतें,
- भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की विशेष अदालतें,
- CBI अदालतें आदि

**10.5.1 विशेष न्यायालयों के प्रकार-**

हमारे देश में विभिन्न प्रकार के कानूनों, न्यायिक आवश्यकताओं और सामाजिक परिस्थितियों के आधार पर अनेक प्रकार के विशेष न्यायालय स्थापित किए गए हैं। इनके प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं:

**1-भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम हेतु विशेष न्यायालय-** भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम हेतु निर्मित न्यायालयों का गठन सरकारी अधिकारियों, लोकसेवकों और सार्वजनिक पदों पर कार्यरत व्यक्तियों से संबंधित भ्रष्टाचार के मामलों की सुनवाई हेतु किया गया है। इन अदालतों में प्रायः CBI या ACB द्वारा की गई जांच के आधार पर मामले चलते हैं। इन न्यायालयों का मुख्य उद्देश्य-

- रिश्वतखोरी को रोकना,
- सरकारी तंत्र में पारदर्शिता लाना,
- त्वरित न्याय से भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाना,
- इन अदालतों में सुनवाई अपेक्षाकृत तीव्र और विशेषज्ञ विधिक प्रक्रिया के अनुरूप होती है।

**2- CBI विशेष न्यायालय -**केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (CBI) द्वारा दर्ज किए गए देश भर के मामलों की सुनवाई के लिए अलग अदालतें स्थापित की जाती हैं। इन अदालतों का अधिकार-क्षेत्र प्रायः केंद्रीय स्तर के गंभीर आर्थिक अपराध, आपराधिक साजिश, बैंक धोखाधड़ी, बड़े घोटाले और राजनीतिक महत्व के मामले होते हैं।

इस प्रकार के न्यायालयों की प्रमुख विशेषताएँ निम्नवत हैं-

- जटिल साक्ष्यों और दस्तावेज़ों की वैज्ञानिक जांच का होना,
- विशेषज्ञ न्यायाधीश एवं विधि अधिकारियों की नियुक्ति,
- समयबद्ध सुनवाई का प्रावधान

**3- NIA विशेष न्यायालय -** राष्ट्रीय जांच एजेंसी अधिनियम, 2008 के अंतर्गत गठित NIA विशेष अदालतें उन अपराधों की सुनवाई करती हैं जो देश की राष्ट्रीय सुरक्षा और आतंकवाद से जुड़े होते हैं। इन न्यायालयों में मुख्यतः निम्न प्रकार की घटनाएँ शामिल होती हैं-

- आतंकवादी हमले,
- देशद्रोह सम्बंधी गतिविधियाँ,
- वित्तीय आतंकवाद सम्बंधी गतिविधियाँ,
- अंतरराष्ट्रीय आपराधिक नेटवर्क सम्बंधी गतिविधियाँ आदि

**4- POCSO विशेष न्यायालय -** इस प्रकार के न्यायालयों की स्थापना मुख्यतः बच्चों के साथ यौन शोषण के मामलों की सुनवाई के लिए POCSO विशेष अदालतों की स्थापना की गई है। ये न्यायालय अत्यधिक संवेदनशील और पीड़ित-केन्द्रित दृष्टिकोण अपनाते हैं। इस प्रकार के न्यायालयों में विशेष व्यवस्थाएँ जैसे-

- पीड़ित की पहचान गोपनीय रखना,
- इन-कैमरा ट्रायल,
- बच्चों के लिए मनोवैज्ञानिक सहयोग की व्यवस्था,
- त्वरित सुनवाई (2 माह के भीतर अभियोजन पूरा करने का निर्देश आदि)

**5- फास्ट ट्रैक न्यायालय -** इन प्रकार के न्यायालयों में सन 2000 के बाद से विभिन्न गंभीर अपराधों जैसे बलात्कार, दहेज हत्या, महिला उत्पीड़न और अन्य संवेदनशील मामलों में त्वरित न्याय के लिए फास्ट ट्रैक कोर्ट स्थापित किए गए। इन न्यायालयों में कम समय में निर्णय देना तथा मामलों की प्राथमिकता के आधार पर सुनवाई करना इनका मुख्य कार्य होता हैं।

**6- किशोर न्यायालय / जुवेनाइल जस्टिस बोर्ड-** इन न्यायालयों में 18 वर्ष से कम आयु के बाल अपराधियों (Children in Conflict with Law) की सुनवाई हेतु किशोर न्याय बोर्ड गठित किए गए हैं। इन न्यायालयों में बाल अपराधियों को पुनर्वास एवं सुधारात्मक परामर्श दिया जाता हैं

**7- पारिवारिक न्यायालय-** पारिवारिक न्यायालय भी विशेष प्रकार के न्यायालयों की क्षेणी में आते हैं ये न्यायालय पारिवारिक विवादों का समाधान संवेदनशील और शांतिपूर्ण वातावरण में करने हेतु वर्ष 1984 में परिवार न्यायालय अधिनियम के अंतर्गत गठित की गई।

अतः विशेष न्यायालय वर्तमान समय की न्याय व्यवस्था की एक अनिवार्य आवश्यकता बन चुके हैं। यह न्यायालय न केवल जटिल और संवेदनशील मामलों में त्वरित न्याय प्रदान करती हैं, बल्कि पीड़ितों की सुरक्षा, विशेषज्ञता आधारित निर्णय, और कानून के प्रभावी क्रियान्वयन को भी सुनिश्चित करती हैं। हालांकि संसाधनों व अवसंरचना की चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं, फिर भी इन न्यायालयों की स्थापना न्यायिक प्रणाली में सुधार की दिशा में एक महत्वपूर्ण और सकारात्मक कदम है।

### 10.5.2 विशेष न्यायालयों मुख्य की विशेषताएं -

विशेष न्यायालय वे न्यायालय हैं जिन्हें विशिष्ट मामलों, अपराधों या विधियों के अंतर्गत आने वाली समस्याओं के त्वरित और विशेषज्ञ निपटारे के लिए स्थापित किया जाता है। भारत में बदलती सामाजिक,

आर्थिक एवं अपराध संबंधी परिस्थितियों के अनुसार इन विशेष न्यायालयों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो चुकी है। उनकी प्रमुख विशेषताएँ निम्न प्रकार से हैं-

- **विशिष्ट मामलों की सुनवाई-** विशेष न्यायालय केवल विशिष्ट प्रकार के मामलों जैसे भ्रष्टाचार, आतंकवाद, बाल यौन अपराध, मादक पदार्थ तस्करी आदि की सुनवाई करते हैं।
- **विशेष कानूनों के तहत गठन-** ये अदालतें POCSO Act, NDPS Act, NIA Act, Prevention of Corruption Act आदि विशेष अधिनियमों के अंतर्गत बनाई जाती हैं। ये विशेष न्यायालय इन्ही मामलों की सुनवाई करते हैं।
- **त्वरित न्याय का उद्देश्य-** इन विशेष न्यायालयों का मुख्य उद्देश्य मामलों का तेज, प्रभावी और समयबद्ध निपटारा करना है। जिससे लोगों को त्वरित न्याय मिल सकें।
- **विशेषज्ञ न्यायाधीश-** इन विशेष न्यायालयों में नियुक्त न्यायाधीश संबंधित विषयों में विशेष ज्ञान और अनुभव रखते हैं।
- **सरल एवं लचीली प्रक्रियाएँ-** इन विशेष न्यायालयों में संवेदनशील मामलों की प्रकृति के अनुसार प्रक्रियाएँ सरल, गोपनीय और अनुकूल बनाई जाती हैं।
- **संवेदनशील मामलों का संरक्षण-** इन विशेष न्यायालयों में बच्चों, महिलाओं, किशोरों और परिवार से जुड़े मामलों में विशेष सुरक्षा, गोपनीयता और मनोवैज्ञानिक सहयोग प्रदान किया जाता है।
- **विशेष जांच एजेंसियों के मामलों की सुनवाई-** इन विशेष न्यायालयों में CBI, NIA, ACB जैसी विशेष एजेंसियों द्वारा दर्ज मामलों की सुनवाई की जाती है।
- **आधुनिक तकनीकों का उपयोग-** इन विशेष न्यायालयों में डिजिटल साक्ष्य, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग, फोरेंसिक रिपोर्ट आदि का वैज्ञानिक रूप से उपयोग किया जाता है।
- **कठोर दंड प्रावधान-** इन विशेष न्यायालयों में विशेष कानूनों में सामान्य अदालतों की तुलना में अधिक कठोर दंड और त्वरित प्रक्रिया का प्रावधान होता है।
- **समाज में अपराध नियंत्रण-** इन विशेष न्यायालयों में गंभीर अपराधों पर त्वरित और कठोर कार्रवाई से समाज में कानून का भय और अनुशासन स्थापित होता है।
- **अपील की विशेष व्यवस्था-** इन विशेष न्यायालयों के निर्णयों के विरुद्ध अपील अक्सर उच्च न्यायालय या विशेष अपीलीय मंचों पर की जाती है।

## 10.6 जिला मानवाधिकार न्यायालय-

मानवाधिकार वे मौलिक अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को जन्म से प्राप्त होते हैं। इन अधिकारों का उद्देश्य व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता, समानता और सुरक्षा की रक्षा करना है। लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में मानवाधिकारों की रक्षा अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि इनके उल्लंघन से व्यक्ति और समाज दोनों ही प्रभावित होते हैं।

भारत में मानवाधिकारों की रक्षा और संवर्धन हेतु कई संवैधानिक और विधिक प्रावधान बनाए गए हैं। इन्हीं में से एक सबसे महत्वपूर्ण प्रावधान है जिला मानवाधिकार न्यायालय (District Human Rights Court), जिसका उल्लेख मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 में किया गया है। इन न्यायालयों की स्थापना मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों में त्वरित और प्रभावी न्याय सुनिश्चित करने के उद्देश्य से की जाती है।

जिला मानवाधिकार न्यायालय एक विशेष न्यायालय है, जो विशेष रूप से मानवाधिकारों के उल्लंघन से संबंधित मामलों की सुनवाई हेतु गठित किया जाता है। इनका गठन राज्य सरकार द्वारा किया जाता है और सामान्यतः जिला एवं सत्र न्यायाधीश को इसका न्यायाधीश नामित किया जाता है। जिला मानवाधिकार न्यायालय का मुख्य उद्देश्य है- **"मानवाधिकार उल्लंघन से जुड़े मामलों का त्वरित और निष्पक्ष निपटारा करना।"** जिला मानवाधिकार न्यायालय की स्थापना का मुख्य आधार धारा 30 है। इसके अनुसार-

- राज्य सरकार अधिसूचना जारी कर हर जिले में एक मानवाधिकार न्यायालय स्थापित कर सकती है।
- इन न्यायालयों में न्यायाधीश के रूप में प्रायः जिला एवं सत्र न्यायाधीश कार्य करते हैं।
- इन न्यायालयों में संबंधित मामलों की पैरवी हेतु विशेष लोक अभियोजक की नियुक्ति भी अनिवार्य है।

### 10.6.1 जिला मानवाधिकार न्यायालय के उद्देश्य-

जिला मानवाधिकार न्यायालयों की स्थापना के मुख्य उद्देश्य निम्नवत हैं-

1. मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों का त्वरित निपटारा करना,
2. पीड़ितों को स्थानीय स्तर पर न्याय सुलभ कराना,
3. मानवाधिकारों की प्रभावी सुरक्षा की व्यवस्था करना,
4. कमजोर वर्गों के हितों की रक्षा करना,
5. मानवाधिकार आयोगों की अनुशंसाओं का त्वरित कार्यान्वयन कराना,
6. मानवाधिकार मामलों की विशेषज्ञ व संवेदनशील सुनवाई करना,
7. निर्णयों की गुणवत्ता और प्रभावशीलता बढ़ाना,
8. मानवाधिकार उल्लंघन रोकने हेतु निवारक प्रभाव उत्पन्न करना,
9. न्यायिक प्रणाली का बोझ कम करना,
10. लोकतांत्रिक मूल्यों और संवैधानिक आदर्शों को सुदृढ़ करना.

जिला मानवाधिकार न्यायालय भारत की मानवाधिकार संरक्षण व्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण स्तंभ है। इसका मूल उद्देश्य मानवाधिकार उल्लंघन से जुड़े मामलों का त्वरित, निष्पक्ष और प्रभावी निपटारा करना है। यह न्यायालय समाज में पीड़ितों को सुलभ न्याय प्रदान करते हैं, मानवाधिकार मानकों को व्यवहार में लागू करते हैं और प्रशासनिक तंत्र की जवाबदेही सुनिश्चित करते हैं। हालाँकि इन न्यायालयों को अभी भी कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, परन्तु यदि सरकार इन्हें पर्याप्त संसाधन, प्रशिक्षित कर्मी और कानूनी-संरचनात्मक समर्थन उपलब्ध कराए, तो ये न्यायालय मानवाधिकार संरक्षण के क्षेत्र में अत्यधिक प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं। भारत में मानवाधिकार संरक्षण को मजबूत करने के लिए जिला मानवाधिकार न्यायालयों का सुदृढ़ीकरण एक अनिवार्य तथा अत्यंत आवश्यकता है।

### 10.6.2 जिला मानवाधिकार न्यायालय की प्रमुख विशेषताएँ-

जिला मानवाधिकार न्यायालयों की प्रमुख विशेषताएं निम्नवत हैं-

1. जिला मानवाधिकार न्यायालय विशेष रूप से मानवाधिकार उल्लंघन से संबंधित मामलों की सुनवाई के लिए स्थापित किया जाता है।
2. ये न्यायालय मानवाधिकार मामलों में शीघ्र निर्णय देने हेतु प्राथमिकता आधारित सुनवाई की व्यवस्था होती है।
3. जिला मानवाधिकार न्यायालय जिला स्तर पर होने के कारण आम नागरिकों के लिए न्याय तक पहुंच आसान बनती है।
4. इन न्यायालयों में ऐसे न्यायाधीश और अभियोजक नियुक्त किए जाते हैं जो मानवाधिकार विषयों की संवेदनशीलता और जटिलताओं को समझते हैं।
5. इन न्यायालयों के पास राष्ट्रीय या राज्य मानवाधिकार आयोग द्वारा भेजे गए मामलों पर त्वरित कार्रवाई करने की जिम्मेदारी भी होती है।
6. ये न्यायालय आवश्यकता अनुसार पीड़ित को क्षतिपूर्ति, पुनर्वास और संरक्षण से संबंधित आदेश जारी कर सकते है।
7. इन न्यायालयों में POCSO Act, Bonded Labour Act, SC/ST Act सहित विभिन्न मानवाधिकार से सम्बंधित कानूनों के मामलों की सुनवाई की जाती है।
8. पुलिस, प्रशासन और मानवाधिकार आयोग के साथ मिलकर मानवाधिकार मामलों को सुलझाने में सहयोग करता है।
9. इन न्यायालयों के निर्णयों में मानव गरिमा, समानता और न्याय के सिद्धांतों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाती है।
10. इन न्यायालयों में शिकायत दर्ज कराने से लेकर निर्णय तक की प्रक्रिया सरल, पारदर्शी और पीड़ित-केन्द्रित होती है।

## 10.7 स्व मूल्यांकन हेतु प्रश्न

प्रश्न-1- विशेष न्यायालयों की सबसे प्रमुख विशेषता है-

(A) केवल दीवानी मामलों की सुनवाई (B) सामान्य न्यायालयों से अधिक धीमी प्रक्रिया

(C) त्वरित और विशेषज्ञ न्याय प्रदान करना (D) केवल दस्तावेजी साक्ष्यों पर निर्भर रहना

प्रश्न-2- परिवार न्यायालय किस श्रेणी में आते हैं?

(A) साधारण न्यायालय (B) विशेष न्यायालय

(C) ग्राम न्यायालय (D) उच्च न्यायालय

प्रश्न-3- आपराधिक न्याय प्रणाली का मुख्य उद्देश्य क्या है?

(a) केवल अपराधियों को दंड देना (b) समाज में न्याय, शांति और व्यवस्था स्थापित करना

(c) केवल पुलिस व्यवस्था को नियंत्रित करना (d) केवल अभियोजन प्रक्रिया को संचालित करना

प्रश्न-4- भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली किन प्रमुख कानूनों पर आधारित है?

(a) भारतीय संविधान (b) दंड संहिता (IPC)

(c) दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC) (d) उपरोक्त सभी

प्रश्न-5- जिला मानवाधिकार न्यायालय किस धारा के अंतर्गत स्थापित किए जाते हैं?

(a) धारा 24 (b) धारा 25

(c) धारा 30 (d) धारा 35

## 10.8 सारांश (Summary)-

अतः साधारण न्यायालय, विशेष न्यायालय तथा जिला मानवाधिकार न्यायालय न्यायिक प्रणाली के तीन महत्वपूर्ण स्तंभ हैं, जो समाज में न्याय, समानता और मानवाधिकारों की रक्षा सुनिश्चित करते हैं। साधारण न्यायालय देश की मूल न्याय संरचना का आधार हैं, जहाँ सामान्य दीवानी और आपराधिक मामलों का निपटारा किया जाता है। इनमें जिला न्यायालय, सत्र न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के अधीन कार्य करने वाली विभिन्न अदालतें शामिल होती हैं। इनका उद्देश्य समाज के आम नागरिकों को सरल, सुलभ और नियमित न्याय प्रदान करना है। दूसरी ओर, विशेष न्यायालय उन मामलों की सुनवाई के लिए स्थापित किए जाते हैं, जिनकी प्रकृति सामान्य मामलों से थोडा भिन्न होती है और जिनमें त्वरित तथा विशेषज्ञता-आधारित निर्णय की आवश्यकता होती है। जैसे- सीबीआई कोर्ट, पक्सो कोर्ट, एनडीपीएस कोर्ट, भ्रष्टाचार निवारण न्यायालय, पारिवारिक न्यायालय आदि। इन न्यायालयों की स्थापना विशिष्ट कानूनों के अंतर्गत की जाती है ताकि विशेषज्ञ न्यायाधीशों द्वारा तकनीकी या संवेदनशील मामलों का त्वरित निपटारा हो सके। तीसरी श्रेणी है जिला मानवाधिकार न्यायालय, जिनकी स्थापना मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 के अंतर्गत की गई है। इनका मूल उद्देश्य व्यक्तियों के मौलिक मानवाधिकारों की रक्षा सुनिश्चित करना तथा मानवाधिकारों के उल्लंघन से संबंधित शिकायतों का न्यायपूर्ण समाधान प्रदान करना है। प्रत्येक जिला में इन न्यायालयों की स्थापना का प्रावधान किया गया है, जहाँ विशेष न्यायाधीश मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों की सुनवाई करते हैं। ये न्यायालय न केवल

मानवाधिकार हनन से संबंधित मामलों का त्वरित संज्ञान लेते हैं, बल्कि पीड़ितों को न्याय, सुरक्षा तथा राहत दिलाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार, साधारण न्यायालय समाज में व्यापक न्यायिक कार्यों का निर्वहन करते हैं, विशेष न्यायालय विशिष्ट मामलों को त्वरित न्याय प्रदान करते हैं, और मानवाधिकार न्यायालय मानव गरिमा एवं अधिकारों की सुरक्षा को सुनिश्चित करते हैं। तीनों मिलकर न्याय की समग्र व्यवस्था को मज़बूत बनाते हैं और लोकतांत्रिक व्यवस्था के मूल्यों को संरक्षित रखते हैं।

## 10.9 स्व मूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर-

उत्तर.सं-1- (C) त्वरित और विशेषज्ञ न्याय प्रदान करना,

उत्तर.सं-2- (B) विशेष न्यायालय,

उत्तर.सं-3- (B) समाज में न्याय, शांति और व्यवस्था स्थापित करना,

उत्तर.सं-4- (D) उपरोक्त सभी,

उत्तर.सं-5- (C) धारा 30,

## 10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References)


- **S.K. Sharma**, Administration of Criminal Justice, Deep & Deep Publications, New Delhi.
- **S. Venkat Ratnam**, Indian Criminal Justice System, APH Publishing Corporation.
- फड़के, बी. एल. “मानवाधिकार : सिद्धांत और व्यवहार”,: प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
- सिंह, आर. के. “भारतीय दंड न्याय प्रणाली”,: सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
- देवे, एस. जी. “मानवाधिकार शिक्षा”, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली।
- गुप्ता, के. सी., मानवाधिकार तथा भारतीय न्यायपालिका”, भारती प्रकाशन।
- राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) – वार्षिक रिपोर्टें – नई दिल्ली।
- संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार घोषणा पत्र, 1948 – United Nations.


## 10.11 निबंधात्मक प्रश्न (Long Answer Type Question)

प्रश्न.1- आपराधिक न्याय प्रणाली से आप क्या समझते हैं? आपराधिक न्याय प्रणाली के घटकों का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये।

प्रश्न.2- साधारण न्यायालयों की विशेषताओं तथा कार्यों का विस्तृत वर्णन कीजिये।

प्रश्न.3- जिला मानवाधिकार न्यायालयों के प्रमुख कार्यों का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये।

प्रश्न.4- विशेष न्यायालय के प्रकार तथा विशेषताओं का वर्णन कीजिये।

प्रश्न.5- साधारण न्यायालय, विशेष न्यायालय तथा जिला मानवाधिकार न्यायालयों में मुख्य अंतर स्पस्ट कीजिये।

# UNIT-11 मानवाधिकार और आपराधिक न्याय प्रणाली तथा मानवाधिकारों का अभियोजन (Human Right and Criminal Justice system and Prosecution of Human Rights)


**11.1 प्रस्तावना (Introduction)**

**11.2 उद्देश्य (Objective)**

**11.3 मानवाधिकार (Human Right)**

**11.3.1 मानवाधिकार की अवधारणा**

**11.4 आपराधिक न्याय प्रणाली (Criminal Justice system)**

**11.5 मानवाधिकारों का अभियोजन (Prosecution of Human Rights)**

**11.5.1 मानवाधिकार अभियोजन का अर्थ,**

**11.5.2 मानवाधिकार अभियोजन के उद्देश्य,**

**11.5.3 मानवाधिकार अभियोजन के महत्वपूर्ण संस्थाओं की भूमिका,**

**11.6 स्व मूल्यांकन हेतु प्रश्न**

**11.7 सारांश (Summary)**

**11.8 स्व मूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर**

**11.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References)**

**11.10 निबंधात्मक प्रश्न (Long Answar Type Questions)**

## 11.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानवाधिकार और आपराधिक न्याय प्रणाली किसी भी लोकतांत्रिक समाज की महत्वपूर्ण नींव होते हैं, क्योंकि व्यक्ति की गरिमा की रक्षा तथा विधि के शासन को सुदृढ़ बनाने में दोनों की परस्पर भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। मानवाधिकार वह सार्वभौमिक अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को केवल मानव होने के नाते प्राप्त होते हैं, जैसे जीवन का अधिकार, समानता का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, न्याय पाने का अधिकार, सुरक्षा का अधिकार, सम्मान और विकास के एक समान अवसर प्राप्त होना। जब व्यक्ति के इन मूल अधिकारों का हनन होता है या किसी व्यक्ति पर अपराध का आरोप लगता है, तब आपराधिक न्याय प्रणाली सक्रिय होकर न केवल अपराध की जांच, अभियोजन और न्यायिक प्रक्रिया को संचालित करती है, बल्कि यह भी सुनिश्चित करती है कि आरोपी, पीड़ित और समाज तीनों के अधिकारों का विधिक संरक्षण हो। एक लोकतांत्रिक राज्य में पुलिस, अभियोजन एजेंसियाँ, न्यायालय, कारागार प्रशासन और विधि-निर्माण संस्थाएँ मिलकर आपराधिक न्याय प्रणाली का निर्माण करती हैं, जिसका मूल उद्देश्य अपराध पर नियंत्रण, समाज की सुरक्षा, निष्पक्ष न्याय, न्यायिक स्वतंत्रता तथा मानवाधिकारों की संवैधानिक गारंटी सुनिश्चित करना है। इसी संदर्भ में “मानवाधिकारों का अभियोजन” एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय बन जाता है, क्योंकि मानवाधिकार उल्लंघन अक्सर सत्ता, संस्थाओं या संरचनात्मक असमानताओं के कारण होते हैं, जिनके विरुद्ध प्रभावी कानूनी कार्रवाई आवश्यक है। मानवाधिकारों का अभियोजन केवल अपराधी को दंडित करना ही नहीं है, बल्कि पीड़ित को न्याय दिलाना, उसके अधिकारों की पुनर्स्थापना करना और यह सुनिश्चित करना भी है कि राज्य या किसी संस्था द्वारा अधिकारों का दुरुपयोग न हो। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, राज्य मानवाधिकार आयोग, विशेष न्यायालय, अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार संस्थाएँ तथा आपराधिक न्यायिक ढांचा मिलकर इस प्रक्रिया को मजबूत बनाते हैं। आज के वैश्विक परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकार उल्लंघन जैसे पुलिस अत्याचार, हिरासत में मृत्यु, महिलाओं और बच्चों के विरुद्ध हिंसा, भेदभावपूर्ण व्यवहार, मानव तस्करी, अवैध हिरासत, न्याय में देरी और निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार का हनन ऐसे मुद्दे हैं जिनके लिए एक संवेदनशील, पारदर्शी और उत्तरदायी आपराधिक न्याय प्रणाली की आवश्यकता है। जब मानवाधिकारों के संरक्षण और आपराधिक न्याय की निष्पक्षता साथ-साथ चलती है, तभी एक ऐसा समाज बन सकता है जिसमें न्याय केवल दिया ही नहीं जाता बल्कि होता हुआ दिखाई भी देता है। अतः मानवाधिकार, आपराधिक न्याय प्रणाली और मानवाधिकारों का अभियोजन—ये तीनों एक-दूसरे के पूरक हैं और किसी भी आधुनिक राष्ट्र-राज्य में लोकतंत्र की मजबूती, नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा तथा न्यायपूर्ण समाज की स्थापना के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं।

## 11.2 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्र –

- ✓ छात्र मानवाधिकारों के बारें में जानकारी रख सकेंगें,
- ✓ छात्र मानवाधिकार की अवधारणा को समझ सकेंगें

- ✓ छात्र मानवाधिकार के मूलभूत सिधान्तों के बारे में जान सकेंगें
- ✓ छात्र मानवाधिकारों के अभियोजन के बारे में जान सकेंगें,
- ✓ छात्र मानवाधिकारों के अभियोजन के उद्देश्यों के बारें में जान सकेंगे,
- ✓ छात्र मानवाधिकार अभियोजन के महत्वपूर्ण संस्थानों के बारे में जानकारी ले सकेंगें,

## 11.3 मानवाधिकार (Human Right)

मानवाधिकार वे सार्वभौमिक अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को केवल मानव होने के नाते प्राप्त होते हैं। ये अधिकार किसी जाति, धर्म, लिंग, भाषा, राष्ट्रीयता, संस्कृति या सामाजिक स्थिति पर आधारित नहीं होते, बल्कि ये अधिकार मानव की गरिमा और स्वतंत्रता के संरक्षण को आधार बनाते हैं। मानवाधिकारों की अवधारणा मानव सभ्यता जितनी ही पुरानी है, लेकिन आधुनिक मानवाधिकारों का औपचारिक स्वरूप द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद उभर कर सामने आया, जब विश्व समुदाय ने युद्ध की क्रूरता, अत्याचारों और जनसंहार को देखकर यह सुनिश्चित करने का संकल्प लिया कि भविष्य में किसी भी व्यक्ति की स्वतंत्रता, सम्मान और सुरक्षा को क्षति न पहुँचे। इसी दिशा में सबसे पहले **10 दिसम्बर 1948** को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को अपनाया, जिसने मानवाधिकारों के वैश्विक ढांचे की नींव रखी।

मानवाधिकार दिवस हर वर्ष **10 दिसम्बर** को पूरे विश्व में मनाया जाता है। यह दिवस मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को अपनाने की याद में मनाया जाता है, जिसे 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने स्वीकार किया था। इस घोषणा ने पहली बार यह स्थापित किया कि मानव अधिकार सार्वभौमिक और सभी लोगों के लिए समान हैं चाहे उस व्यक्ति की राष्ट्रीयता, जाति, धर्म, भाषा, लिंग या सामाजिक स्थिति कुछ भी हो। मानवाधिकार दिवस का उद्देश्य लोगों को उनकी गरिमा, समानता, स्वतंत्रता और न्याय के प्रति जागरूक करना है।

द्वितीय विश्व युद्ध की भयावह घटनाओं नरसंहार, हिंसा, गुलामी और अमानवीय अत्याचारों ने विश्व को यह सिखाया कि मानवाधिकारों की रक्षा के बिना शांति की कल्पना नहीं की जा सकती। इसी कारण संयुक्त राष्ट्र संघ ने सन 1945 में अपनी स्थापना के साथ ही मानवाधिकारों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी। 10 दिसम्बर 1948 को मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (Universal Declaration of Human Rights UDHR) को अपनाया गया। यह दस्तावेज़ आज भी दुनिया का सबसे महत्वपूर्ण मानवाधिकार चार्टर माना जाता है। इसके बाद 1950 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने इस दिन को ''मानवाधिकार दिवस'' के रूप में घोषित किया, ताकि तमाम देशों में मानवाधिकारों के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाई जा सके।

भारत में मानवाधिकारों की निगरानी और संरक्षण के लिए 1993 में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) तथा राज्यों में राज्य मानवाधिकार आयोग की स्थापना की गई। ये आयोग मानवाधिकारों के उल्लंघन की जाँच करते हैं, तथा आवश्यक कार्रवाई की सिफारिश करते हैं और मानवाधिकारों के प्रति समाज के लोगों में जागरूकता बढ़ाने का कार्य करते हैं। तथा साथ ही इसमें, न्यायालयों की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। न्यायपालिका ने अनेक ऐतिहासिक निर्णयों के माध्यम से जीवन के अधिकार की

व्यापक व्याख्या की है, जिसमें गरिमापूर्ण जीवन, स्वच्छ पर्यावरण, आवास, चिकित्सा, निजता तथा आजीविका के अधिकार को शामिल किया गया है।

**11.3.1 मानवाधिकार की अवधारणा-**

मानवाधिकारों का मूल उद्देश्य समाज में यह सुनिश्चित करना है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को एक समान जीवन यापन स्तर, सम्मानजनक व्यवहार, एक समान न्याय, सुरक्षा और अवसर उपलब्ध हों। ये अधिकार केवल कानूनी नहीं, बल्कि नैतिक व दार्शनिक आधार भी रखते हैं।

मानवाधिकार सामान्यतहः तीन मूलभूत सिद्धांतों पर आधारित हैं जो निम्नवत हैं -

1. **समानता (Equality)** – समानता से तात्पर्य समाज में सभी व्यक्तियों की एकरूपता से हैं, जिससे सभी को एक समान अधिकार मिलने से हैं।
2. **स्वतंत्रता (Liberty)** – स्वतंत्रता से तात्पर्य उस स्थिति से है जिसमें व्यक्ति अपने विचार, विश्वास, आचरण और जीवन से संबंधित निर्णय बिना किसी डर और बिना किसी अनुचित बाधा या दबाव के ले सके। इसमें व्यक्ति को सोचने, बोलने, अभिव्यक्ति, धर्म, शिक्षा, आवागमन, आजीविका तथा जीवन जीने की स्वतंत्रता से हैं।
3. **गरिमा (Human Dignity)** – गरिमा से तात्पर्य समाज के किसी भी व्यक्ति के सम्मान, आत्मसम्मान और बुनियादी मानवीय मूल्य को ठेस पहुँचाना मानवाधिकार के विरुद्ध है तथा समाज के प्रत्येक व्यक्ति को उचित आत्म सम्मान, सुरक्षा, तथा भयमुक्त जीवन जीने का अधिकार से हैं।

## 11.4 आपराधिक न्याय प्रणाली (Criminal Justice system)-

आपराधिक न्याय प्रणाली वह व्यवस्था है, जिसके माध्यम से किसी भी समाज में अपराधों को नियंत्रित किया जाता है और अपराधियों को पहचानकर उन पर उचित कार्रवाई की जाती है तथा पीड़ितों को न्याय दिलाया जाता है। यह प्रणाली संविधान या कानून के अनुसार काम करती है ताकि समाज में शांति, सुरक्षा और व्यवस्था बनी रहे।

**आपराधिक न्याय प्रणाली के प्रमुख घटक-** आपराधिक न्याय प्रणाली के प्रमुख घटक निम्नवत हैं-

1. **पुलिस (Police) -** आपराधिक न्याय प्रणाली में पुलिस अपराध के शुरुआती चरण में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पुलिस के प्रमुख कार्य निम्नवत हैं-

- अपराध की सूचना प्राप्त करना तथा (FIR दर्ज करना),
- अपराध की जांच करना,
- संदिग्धों की गिरफ्तारी,
- साक्ष्य एकत्र करना,
- समाज में कानून-व्यवस्था बनाए रखना,

2. **न्यायालय (Courts)** - आपराधिक न्याय प्रणाली में न्यायालय सुनिश्चित करते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को निष्पक्ष, समान और न्यायपूर्ण सुनवाई मिल सकें। न्यायालयों के मुख्य कार्य निम्नवत हैं-

- आरोपियों को निष्पक्ष सुनवाई प्रदान करना,
- प्रस्तुत साक्ष्यों के आधार पर निर्णय देना,
- दोषी पाए जाने पर दंड तय करना,
- निर्दोष को मुक्त करना,

3. **कारागृह एवं सुधार गृह** (Prisons & Correctional Institutions)- आपराधिक न्याय प्रणाली में कारागाह एवं सुधारगृह का मुख्य उद्देश्य केवल दंड देना या सजा देना नहीं, बल्कि अपराधी को समाज में पुनः स्थापित करने में सहायता देना भी है।

- दोषी व्यक्तियों को दंड पूरा करने तक कारागृह में सुरक्षित रूप से रखना,
- कैदियों का सुधार व पुनर्वास में सहयोग करना,
- कैदियों को शिक्षा, कौशल विकास और परामर्श प्रदान करना,

4. **अभियोजन तंत्र (Prosecution)**- आपराधिक न्याय प्रणाली में अभियोजन तंत्र यह सुनिश्चित करता है कि अपराधी को कानून और नियमानुसार दंड मिले।

- राज्य की ओर से अपराधियों के खिलाफ मामला प्रस्तुत करना
- साक्ष्यों एवं गवाहों को न्यायालय में पेश करना
- न्यायालय को दोष सिद्ध करने के लिए तर्क प्रस्तुत करना

अतः आपराधिक न्याय प्रणाली किसी भी देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह प्रणाली समाज में अपराधों को नियंत्रित करती है, तथा पीड़ितों को न्याय देती है और समाज में शांति व सुरक्षा सुनिश्चित करती है। आपराधिक न्याय प्रणाली का मजबूत और पारदर्शी होना स्वस्थ समाज के लिए अत्यंत आवश्यक होती है।

## 11.5 मानवाधिकारों का अभियोजन (Prosecution of Human Rights)-

मानवाधिकार किसी भी सभ्य समाज की मूलभूत नींव हैं। मानवाधिकारों का मुख्य उद्देश्य समाज के प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्रता, समानता, सुरक्षा और गरिमापूर्ण जीवन प्रदान करना है। किंतु जब इन अधिकारों का उल्लंघन होता है चाहे वह किसी भी कारण से पुलिस अत्याचार हो, हिरासत में मृत्यु, मानव तस्करी, लैंगिक हिंसा, भेदभाव, बाल शोषण, पारिस्थितिक विनाश या प्रशासनिक दमन तो राज्य का दायित्व बनता है कि वह अभियोजन प्रक्रिया के माध्यम से दोषियों को दंडित करे और पीड़ित को न्याय दिलाए। मानवाधिकारों का अभियोजन न्याय व्यवस्था, मानवाधिकार आयोगों, पुलिस प्रणाली, न्यायालय, सामाजिक संगठनों और अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं से मिलकर निर्मित एक संवेदनशील और

प्रभावी प्रक्रिया है। इसका मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि मानवाधिकार उल्लंघन के मुकदमों में न केवल त्वरित न्याय मिले बल्कि आने वाले समय या भविष्य में ऐसे उल्लंघनों पर रोक लग सके।

### 11.5.1 मानवाधिकार अभियोजन का अर्थ-

मानवाधिकार अभियोजन का अर्थ है मानवाधिकारों का उल्लंघन करने वाले व्यक्तियों, संस्थाओं या राज्य के अधिकारियों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई करना और उन्हें दंडित कराना। सरल शब्दों में, जब किसी व्यक्ति के बुनियादी अधिकारों जैसे जीवन का अधिकार, समानता का अधिकार, स्वतंत्रता, गरिमा तथा न्याय पाने का अधिकार का हनन होता है, तो उस अपराधी को कानून के तहत सजा दिलाने की प्रक्रिया को मानवाधिकार अभियोजन कहा जाता है। मानवाधिकार अभियोजन प्रक्रिया न्यायालयों, मानवाधिकार आयोगों, पुलिस और अन्य विधिक संस्थाओं के माध्यम से संचालित होती है, जिसमें यह सुनिश्चित किया जाता है कि -

- पीड़ित को न्याय मिले,
- अपराधी को उचित दंड मिले,
- भविष्य में ऐसे उल्लंघन न हों।

अर्थात, मानवाधिकारों की रक्षा और सुनिश्चितता हेतु की जाने वाली कानूनी कार्रवाई ही मानवाधिकार अभियोजन है।

### 11.5.2 मानवाधिकार अभियोजन के उद्देश्य-

मानवाधिकार अभियोजन का मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि किसी भी व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों का उल्लंघन करने पर दोषियों को दंड मिले और समाज में न्याय व्यवस्था तथा सुरक्षा व्यवस्था कायम रहे। मानवाधिकार अभियोजन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. **मानवाधिकार उल्लंघन करने वालों को दंडित करना-** मानवाधिकारों का हनन करने वाले व्यक्तियों, समूहों या अधिकारियों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई कर उन्हें उचित दंड दिलाना मानवाधिकार अभियोजन पहला और मुख्य उद्देश्य है।
2. **पीड़ित व्यक्ति को न्याय दिलाना-** पीड़ित व्यक्ति को न्याय दिलाना मानवाधिकार अभियोजन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण उद्देश्य है। इसका अर्थ है कि जिस व्यक्ति के साथ अन्याय, अत्याचार, हिंसा, भेदभाव या किसी भी प्रकार का मानवाधिकार उल्लंघन हुआ है, उसे कानून के माध्यम से उचित संरक्षण, राहत और न्याय प्रदान करना।
3. **समाज में कानून का शासन स्थापित करना-** मानवाधिकार अभियोजन का प्रमुख उद्देश्य यह सुनिश्चित करना कि समाज में कानून सर्वोपरि हो और हर व्यक्ति, संस्था तथा सरकारी अधिकारी कानून के अनुसार ही कार्य करें। किसी भी लोकतांत्रिक समाज में यह सिद्धांत अत्यंत आवश्यक है, जिससे हमारे आस-पास न्याय, समानता और व्यवस्था बनी रहती है।
4. **मानवाधिकारों की सुरक्षा और सम्मान को बढ़ावा देना-** मानवाधिकार अभियोजन उन लोगों को स्पष्ट संदेश देता है कि मानवाधिकारों का उल्लंघन सहन नहीं किया जाएगा, जो इन

अधिकारों के हनन करने की कोशिश करते हैं, इससे समाज में मानवाधिकारों के प्रति सम्मान बढ़ता है तथा मानवाधिकारों की सुरक्षा को भी बढ़ावा मिलता हैं।

5. **मानवाधिकार संरक्षण के प्रति जन-जागरूकता बढ़ाना-** मानवाधिकारों की सुरक्षा तभी प्रभावी होती है जब समाज के हर व्यक्ति को अपने अधिकारों, कर्तव्यों और कानूनी प्रक्रियाओं की सही जानकारी हो। इसलिए मानवाधिकार संरक्षण के प्रति जन-जागरूकता बढ़ाना अत्यंत आवश्यक उद्देश्य है। इसका अर्थ है समाज में लोगों को शिक्षित, संवेदनशील और जागरूक बनाना ताकि वे अपने तथा दूसरों के मानवाधिकारों की रक्षा कर सकें।
6. **सरकारी तंत्र को जिम्मेदार और पारदर्शी बनाना-** सरकारी तंत्र को जिम्मेदार और पारदर्शी बनाना मानवाधिकार अभियोजन का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। इसका अर्थ यह सुनिश्चित करना कि सरकारी अधिकारी, पुलिस कर्मचारी, प्रशासनिक संस्थाएँ और सार्वजनिक सेवाएँ अपने कार्यों के लिए जवाबदेह हों और उनकी कार्यप्रणाली पारदर्शी रहे, ताकि नागरिकों के मानवाधिकारों का सम्मान हो सके।
7. **अपराधियों पर नियंत्रण एवं निवारण-** अपराधियों पर नियंत्रण एवं निवारण का अर्थ है कि मानवाधिकारों का उल्लंघन करने वाले व्यक्तियों पर कानूनी नियंत्रण स्थापित करना और भविष्य में ऐसे अपराधों को होने से रोकना हैं। मानवाधिकार अभियोजन का यह उद्देश्य समाज के लोगों में सुरक्षा, व्यवस्था और न्याय को मजबूत बनाता है।

### 11.5.3 मानवाधिकार अभियोजन में महत्वपूर्ण संस्थाओं की भूमिका-

मानवाधिकार अभियोजन में जो संस्थाएं महत्वपूर्ण भूमिकाओं का निर्वहन करते हैं वो निम्नवत हैं-

1. **राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC)-** भारत में मानवाधिकार संरक्षण का सर्वोच्च दायित्व राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग पर है। यह आयोग मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 के अंतर्गत गठित किया गया। NHRC का प्रमुख उद्देश्य मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों की निगरानी करना, शिकायतों पर संज्ञान लेना, संबंधित विभागों से रिपोर्ट मँगाना तथा पीड़ितों को राहत और मुआवज़ा प्रदान करने की संस्तुति करना है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग कई प्रकार से मानवाधिकार अभियोजन को मजबूत बनाता है। जैसे-
    - यह आयोग मानवाधिकार हनन की किसी भी घटना पर स्वतः संज्ञान ले सकता है, जिससे उन मामलों में भी कार्रवाई संभव हो जाती है जो मीडिया या प्रशासन की पकड़ में नहीं आ पाते।
    - यह आयोग पुलिस और प्रशासनिक विभागों से प्रतिवेदन मँगाकर जाँच की गुणवत्ता और निष्पक्षता सुनिश्चित करता है।
    - यह आयोग पीड़ितों को त्वरित राहत प्रदान करने हेतु सरकार को मुआवज़े की सिफारिश करता है।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग मानवाधिकार पर शोध, प्रशिक्षण, जनजागरूकता और सुधारात्मक सुझावों के माध्यम से एक व्यापक मानवाधिकार संस्कृति का निर्माण करता है। यह आयोग की वार्षिक रिपोर्टें मानवाधिकार अभियोजन की स्थिति का विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं, जिनके आधार पर

सरकार नीतिगत सुधार करती है। इस दृष्टि से राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग भारत की मानवाधिकार सुरक्षा प्रणाली का केंद्रीय स्तंभ है।

2. **राज्य मानवाधिकार आयोग (SHRC)-** राज्य मानवाधिकार आयोग राज्य स्तर पर मानवाधिकार संरक्षण के लिए कार्य करते हैं। स्थानीय शिकायतों की त्वरित सुनवाई और क्षेत्रीय समस्याओं के समाधान में राज्य मानवाधिकार आयोग महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राज्य मानवाधिकार आयोग की प्रमुख भूमिकाएँ निम्नवत हैं-

- राज्य में मानवाधिकार उल्लंघन से संबंधित शिकायतों पर संज्ञान लेना।
- पुलिस और प्रशासनिक अधिकारियों से रिपोर्ट प्राप्त कर जांच को निर्देशित करना।
- पीड़ितों को उचित राहत, मुआवजा और सुरक्षा प्रदान करने के लिए सिफारिशें देना।
- राज्य सरकार को मानवाधिकार संरक्षण संबंधी सुधारात्मक नीतियों पर सुझाव देना।
- मानवाधिकार अभियोजन को स्थानीय स्तर पर अधिक सुलभ, त्वरित और प्रभावी बनाना।

3. **न्यायपालिका-** भारतीय न्यायपालिका मानवाधिकारों की रक्षा के लिए सबसे सशक्त संस्था है। सुप्रीम कोर्ट और उच्च न्यायालय अनुच्छेद 32 और 226 के अंतर्गत सभी नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा के लिए विशेष अधिकार रखते हैं।

**सुप्रीम कोर्ट और उच्च न्यायालय की भूमिका-**

- मानवाधिकार उल्लंघन मामलों में रिट जारी कर पीड़ितों को तत्काल राहत देते हैं।
- जनहित याचिकाओं (PIL) के माध्यम से व्यापक मानवाधिकार मुद्दों पर हस्तक्षेप करते हैं।
- पुलिस हिरासत में मृत्यु, बलात्कार, यातना और कस्टोडियल वॉयलेशन जैसे गंभीर मामलों में स्वतः संज्ञान लेते हैं।
- निष्पक्ष और तीव्र न्याय सुनिश्चित करने के लिए राज्य को निर्देश जारी करते हैं।

**विशेष मानवाधिकार न्यायालय-** कई राज्यों में मानवाधिकार मामलों की त्वरित सुनवाई के लिए विशेष न्यायालय स्थापित किए गए हैं। ये न्यायालय शिकायतों की प्राथमिक सुनवाई, साक्ष्य परीक्षण और दोषियों को दंडित करने की प्रक्रिया को तेज़ करते हैं। न्यायपालिका का हस्तक्षेप मानवाधिकार अभियोजन को संवैधानिक मजबूती देता है और प्रशासनिक जवाबदेही सुनिश्चित करता है।

4. **पुलिस और कानून प्रवर्तन एजेंसियाँ-** मानवाधिकार अभियोजन की सफलता काफी हद तक पुलिस और अन्य विभिन्न जांच एजेंसियों की कार्यप्रणाली पर निर्भर होती है। पुलिस और अभियोजन प्रणाली का योगदान निम्नवत होता हैं-

- मानवाधिकार उल्लंघन से संबंधित शिकायत दर्ज करना।
- घटना स्थल निरीक्षण, साक्ष्य संग्रहण और दस्तावेजीकरण।
- अभियुक्तों को गिरफ्तार करना और न्यायालय में प्रस्तुत करना।
- चार्जशीट तैयार कर अदालत में अभियोजन पक्ष की सहायता।

**विशेष जांच एजेंसियाँ जैसे (CBI, SIT) की भूमिका-** कुछ जटिल, अति संवेदनशील और उच्च-प्रोफ़ाइल मानवाधिकार मामलों की जांच अक्सर CBI या विशेष जांच दल (SIT) को सौंपी जाती है। इन एजेंसियों की स्वतंत्र जाँच मानवाधिकार अभियोजन प्रक्रिया को अधिक विश्वसनीय और भरोसेमंद बनाती है।

5. **राष्ट्रीय महिला आयोग-** समाज में महिलाओं के विरुद्ध हिंसा, उत्पीड़न और भेदभाव मानवाधिकार उल्लंघन के प्रमुख स्वरूप हैं। राष्ट्रीय महिला आयोग इन मामलों में संज्ञान लेकर इनकी जाँच और अभियोजन प्रक्रिया को मजबूत बनाता है।

राष्ट्रीय महिला आयोग की प्रमुख भूमिकाएँ निम्नवत हैं-

- समाज में महिला उत्पीड़न से जुड़ी शिकायतों की सुनवाई।
- पुलिस और प्रशासन से रिपोर्ट मांगकर जाँच सुनिश्चित करना।
- पीड़ित महिलाओं को कानूनी सहायता, परामर्श और संरक्षण उपलब्ध कराना।
- महिला सुरक्षा से संबंधित कानूनों के बेहतर क्रियान्वयन पर सुझाव देना।

6. **बाल अधिकार संरक्षण आयोग-** हमारे समाज में बाल श्रम, बाल तस्करी, बाल विवाह, शोषण और यौन हिंसा जैसे अनेक मानवाधिकार उल्लंघन के गंभीर रूप हैं। बाल अधिकार संरक्षण आयोग इन मामलों में हस्तक्षेप कर बच्चों के अधिकारों की रक्षा करता है। इस आयोग के कुछ मुख्य कार्य निम्नवत हैं-
    - बच्चों से संबंधित मानवाधिकार शिकायतों पर संज्ञान लेना।
    - बाल सुरक्षा गृहों, आश्रय स्थलों और किशोर न्याय संस्थानों का निरीक्षण।
    - बाल-संबंधी अपराधों में त्वरित कार्रवाई और अभियोजन सुनिश्चित करना।
    - राज्यों में बाल अधिकार संरक्षण आयोगों के साथ सहयोग स्थापित करना।
7. **लोकपाल, लोकायुक्त और अन्य संवैधानिक निकाय-** लोकपाल और लोकायुक्त भ्रष्टाचार, शक्ति का दुरुपयोग और प्रशासनिक अन्याय की जाँच करते हैं, जो मानवाधिकार हनन की प्रमुख जड़ें हैं। ये संस्थाएँ समाज में लोगों के अधिकारों की रक्षा करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं जैसे-
    - ये सार्वजनिक अधिकारियों की जवाबदेही तय करती हैं।
    - ये सरकारी कार्यों में पारदर्शिता को बढ़ावा देती हैं।
    - ये मानवाधिकार उल्लंघन को बढ़ाने वाली परिस्थितियों पर अंकुश लगाती हैं।
8. **अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयोग-** समाज में जाति-आधारित अत्याचार या दुर्व्यवहार, सामाजिक बहिष्कार और भेदभाव से सम्बंधित सभी मानवाधिकार उल्लंघन की गंभीर श्रेणी में आते हैं। इन सभी प्रकार के मामलों पर अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयोग की भूमिका निम्न प्रकार की होती हैं-
    - SC/ST से सम्बंधित सभी अत्याचारों के मामलों की जाँच करना।
    - प्रशासन और पुलिस से रिपोर्ट मांगकर कार्रवाई सुनिश्चित करना।

- पीड़ितों को मुआवज़ा, कानूनी सहायता और संरक्षा प्रदान कराना।
- SC/ST Act के प्रभावी क्रियान्वयन पर निगरानी।

9. **संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद-** सयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद् वैश्विक स्तर पर मानवाधिकार मानकों की निगरानी में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। यह परिषद वैश्विक स्तर विभिन्न देशों में होने वाले मानवाधिकार उल्लंघन की रिपोर्ट तैयार कर उन पर अंतरराष्ट्रीय स्तर से दबाव बनाने का कार्य करती है। सयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद् परिषद् के प्रमुख कार्य निम्नवत हैं-
    - सभी सदस्य देशों की मानवाधिकार स्थिति का आकलन करना।
    - मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों पर देशों को चेतावनी और सुझाव देना ।
    - पीड़ितों लोगों के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आवाज़ उठाना।

अतः इस प्रकार मानवाधिकार अभियोजन एक बहुस्तरीय, जटिल और सहयोगात्मक प्रक्रिया है, जिसमें वैश्विक स्तर पर विभिन्न संस्थाएँ जैसे- राष्ट्रीय आयोग, राज्य आयोग, न्यायपालिका, पुलिस, जांच एजेंसियाँ, संवैधानिक निकाय और अंतरराष्ट्रीय संगठन अपनी विशिष्ट और महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाती हैं। प्रत्येक संस्था मानवाधिकार संरक्षण के अलग-अलग आयामों को मजबूत बनाती है। न्यायपालिका संवैधानिक सुरक्षा प्रदान करती है, पुलिस और जांच एजेंसियाँ साक्ष्य और दोषसिद्धि सुनिश्चित करती हैं, जबकि अंतरराष्ट्रीय संस्थाएँ वैश्विक स्तर पर मानवाधिकार मानकों को लागू करने में मदद करती हैं। मानवाधिकार अभियोजन की सफलता तभी सुनिश्चित हो सकती है जब सभी संस्थाएँ आपस में समन्वयपूर्ण, पारदर्शी और उत्तरदायी तरीके से कार्य करें। यही समन्वय एक न्यायपूर्ण, संवेदनशील और मानवाधिकार से परिपूर्ण समाज की नींव रखता है।

## 11.6 स्व मूल्यांकन हेतु प्रश्न

**प्रश्न.1-** संयुक्त राष्ट्र महासभा ने मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा कब की ?

**प्रश्न.2-** मानवाधिकार दिवस सम्पूर्ण विश्व में प्रतिवर्ष किस तिथि को मनाया जाता हैं?

**प्रश्न.3-** बाल अधिकार संरक्षण आयोग मुख्यतः किन उल्लंघनों पर रोक लगाती हैं ?

**प्रश्न.4-** राष्ट्रीय महिला आयोग किस प्रकार के मामलों का निपटारा करती हैं?

## 11.7 सारांश (Summary) -

यह अध्ययाय मानवाधिकार, आपराधिक न्याय प्रणाली तथा मानवाधिकारों के अभियोजन के परस्पर संबंधों को स्पष्ट करता है और यह बताता है कि एक न्यायप्रिय, संवेदनशील तथा उत्तरदायी समाज के निर्माण के लिए इन तीनों का संतुलित समन्वय अत्यंत आवश्यक है। मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति को उसके जन्मसिद्ध अधिकार प्रदान करते हैं, इन अधिकारों में जैसे जीवन जीने , स्वतंत्रता, समानता, व्यक्ति की गरिमा, न्याय तथा निष्पक्ष व्यवहार का अधिकार शामिल हैं। ये अधिकार मानव अस्तित्व के मुख्य आधार हैं, इसलिए किसी भी समाज में कानून व्यवस्था के निर्माण , शासन व्यवस्था और न्याय प्रणाली

का मूल उद्देश्य इन्हें सुरक्षित रखना होता है। आपराधिक न्याय प्रणाली जिसमें पुलिस, अभियोजन तंत्र, न्यायालय, कारागार प्रशासन तथा विधिक सेवाएँ शामिल होती हैं इन न्याय प्रणाली का प्रमुख दायित्व है कि वह समाज में अपराधियों पर नियंत्रण रखे, अपराध की जांच निष्पक्ष रूप से करे, पीड़ितों को सुरक्षा दे तथा न्यायालयों के माध्यम से न्याय सुनिश्चित करे। यह केवल अपराध नियंत्रण का तंत्र नहीं, बल्कि मानवाधिकारों की रक्षा की रीढ़ भी है। इसी प्रकार मानवाधिकारों का अभियोजन संबिधान में एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया के रूप में उभरता है, जिसके तहत मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों की विधिपूर्वक जांच, अपराधियों पर मुकदमा चलाना, पीड़ितों को राहत दिलाना तथा दोषियों को दंडित करना शामिल है। यह प्रक्रिया न केवल पीड़ितों को न्याय दिलाती है बल्कि राज्य के दायित्वों को भी स्पष्ट करती है कि वह नागरिकों की गरिमा व अधिकारों की रक्षा में निष्क्रिय नहीं रह सकता। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, राज्य मानवाधिकार आयोग, गैर-सरकारी संस्थाएँ, मीडिया और नागरिक समाज मिलकर मानवाधिकार अभियोजन को प्रभावी बनाते हैं। यह अध्य्याय यह भी रेखांकित करता है कि मानवाधिकारों की रक्षा केवल कानूनों और संस्थाओं से नहीं होती, बल्कि इसके लिए प्रशासनिक पारदर्शिता, जवाबदेही, संवेदनशीलता और मानव-केंद्रित दृष्टिकोण भी अत्यंत आवश्यक है। आपराधिक न्याय प्रणाली को मानवाधिकार केन्द्रित बनाना आज की आवश्यकता है, ताकि जांच से लेकर दंड देने तक हर स्तर पर न्याय, समानता और निष्पक्षता सुनिश्चित हो सके। अतः मानवाधिकारों की सुरक्षा तथा न्याय व्यवस्था की प्रभावशीलता आपस में गहराई से जुड़ी हैं, और एक स्वस्थ लोकतांत्रिक समाज के लिए दोनों का सशक्त, पारदर्शी और संवेदनशील होना अत्यंत आवश्यक है।

## 11.8 स्व मूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर-

**उत्तर.सं.1-** 10 दिसंबर 1948.

**उत्तर.सं.2-** 10 दिसंबर.

**उत्तर.सं.3-** बाल क्षम, बाल तस्करी, बाल विवाह तथा यौन शोषण आदि,

**उत्तर.सं.4-** घरेलु हिंसा, महिला उत्पीड़न एवं दहेज़ उत्पीड़न आदि.

## 11.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References)


- फड़के, बी. एल. "मानवाधिकार : सिद्धांत और व्यवहार",: प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
- सिंह, आर. के. "भारतीय दंड न्याय प्रणाली",: सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
- देवे, एस. जी. "मानवाधिकार शिक्षा", राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली।
- गुप्ता, के. सी., मानवाधिकार तथा भारतीय न्यायपालिका", भारती प्रकाशन।
- राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) – वार्षिक रिपोर्टें – नई दिल्ली।
- संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार घोषणा पत्र, 1948 – United Nations.
- **S.K. Sharma**, Administration of Criminal Justice, Deep & Deep Publications, New Delhi.

## 11.10 निबंधात्मक प्रश्न (Long Answer Type Question)

**प्रश्न.1-** मानवाधिकार से आप क्या समझते हैं? मानवाधिकार के प्रमुख सिधान्तों का वर्णन कीजिये।

**प्रश्न.2-** आपराधिक न्याय प्रणाली क्या हैं? आपराधिक न्याय प्रणाली के प्रमुख घटकों का वर्णन कीजिये।

**प्रश्न.3-** मानवाधिकार अभियोजन से आप क्या समझते हैं? मानवाधिकार अभियोजन के उद्देश्यों का वर्णन कीजिये।

**प्रश्न.4-** मानवाधिकार अभियोजन में शामिल महत्वपूर्ण संस्थानों की भूमिका का विस्तृत वर्णन कीजिये।

# इकाई-12: न्यायिक सहायता का अधिकार,दंड एवं मानवाधिकार तथा पुलिस और जेल में सुधार (Right to Legal Aids, Punishment and human Right and Reform in Police and Jail)


**12.1: प्रस्तावना**

**12.2: उद्देश्य**

**12.3: कानूनी सहायता का अर्थ**

**12.3.1: कानूनी सहायता का अधिकार**

**12.3.2: कानूनी सहायता के अधिकार के उद्देश्य**

**12.4: दंड व मानव अधिकार**

**12.4.1: दंड का अर्थ**

**12.4.2: दंड के उद्देश्य**

**12.4.3: दंड के प्रकार**

**12.4.4: मानव अधिकार**

**12.4.5: मानव अधिकार के प्रमुख तत्व**

**12.4.6: भारत में दंड व मानव अधिकारों से संबंधित प्रमुख समस्याएँ**

**12.4.7: भारत में दंड व मानव अधिकारों से संबंधित सुझाव**

**12.5:पुलिस और जेल**

**12.5.1: पुलिस सुधार**

12.5.2: वर्तमान में पुलिस व्यवस्था की प्रमुख समस्याएँ

12.5.3: पुलिस सुधार के उपाय

12.5.4: जेल सुधार

12.5.5: जेल सुधार के उपाय

12.6: सारांश

12.7: शब्दावली

12.8: अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

12.9: संदर्भ ग्रंथ सूची

12.10: निबंधात्मक प्रश्न

12.1: प्रस्तावना

किसी भी लोकतांत्रिक और सभ्य समाज की पहचान उसकी न्याय व्यवस्था तथा मानवाधिकारों के सम्मान से होती है। संविधान केवल कागज पर लिखी हुई धाराओं का ही संग्रह नहीं हैं, अपितु यह प्रत्येक नागरिक के जीवन, स्वतंत्रता और गरिमा की निश्चितता देता है। लेकिन जब तक प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह गरीब हो या अमीर, साक्षर हो या निरक्षर, शक्तिशाली हो या निर्बल, समान रुप से न्याय तक पहुँच नहीं बना पाता है, तब तक संविधान का वास्तविक उद्देश्य प्राप्त नहीं हो सकता। भारत जैसे विशाल और विविधता से लिए देश में लोकतंत्र में यह चुनौती और भी जटिल हो जाती है। यहाँ एक ओर करोड़ों लोग गरीबी रेखा से नीचे जीवन जी रहे है, जिनके पास वकील रखने तक के साधन व धन नहीं होता है, तो दूसरी ओर अपराध और सामाजिक असमानता भी अत्यधिक गहरी है। ऐसे में कानूनी सहायता का अधिकार अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। इसी प्रकार जब हम "दंड और मानव अधिकार" पर चर्चा करते है, तो यह समझना अति आवश्यक हो जाता है कि दंड प्रतिशोध या बदले की भावना से दिया ही नही जाना चाहिए। जबकि आधुनिक न्यायशास्त्र में दंड का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति को सही मार्ग पर लाना और समाज को सुरक्षित बनाना है। किसी भी अभियुक्त या कैदी को भी उसके मूलभूत अधिकार प्राप्त होते है। पुलिस और जेल व्यवस्था समाज में कानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए अति आवश्यक अंग है। लेकिन यदि इन्हीं संस्थाओं में भ्रष्टाचार, पक्षपात, अमानवीय व्यवहार और अधिकारों का उल्लंघन जैसी क्रियाएं होने लगे तो न्याय व्यवस्था की विश्वसनीयता पर निश्चित ही प्रश्न चिन्ह लगना निश्चित है। इस कारण ही समय-समय पर पुलिस और जेल सुधार की मांग समाज में उठती रही।

## 12.2: उद्देश्य

1-छात्र न्यायिक समानता, दंड प्रणाली और मानवाधिकारों की मूल अवधारणा को समझ सकेंगे।

2-छात्र संविधान में दिए गए समानता के अधिकार और जीवन एवं स्वतंत्रता के अधिकार की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

3-छात्र यह जान सकेंगे कि दंड का उद्देश्य केवल अपराधी को दंडित करना नहीं, बल्कि सुधार व पुनर्वास भी है।

4-मानवाधिकार की दृष्टि से पुलिस,न्याय और जेल की भूमिका को पहचान सकेंगे।

5- छात्र पुलिस और जेल व्यवस्था में सुधार की आवश्यकता और उनसे संबंधित प्रमुख समितियों की सिफारिशों को जान सकेंगे

## 12.3:कानूनी सहायता का अर्थ

कानूनी सहायता वह व्यवस्था है जिसके अंतर्गत आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग, निरक्षर वर्ग, वंचित या असहाय व्यक्तियों को पूर्ण रूप से निःशुल्क या रियायती दर पर कानूनी सलाह, अधिवक्ता, न्यायालय की सहायता और अन्य कानूनी सेवाओं की व्यवस्था की जाती हैं, ताकि वे आसानी से न्याय प्राप्त कर सकें। ऐसे व्यक्ति को पूर्ण रूप से मुफ्त या सस्ती कानूनी सुविधाएँ प्रदान करना जो आर्थिक रूप से, सामाजिक या अन्य कारणों से न्यायालय तक पहुँचने में समर्थ  नहीं है। इस स्थिति में कानूनी परामर्श देना, मुकदमा दाखिल करना, दस्तावेज तैयार करना तथा वकील की व्यवस्था उपलब्ध कराना और न्यायालय में प्रतिनिधित्व करना शामिल है।

### 12.3.1:  कानूनी सहायता का अधिकार

कानूनी सहायता का अधिकार केवल एक व्यक्तिगत विशेष का अधिकार ही नहीं है,अपितु यह समाज में न्याय और समानता सुनिश्चित करने वाला एक महत्वपूर्ण उपकरण है, जो गरीब और असहाय नागरिकों को न्याय दिलाने में सहायक सिद्ध होता है। कानूनी सहायता के माध्यम से नागरिक कानूनी शासन के तहत अपने अधिकारों की रक्षा करने में सक्षम होते है। इस अधिकार के बिना आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग न्याय से वंचित रह सकता है, जिसके परिणामस्वरूप समाज में असमानता और अन्याय बड़ने की संभावना होती  हैं। कानूनी सहायता का अधिकार व्यक्ति के लिए एक मौलिक अधिकार है जो संविधान के अनुच्छेद 39A में निहित है,  तथा जो सभी नागरिकों को न्याय तक समान पहुँच सुनिश्चित करने में मदद करता है।

### 12.3.2: कानूनी सहायता के अधिकार के उद्देश्य

कानूनी सहायता का अधिकार केवल किसी व्यक्ति विशेष को वकील दिलाने का साधन नहीं है, बल्कि यह न्याय प्रणाली को और अधिक न्यायसंगत बनाना, समान और सुलभ बनाने का व्यापक प्रयास है। इसके प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित **है-**

**1-प्रत्येक व्यक्ति को न्याय प्राप्त करने का समान अवसर देना:** कानूनी सहायता का सबसे मुख्य उद्देश्य यह है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति, वह चाहे अमीर हो या गरीब, शिक्षित हो या अशिक्षित, उसको

न्याय पाने का पूर्ण अधिकार है। भारत में कई लोग गरीबी, निरक्षरता या सामाजिक पिछड़ेपन व अलगाव के कारण अदालतों तक पहुँच ही नही पाते है। उनके लिए कानूनी सहायता यह सुनिश्चित करती है कि " न्याय **केवल कुछ लोगों का विशेषाधिकार न बनकर सब का अधिकार बने"।**

**2-आर्थिक असमानता को कम करना:** न्याय पाने के लिए अधिकांशतः वकील, दस्तावेज और न्यायालय शुल्क आवश्यकता से अधिक होती है, जो गरीब वर्ग के लिए वहन करना कठिन होता है। कानूनी सहायता का उद्देश्य इस आर्थिक असमानता को समाप्त करना है जिससे कोई व्यक्ति धन के अभाव के कारण न्याय से वंचित न रहे। इससे समाज में समानता और न्याय की भावना को और अधिक बल मिलता है।

**2-कमजोर और वंचित वर्गों की सहायता:** भारत जैसे विविध समाज में अनेक वर्ग समाज में कमजोर है, जैसे- अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, महिलाएं बच्चे, वृद्ध, विकलांग और मजदूर वर्ग। कानूनी सहायता का अधिकार इन सभी वर्गों को समान अवसर उपलब्ध कराकर उन्हें न्यायिक प्रणाली में शामिल करता है।

**3-संविधान के आदर्शों को साकार करना:** भारतीय संविधान का मुख्य उद्देश्य " न्याय, स्वतंत्रता, समानता, और बंधुता" की भावना की स्थापना करना है। कानूनी सहायता का अधिकार इन सभी आदर्शों को व्यवहार में लाने सक्षम का माध्यम है, जो राज्य और नागरिकों के मध्य विश्वास स्थापित करता है कि संविधान केवल एक दस्तावेज ही नहीं बल्कि जीवन में न्याय की गारंटी भी है।

**4-मानवाधिकारों की रक्षा करना:** कानूनी सहायता मानवाधिकारों की रक्षा का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। जब भी किसी व्यक्ति के साथ अन्याय होता है, कारणवश वह अपनी बात को न्यायालय के समक्ष नहीं रख पाता है, तब उसके मानवाधिकारों का हनन होता है। कानूनी सहायता उसे अपने अधिकारों की रक्षा करने का एक अवसर देती है, जिसकी सहायता से उसकी गरिमा बनी रहती है।

**5-न्यायिक प्रणाली में विश्वास बढ़ाना:** जब समाज के सभी वर्गों को समान न्याय मिलता है, तो जनता का विश्वास न्यायपालिका में निश्चित रूप से बढ़ता है। कानूनी सहायता से यह भावना भी विकसित होती है कि न्यायालय केवल आर्थिक रूप से संपन्न लोगों के लिए नहीं , बल्कि देश के प्रत्येक नागरिक के लिए समान है। यह भाव लोकतांत्रिक प्रणाली को और अधिक मजबूत और प्रभावशाली बनाता है।

**6-कानूनी साक्षरता और जागरूकता बढ़ाना:** कानूनी सहायता का उद्देश्य केवल मुकदमों में मदद करना नहीं है, बल्कि सामान्य नागरिकों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक बनाना भी है। कानूनी साक्षरता शिविरों,कार्यशालाओं और लोक अदालतों के द्वारा वह लोगो को बताता है, कि वे किन परिस्थितियों में कानूनी सहायता प्राप्त कर सकते है।

**7-न्यायिक बोझ को कम करना:** कानूनी सहायता के अंतर्गत लोक अदालतें, सुलह केन्द्र और मध्यस्थता जैसी वैकल्पिक प्रणालियां भी शामिल है। इसके माध्यम से कई मामलों का समाधान अदालत के बाहर ही सुलझा लिया जाता है। इससे न केवल लोगों को जल्दी न्याय मिलता है, बल्कि न्यायालयों पर लंबित मामलों का बोझ भी घटता है

**8-कानूनी साक्षरता का प्रसार:** कानूनी सहायता का एक महत्वपूर्ण पहलू कानूनी साक्षरता फैलाना है। जब नागरिक अपने अधिकारों और कानूनों को समझते है, तो समाज में कानून का पालन और व्यवस्था दोनों मजबूत होते है। इससे अपराध, शोषण और भ्रष्टाचार में भी कमी आती है। राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण(NALSA) विभिन्न कानूनी साक्षरता शिविरों का आयोजन करती है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होते है।

**स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न**

1-कानूनी सहायता से आप क्या समझते है?

2-कानूनी सहायता के अधिकार के दो उद्देश्य बताइए।

## 12.4: **दंड व मानव अधिकार**

मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही समाज के सुचारू संचालन के लिए कुछ नियम आचार-विचार और व्यवस्थाओं की आवश्यकता बनी रही हैं। जब भी कोई व्यक्ति इन नियमों का उल्लंघन करता है तो, समाज या राज्य के द्वारा उसे किसी न किसी रूप में दंड दिया जाता हैं। यह दंड समाज में अनुशासन और न्याय को बनाए रखने का एक साधन होता है। परंतु समय के साथ यह प्रश्न उठने लगा कि क्या दंड देने के कारण व्यक्ति के मानव अधिकारों का उल्लंघन नहीं किया जा रहा है ? क्या अपराधी भी एक मानव नहीं है, जिसके कुछ मौलिक अधिकार भी होते है ? इस चिंतन से " दंड व मानव अधिकार" के बीच संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता महसूस हुई।

### 12.4.1: दंड का अर्थ

"दंड" शब्द संस्कृत धातु "दण्ड" से बना है, जिसका अर्थ है-किसी अपराध या अनुचित कार्य के एवज में दी जाने वाली सजा। अर्थात जब कोई भी व्यक्ति समाज या कानून के नियमों का उल्लंघन करता है, तो उसे उसके इस कृत्य के बदले में जो पीड़ा या दंड दिया जाता है,उसे दंड (Punishment) कहा जाता है। यह दंड केवल प्रतिशोध के लिए ही नहीं, बल्कि अपराधी को सुधारने, समाज की रक्षा और अपराध की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए भी अनिवार्य रूप से दिया जाता है।

### 12.4.2: दंड के उद्देश्य

राज्य द्वारा अपराधियों को दंड देने का उद्देश्य केवल व्यक्ति को पीड़ा पहुँचाना ही नहीं होता, बल्कि इसके पीछे समाज की सुरक्षा,अपराध का नियंत्रण और अपराधी के अंदर सुधार जैसी कई व्यापक संभावनाएं निहित होती है। दंड व्यवस्था तभी न्यायपूर्ण कहलाती है जब वह इन सभी उद्देश्यों को पूर्ति करने में सफल होती है।

a) **निवारण** का उद्देश्य : दंड का प्रमुख उद्देश्य यह होता है कि वह अपराधी और समाज के अन्य लोग अपराध को करने से डरें। जब किसी व्यक्ति को अपराध के लिए दंड दिया जाता है तो यह समाज के अन्य लोगों के लिए भी एक चेतावनी का कार्य करता है कि आने वाले समय में यदि वे भी ऐसे

अपराध करेंगे, तो उन्हें भी उसी प्रकार का दंड मिलेगा। इससे अपराध की पुनरावृत्ति में निश्चित ही कमी आएगी।

b) **प्रतिशोध का उद्देश्य : दंड का** यह उद्देश्य सबसे प्राचीन और पारंपरिक है। जिसके अनुसार अपराध का प्रतिशोध लेना ही न्याय माना जाता है। यदि कोई भी व्यक्ति अपराध करता है तो उसे उसके अपराध के अनुसार ही उसे पीड़ा देना न्यायसंगत माना जाता है। दंड का यह प्रकार समाज में यह संदेश देता है कि अपराधी को करने उसके कर्मों के अनुसार फल अवश्य भोगना पड़ता है।

c) **सुधारात्मक उद्देश्य :** यह दंड का आधुनिक और मानवीय दृष्टिकोण है। इस सिद्धांत के अनुसार कोई भी अपराधी समाज का एक सदस्य है, और उसे निश्चित ही सुधारने का अवसर दिया जाना चाहिए। किसी भी अपराधी को उचित शिक्षा,परामर्श,और नैतिक मार्गदर्शन देकर सुधारा जा सकता है।

d) **निवारणात्मक उद्देश्य : दंड के** इस सिद्धांत के अनुसार**,** अपराधी को अस्थाई या स्थाई रूप से कुछ समय के लिए समाज से अलग करके अपराध की पुनरावृत्ति को रोका जा सकता है। कुछ उपाय जैसे, कारावास की सजा, आजीवन निर्वासन या अधिकारों से वंचित रखना आदि उपाय अपनाए जा सकते है।

e) **प्रतिपूरक उद्देश्य :** इस दंड का मुख्य उद्देश्य पीड़ित व्यक्ति को उसकी क्षति की भरपाई दिलाना होता है। अपराधी द्वारा किए गए क्षति की पूर्ति, जैसे आर्थिक रूप से मुआवजा या संपत्ति की वापसी करना होता है।यह सिद्धांत न्याय को संतुलित रूप में स्थापित करने का प्रयास करता है कि अपराधी को दंड मिले और साथ ही पीड़ित को राहत भी मिले। **उदाहरण के लिए** भारतीय दंड संहिता(IPC) की धारा 357 के अनुसार अदालतें मुआवजा देने का आदेश भी दे सकती है।

f) **समाज रक्षा उद्देश्य**: इस उद्देश्य के अंतर्गत समाज को विभिन्न प्रकार के अपराधियों से सुरक्षित रखना प्रमुख होता है , जिससे समाज में व्याप्त भय और असुरक्षा का वातावरण समाप्त हो सके। तथा समाज में कानून के प्रति सम्मान का भाव बढ़े और सामाजिक अनुशासन बना रहे।

g) **पुनर्वास :** यह उद्देश्य सुधारात्मक सिद्धांत से जुड़ा हुआ है परंतु इसका मुख्य आधार अपराधी को समाज में पुनः एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में स्थापित करना होता है। जिसके लिए उनको व्यावसायिक प्रशिक्षण, शिक्षा और मानसिक परामर्श की व्यवस्था किया जाना चाहिए तथा उसे समाज से स्वीकृति और सहयोग निश्चित रूप से प्रदान किया जाना चाहिए।

### 12.4.3**: दंड के प्रकार:**

दंड अनेक प्रकार के होते है, जिसमें से प्रमुख दंड इस प्रकार है-

**a-शारीरिक दंड**- शारीरिक दंड, दंड का सबसे पुराना रूप है, जिसमें अपराधी को शारीरिक रूप से पीड़ा दी जाती थी, जैसे पिटाई करना, अंग भंग, कोड़े लगाना इत्यादि होता था। परंतु आज अधिकांश देशों में इस दंड को अमानवीय मानकर समाप्त कर दिया गया है।

**b-आर्थिक दंड- व्यक्ति को दिया जाने वाला** आर्थिक दंड वह दंड है जिसमें अपराधी को धनराशि देने के रूप में सजा दी जाती है। इसमें अपराधी से जुर्माना या हरजाना के रूप में धन वसूल किया जाता है। यह मुख्यतः छोटे- छोटे अपराधों के लिए प्रचलित है। इसका उद्देश्य था कि अपराधी पर आर्थिक दबाव डाला जाय और समाज में आर्थिक भावना बनाए रखना होता है।

**c-कारावास- इस प्रकार के दंड में** अपराधी को जेल में बंद किया जाता है। यह दंड के प्रकारों में सबसे सामान्य दंड है और इसके विभिन्न प्रकार (साधारण, कठोर,आजीवन आदि ) हो सकते है।

**d-मृत्यु दंड**- दंड का यह प्रकार सबसे गंभीर अपराधों जैसे किसी कि हत्या या आतंकवाद के लिए दिया जाने वाला दंड है, जिसमें अपराधी को मृत्यु दंड दिया जाता है। कई देशों ने इसे अब समाप्त ही कर दिया है, क्यों कि इसे मानव अधिकारों के विरूद्ध माना जाता है।

**e-सामाजिक दंड-** सामाजिक दंड वह दंड है जिसमें किसी व्यक्ति को समाज द्वारा उसके अनुचित व्यवहार, अनैतिक या अस्वीकार्य व्यवहार के कारण दिया जाता है। यह दंड कानूनी नहीं होता है बल्कि इसे सामाजिक रूप से लागू किया गया व्यक्ति पर प्रतिबंध या अपमान होता है।

### 12.4.4: मानव अधिकार

मानव अधिकार वे अधिकार है जो समाज के प्रत्येक व्यक्ति को केवल मनुष्य होने के कारण प्राप्त होते है। ये अधिकार किसी सरकार या संस्था की दी जाने वाली सुविधा नहीं, बल्कि मनुष्य की गरिमा और अस्तित्व से जुड़े प्राकृतिक अधिकार होते है। संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO) ने 10 दिसम्बर 1948 को "मानव अधिकारों की सार्वभौम रूप से घोषणा (Universal Declaration of Human Rights)" जारी की, जिसमें यह स्पष्ट किया गया कि विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार प्राप्त है।

### 12.4.5: मानव अधिकारों के प्रमुख तत्व

मानव अधिकार वे मूलभूत अधिकार है जो प्रत्येक व्यक्ति को केवल मनुष्य होने के कारण प्राप्त होते है। इन अधिकारों का विस्तारपूर्वक वर्णन इस प्रकार है –

**a-जीवन का अधिकार**: यह संविधान द्वारा प्रदत्त सबसे मौलिक और प्रथम अधिकार है। जिसमें प्रत्येक उचित कारण उसके जीवन से वंचित नहीं किया जा सकता है। यह अधिकार **संविधान द्वारा प्रत्येक** व्यक्ति को सम्मानपूर्वक जीवन यापन करने का अधिकार है तथा किसी भी व्यक्ति को यह **अनुच्छेद 21** के अंतर्गत दिया गया है, जिसमें राज्य को यह सुनिश्चित करना होता है कि कोई भी नागरिक भूख, हिंसा, युद्ध या अत्याचार से परेशान न किया जाय।

**b-स्वतंत्रता का अधिकार: संविधान** प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से सोचने, बोलने, चलने, कार्य करने और निर्णय लेने की स्वतंत्रता प्रदान करता है, शर्त यह होती कि वह किसी अन्य के अधिकारों का हनन न करें अपनी सीमा में रहे। इसमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार शामिल है। इस अधिकार के अंतर्गत हर व्यक्ति को अपनी राय व्यक्त करने की स्वतंत्रता, संगठन बनाने और शांतिपूर्ण प्रदर्शन करने की स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त है।

**c-समानता का अधिकार:** यह अधिकार भारतीय संविधान के **अनुच्छेद 14 से 18** में निहित है जिसमें इसका प्रमुख उद्देश्य समाज में आर्थिक रूप से व सामाजिक रूप से समानता स्थापित करना होता है। इस अधिकार के अनुसार समाज के सभी मनुष्य जन्म से समान है और उनको समाज में समान सम्मान व अवसर मिलने चाहिए। किसी भी व्यक्ति के साथ जाति, रंग, लिंग, धर्म या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए।

**d-न्याय और विधिक सुरक्षा का अधिकार: संविधान में** किसी व्यक्ति को दंड या आरोप तभी दिया जा सकता है जब उसके विरूद्ध निष्पक्ष न्यायालय में सुनवाई हो जाए। बिना सुनवाई के किसी को भी मनमाने ढंग से हिरासत में नहीं रखा जा सकता है। जब तक व्यक्ति का दोष सिद्ध ना हो जाए तब तक उसे निर्दोष माना जाएगा। यह अधिकार व्यक्ति को भेदभाव के बिना कानूनी निवारण प्राप्त करने का अवसर देता है और इसमें निशुल्क रूप से कानूनी सहायता प्राप्त करने का अधिकार भी शामिल है।

**e-यातना और अमानवीय व्यवहार से मुक्त:** यह संविधान का एक मौलिक मानवाधिकार है जो प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी प्रकार की क्रूरता व अमानवीय व्यवहार और अपमानजनक यातना से भी बचाता है। साथ ही यह अधिकार व्यक्ति की मानव गरिमा की रक्षा भी करता है। यह पुलिस या जेल अधिकारियों द्वारा किया जाने वाला किसी भी प्रकार की हिंसा, क्रूरता या अमानवीय व्यवहार को पूर्ण रूप से प्रतिबंधित करता है।

**f-विचार आत्मा व धर्म की स्वतंत्रता:** संविधान द्वारा प्रदत्त इस अधिकार के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार को स्वतंत्र रूप से रखने, अपनी मान्यताओं के अनुसार चलने और किसी भी धर्म विशेष का पालन करने की स्वतंत्रता प्राप्त है, साथ ही उसे किसी भी धर्म को अपनी इच्छानुसार बदलने या त्यागने की भी स्वतंत्रता है। इसमें राज्य किसी भी धर्म विशेष को बढ़ावा नहीं दे सकता।

**g-अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता:** यह अधिकार लोकतंत्र की आत्मा कहलाता है, इसके अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करने का अधिकार है-चाहे वह बोलकर व्यक्त करे, लिखकर या मीडिया के माध्यम से व्यक्त करे। इस अधिकार के साथ एक जिम्मेदारी भी जुड़ी है कि प्रत्येक व्यक्ति की अभिव्यक्ति से किसी की प्रतिष्ठा या सुरक्षा को किसी प्रकार से क्षति न पहुँचे।

**h-शिक्षा का अधिकार: इस अधिकार के अनुसार** प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का समान अधिकार प्राप्त है, जिससे वह एक जिम्मेदार नागरिक बन सके। इसके लिए शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जो प्रत्येक नागरिक को अपने अधिकारों कर्तव्यों का बोध कराती है

**i-सम्मानजनक जीवन और सामाजिक सुरक्षा का अधिकार:** यह अधिकार भी व्यक्ति के मौलिक अधिकार के अंतर्गत ही आता है जो प्रत्येक व्यक्ति को अपनी स्वयं की गरिमा और सुरक्षा प्रदान करता है। यह अधिकार यह भी सुनिश्चित करता है कि प्रत्येक व्यक्ति को भोजन, वस्त्र, आवास, स्वास्थ्य और रोजगार जैसी मूलभूत आवश्यकताएँ प्राप्त हो सके।

### 12.4.6: **भारत में दंड प्रणाली और मानव अधिकारों से संबंधित प्रमुख समस्याएं**

भारत में दंड प्रणाली का मुख्य उद्देश्य अपराधियों के लिए दंड की व्यवस्था करना है, जिससे, समाज में शांति और व्यवस्था बनाए रखना तथा न्याय सुनिश्चित करना संभव हो सके, लेकिन व्यवहारिक रूप से इस प्रणाली में अनेक कमियां देखने को मिलती है जो मानव के अधिकारों का उल्लंघन करती है। इन समस्याओं का वर्णन इस प्रकार है-

**1-जेलों में आवश्यकता से अधिक भीड़:** भारत की अधिकांश जेलों मे अपनी क्षमता से अधिक कैदियों को रखा गया है। अधिकांश जेलों में 13% से ज्यादा बंदी रखे गए है, जिनके रहने, स्वास्थ्य, भोजन और सुरक्षा की सुविधाएं अपर्याप्त देखने को मिलती है। अधिकतर कैदी अंडर-ट्रायल है, जिनका मुकदमा अभी पूरा भी नहीं हुआ है उनको भी वहीं पर रखा गया है। यह **जीवन और गरिमा के अधिकार (अनुच्छेद 21)** का सीधा-सीधा उल्लंघन है।

**2-पुलिस हिरासत में अत्याचार:** पुलिस द्वारा पूछताछ के दौरान हिंसा की, मानसिक उत्पीड़न की और अवैध हिरासत जैसी घटनाएं लगातार होती दिखती है। डी. के. बसु बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य (1997)"में सुप्रीम कोट ने साफ शब्दों में कहा था कि हिरासत में यातना देना असंवैधानिक है। यह **मानव गरिमा, स्वतंत्रता और न्याय के सिद्धांतों** का सीधा उल्लंघन माना गया है।

**3-न्यायिक प्रक्रिया में अत्यधिक देरी:** न्यायिक प्रक्रिया में अत्यधिक समय लगना भी एक गंभीर समस्या है। अभी भी लाखों मामले अदालतों में लंबित है। "न्याय में देरी, न्याय से वंचित करना' है। की स्थिति बन जाती है। इससे पीड़ित और आरोपी दोनों के अधिकार प्रभावित होते है।

**4-गरीब और वंचित वर्गों के लिए न्याय की असमान पहुँच:** गरीब और वंचित वर्ग के लिए न्याय पाना अत्यंत कठिन कार्य है। जिस कारण वे अच्छे वकील नहीं कर पाते है। उनके लिए कानूनी प्रक्रिया अत्यंत जटिल व महंगी होती है जिस कारण ग्रामीण व अशिक्षित वर्ग न्याय से वंचित रह जाता है। जो संविधान द्वारा दिए गए **समानता के अधिकार (अनुच्छेद 14)** और **न्याय की समान पहुँच (अनुच्छेद 39A)** के विरुद्ध है।

**5-कैदियों के मानवाधिकारों की अवहेलना:** जेलों में कैदियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है, चिकित्सा शिक्षा और परामर्श की कमी देखने को मिलती है तथा महिलाओं और बच्चों के लिए सुरक्षा का अभाव जैसी समस्याएं सामने आई जो प्रत्यक्ष रूप से मानवाधिकारों की अवहेलना है। सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि "कैदी भी मानव है, और उसे भी मौलिक अधिकार प्राप्त है।

**6-पुनर्वास और समाज में पुनः समावेशन की कमी:** कैदियों को समाज में पुनः समावेशन की समस्या का सामना करना पडता है तथा उनको रिहाई के बाद भी अपराधी के रूप में समाज में स्वीकार नहीं किया जाता। उनको रोजगार या सम्मानजनक जीवन के अवसर नहीं मिल पाते है जिसके कारण वे पुनः अपराध की दुनियां की ओर लौट जाते है, जो दंड प्रणाली में सुधारात्मक उद्देश्य के विपरीत होता है।

**7-पुलिस और न्यायिक तंत्र में भ्रष्टाचार व राजनीतिक हस्तक्षेप**: पुलिस व न्यायिक तंत्र में होने वाले भ्रष्टाचार के कारण अनेक बार जाँच में निष्पक्षता नहीं पाई जाती है। अनेक बार राजनीतिक प्रभाव के

कारण भी अभियुक्त आराम से बचकर निकल जाते है, जिसके कारण निश्चित ही न्याय प्रणाली की विश्वसनीयता और मानव अधिकार दोनों प्रभावित होते है।

**8-महिला और बाल अपराधों में संवेदनशीलता की कमी:** यह निश्चित रूप से अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों का उल्लंघन है कि पुलिस व न्याय तंत्र में कई बार महिलाओं और बच्चों से जुड़े मामलों में उनके साथ उचित व्यवहार नहीं होता। यौन हिंसा या बाल उत्पीड़न जैसे मामलों में पीड़ित के अधिकारों की अनदेखी होती दिखती है।

**12.4.7: भारत में दंड प्रणाली और मानव अधिकारों से संबंधित सुधारात्मक सुझाव**

**a-जेलों में भीड़भाड़ के समाधान हेतु सुधार:** प्रशासन द्वारा विशेष फास्ट ट्रैक कोर्ट बनाकर लंबित मामलों को शीघ्र निपटाया जाना चाहिए, तथा छोटे अपराधों में आरोपियों को आसानी से जमानत भी दी जाए। योग्य कैदियों को खुली जेलों में रखकर उनको पुनर्वास और श्रम से जोड़ा जाए तथा साथ ही छोटे स्तर के अपराधों के लिए जेल की स्थान पर समाजसेवा जैसी वैकल्पिक सजा का प्रावधान होना चाहिए।

**b-पुलिस हिरासत में अत्याचार रोकने के उपाय**: जेल में सभी स्थानों पर पूछताछ कक्षों में कैमरे लगाए जाए। तथा पुलिसकर्मियों को मानव अधिकारों, व्यवहार और नैतिकता पर नियमित व्यवहार हेतु प्रशिक्षण दिया जाए, तथा हिरासत में होने वाली मौत या अत्याचार के मामलों की निष्पक्षता के साथ जाँच स्वतंत्र एजेंसी (जैसे NHRC) करें।

**c-न्यायिक प्रक्रिया में देरी कम करने के उपाय:** सभी अदालतों में पर्याप्त न्यायाधीशों की व्यवस्था और सहायक स्टाफ की नियुक्ति होनी चाहिए और तकनीकी माध्यमों से दस्तावेज़ व गवाही ऑनलाइन स्वीकार की जानी चाहिए। तथा महिलाओं, बच्चों और गंभीर अपराधों के लिए अलग अदालतों की स्थापना की जाए, साथ ही मध्यस्थता, सुलह और लोक अदालतों को बढ़ावा दिया जाए।

**d-गरीब और वंचित वर्गों के लिए न्याय की समान पहुँच:** प्रत्येक ज़िले में विधिक सेवा प्राधिकरण की पहुँच को सुनिश्चित किया जाना चाहिए। ग्रामीणों के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में समय-समय पर जागरूकता शिविरों का आयोजन किया जाए, तथा अनुसूचित जाति, जनजाति और महिलाओं के लिए विशेष कानूनी सहायता योजनाएँ की व्यवस्था लागू हों।

**e-कैदियों के मानवाधिकारों की रक्षा हेतु सुधार:** जेल कर्मियों को कैदियों के प्रति सम्मानजनक व्यवहार का प्रशिक्षण आवश्यक रूप से दिया जाना चाहिए। तथा प्रत्येक जेल में चिकित्सक विशेषज्ञ, मनोवैज्ञानिक और कुशल शिक्षक की नियुक्ति की जाय, साथ ही महिला जेलों में महिला कर्मियों की अनिवार्य रूप से नियुक्ति की जाए।

**f-पुनर्वास और पुनः समावेशन की दिशा में प्रयास: जेल में** कैदियों को रोजगारपरक कौशलों का ज्ञान सिखाया जाए ताकि रिहाई के पश्चात वे अपनी जीविका चला सकें।अपराधियों के मानसिक और सामाजिक सुधार हेतु सही प्रकार के मार्गदर्शन की व्यवस्था हो। NGO और सरकार दोनों मिलकर

"Post-release support programs" (रिहाई के बाद मिलने वाले सहयोग से संबंधित समस्याएं हेतु कार्यक्रम) चलाएँ।

**g-भ्ष्टाचार और राजनीतिक हस्तक्षेप कम करने के उपाय:** सुप्रीम कोर्ट के निर्देशा के अनुसार पुलिस की नियुक्ति और तबादले में राजनीतिक हस्तक्षेप पूर्ण रूप से समाप्त किया जाए। तथा जाँच के लिए जांच एजेंसियों को स्वतंत्र और जवाबदेह बनाया जाए, ताकि न्यायिक नियुक्तियों और फैसलों की प्रक्रिया में पारदर्शिता हो।

**स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न:** 3-दंड से आप क्या समझते है ?

4-संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकारों की घोषणा कब जारी की ?

## 12.5: पुलिस और जेल सुधार

किसी भी लोकतांत्रिक देश में कानून और व्यवस्था बनाए रखने उत्तरदायित्व  पुलिस और जेल प्रशासन पर निर्भर करता है। पुलिस समाज में शांति व्यवस्था, सुरक्षा व्यवस्था और न्याय व्यवस्था की पहली कड़ी मानी जाती है, जबकि जेल प्रणाली अपराधियों के सुधार और पुनर्वास का केंद्र होती है। भारत में पुलिस और जेल दोनों ही व्यवस्थाएँ ब्रिटिश शासनकाल की देन हैं, जिनका मुख्य  उद्देश्य जनता की सेवा नहीं बल्कि शासन की सत्ता को बनाए रखना था। स्वतंत्रता के पश्चात भी इन व्यवस्थाओं में बहुत अधिक परिवर्तन नहीं हो पाया। इसलिए, आज इनके सुधार की आवश्यकता और भी अधिक महसूस की जा रही है।

## 12.5.1: पुलिस सुधार

पुलिस सुधार का अर्थ है, पुलिस व्यवस्था में ऐसे आवश्यक परिवर्तन, जिनका उद्देश्य पुलिस को और अधिक पारदर्शी, उत्तरदायी,जन-हितैषी, प्रभावी और पेशेवर नागरिक बनाना है। इन सुधारों का मुख्य उद्देश्य कानून-व्यवस्था को बनाए रखना, अपराध नियंत्रण को मजबूत करना और नागरिकों का पुलिस पर विश्वास  को मजबूत करना होता है।

12.**5.2: वर्तमान में पुलिस व्यवस्था की प्रमुख समस्याएँ** -  भारत में पुलिस व्यवस्था देश की सुरक्षा और न्याय व्यवस्था का आधार स्तंभ मानी जाती है, लेकिन वर्तमान समय में यह अनेक जटिल चुनौतियों का सामना कर रही है। इन समस्याओं को नीचे विस्तार से समझाया गया है-

**1. राजनीतिक हस्तक्षेप एवं दबाव:** पुलिस की निष्पक्ष रवैये पर सबसे बड़ा प्रभाव राजनीतिक हस्तक्षेप का देखने को मिलता है। कई बार सरकार या राजनीतिक दल अपने हितों को साधने के लिए पुलिस का उपयोग भी करते हैं। जैसे- नियुक्तियाँ, स्थानांतरण, और मामलों की जांच में राजनीतिक दबाव डालना आज आम बात हो गई है। इसी कारण पुलिस स्वतंत्र रूप से अपना कार्य नहीं कर पाती है और परिणाम

स्वरूप कानून का समान रूप से पालन नहीं हो पाता। इससे जनता का विश्वास कानून से और भी कमज़ोर हो जाता है।

**2. भ्रष्टाचार एवं रिश्वतखोरी:** आज के युग में भ्रष्टाचार पुलिस व्यवस्था की जड़ में गहराई तक फैला हुआ है। जिस कारण कई बार अपराधियों से रिश्वत लेकर उन्हें बचाया भी जाता है यहाँ तक कि कमजोर मुकदमे भी तैयार किए जाते हैं। ट्रैफिक नियंत्रण, एफ.आई.आर. दर्ज करने या जांच कार्य में भी रिश्वतखोरी की शिकायतें आज आम बात हो गई हैं। इससे पुलिस की छवि जनता की नज़र में और भी नकारात्मक बनती जा रही है।

**3. अनावश्यक बल प्रयोग एवं मानवाधिकार हनन:** अनेक बार पुलिस अपराध को रोकने या पूछताछ के दौरान अत्यधिक बल का प्रयोग भी करती है। यहाँ तक कि हिरासत में यातना, फर्जी मुठभेड़, और भीड़ नियंत्रण के दौरान अत्यधिक हिंसा जैसी घटनाएँ मानवाधिकारों के गंभीर उल्लंघन को दर्शाती हैं। ऐसे मामलों से पुलिस की "जन रक्षक" की बजाय "भय का प्रतीक" के रूप में छवि बनती जा रही है।

**4. जनता के प्रति असंवेदनशील व्यवहार:** बहुत से पुलिस कर्मी जनता के साथ कठोर व्यवहार, अभद्र और असहयोगपूर्ण व्यवहार करते पाये जाते हैं। पीड़ितों की शिकायत न सुनना, रिपोर्ट दर्ज करने में आनाकानी करना, और गरीब या कमजोर वर्गों के प्रति उदासीनता का व्यवहार करने से जनता में असंतोष और अविश्वास की भावना फैलती है। संवेदनशीलता और सहानुभूति की कमी पुलिस-जन संबंधों को कमजोर बनाती है।

**5. संसाधनों की कमी और कार्य का अत्यधिक बोझ:** कई बार पुलिस बल की संख्या बहुत कम होती है, जबकि अपराधों की संख्या बहुत तीव्र गति से बढ़ रही है। आधुनिक उपकरणों, वाहनों, हथियारों और प्रशिक्षण की भी अत्यधिक कमी देखने को मिलती है। इसके अलावा, लंबी ड्यूटी, छुट्टियों का अभाव और मानसिक तनाव के कारण पुलिसकर्मियों की कार्यक्षमता भी प्रभावित होती है।

### 12.5.3:पुलिस सुधार के उपाय (Measures for Police Reforms)

भारत की पुलिस व्यवस्था में सुधार की आवश्यकता लंबे समय से महसूस की जा रही है। पुलिस को जनता की रक्षक संस्था के रूप में फिर से स्थापित करने के लिए अनेक ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है। निम्नलिखित उपाय इस दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं —

**1. राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्ति: अगर** पुलिस स्वतंत्र और निष्पक्ष रूप से कार्य करें तो उसके लिए सबसे पहले उसे राजनीतिक प्रभाव से मुक्त करना अति आवश्यक है। राज्य सरकारों को यह सुनिश्चित करना होगा कि पुलिस अधिकारियों की नियुक्ति, उनकी पदोन्नति और स्थानांतरण केवल **योग्यता और प्रदर्शन** के आधार पर ही होना चाहिए, न कि राजनीतिक दबाव के कारण इसके लिए एक **स्वतंत्र पुलिस आयोग** की स्थापना की जानी चाहिए, जो इन मामलों की निगरानी सही प्रकार से करे।

**2. सुप्रीम कोर्ट के निर्देशों का पालन (प्रकाश सिंह बनाम भारत सरकार, 2006):** सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा इस ऐतिहासिक मामले पर पुलिस सुधार के लिए **7 प्रमुख दिशानिर्देश** दिए थे, जिनका पालन अत्यधिक अनिवार्य किया जाना चाहिए —

1-राज्य में **राज्य सुरक्षा आयोग** का गठन किया जाय, जिससे सरकार का अनुचित प्रभाव कम हो।

**2-डीजीपी** का निश्चित कार्यकाल निर्धारित किया जाय।

3- पुलिस अधिकारियों का मनमाना स्थानांतरण न सके हो।

4-पुलिस में **जांच शाखा** और **कानून-व्यवस्था शाखा** दोनों को अलग किया जाए।

**5-पुलिस शिकायत प्राधिकरण** का गठन होना चाहिए।

6-प्रत्येक राज्य में **पुलिस स्थापना बोर्ड** की स्थापना होनी चाहिए।

7-जवाबदेही और पारदर्शिता सुनिश्चित की जानी चाहिए।

अगर इन सुझावों को पूर्ण रूप से लागू कर दिया जाय तो पुलिस व्यवस्था में क्रांतिकारी सुधार आ सकता है।

**3. प्रशिक्षण और संवेदनशीलता का विकास:** पुलिस अधिकारियों और कर्मचारियों को केवल कानून या हथियारों का प्रशिक्षण ही नहीं दिया जाना चाहिए, बल्कि **मानवाधिकार, महिला व बाल सुरक्षा, तनाव प्रबंधन, और जनसंपर्क कौशल** का प्रशिक्षण भी दिया निश्चित रूप से दिया जाना चाहिए।

**4. सामुदायिक पुलिसिंग :** पुलिस और जनता के बीच विश्वास का संबंध बनाना बहुत आवश्यक होता है। इसके लिए **जनसंपर्क अभियान चलाना** , **महिला हेल्प डेस्क की सुविधा**, समय-समय पर **युवाओं के लिए जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन**, और **स्थानीय समुदाय के साथ संवाद** को बढ़ावा दिया जाए।

**5-संसाधनों में वृद्धि और कार्य स्थिति में सुधार:** पुलिस बल में कर्मचारियों की संख्या और बढ़ाई जाय जिससे प्रति व्यक्ति कार्यभार कम हो सके। उनको पर्याप्त अवकाश, आधुनिक उपकरण, उचित वेतन और मानसिक सहायता मिले सके। तथा उनकी कार्यक्षमता और मनोबल दोनों में और वृद्धि होगी।

### 12.5.4: जेल सुधार

जेल सुधार की भूमिका किसी भी सभ्य समाज में अत्यंत आवश्यक और महत्वपूर्ण होती है। इसका उद्देश्य केवल अपराधियों को सजा देना नहीं अपितु उन्हें सुधारकर फिर से समाज का उपयोगी सदस्य

बनाना होता है । जेल सुधार कैदियों को शिक्षा देना, व्यवसायिक प्रशिक्षण, परामर्श और मानसिक समर्थन भी प्रदान करते है , जिनसे उनमें आत्मविश्वास और सामाजिक जिम्मेदारी की भावना का विकसित हो सके और वे नए जीवन की तैयारी कर सकें। इन सुधारों के माध्यम से जेलों को पुनर्वास केंद्रों के रूप में विकसित करने का प्रयास किया जाता है ताकि समाज में अपराध की पुनरावृत्ति को कम किया जा सक।

## 12.5.5: जेल सुधार के प्रमुख उपाय

वर्तमान में जेलों में सुधार की अत्यधिक आवश्यकता है क्यों कि जेलों में सुधार का एकमात्र उद्देश्य कारागारों को सजा की जगह सुधार और पुनर्वास का केंद्र बनाने की अधिक आवश्यकता है।कैदियों के साथ भीड़भाड़, अमानवीय व्यवहार और संसाधनों की कमी जैसी समस्या को दूर कर कैदियों के मानवाधिकारों की रक्षा करना और समाज में फिर से उसका उचित पुनर्वास सुनिश्चित करना आवश्यक है । प्रमुख जेल सुधार उपाय इस प्रकार है-

**1-मानव अधिकारों की सुरक्षा:** कैदियों को भी भोजन, स्वास्थ्य, शिक्षा और सम्मानपूर्वक व्यवहार का अधिकार निश्चित रूप से मिलना चाहिए ।जबकि भारत ने संयुक्त राष्ट्र के कैदी अधिकार मानक नियम को स्वीकार किया है, जिसका पालन निश्चित रूप से किया जाना चाहिए। अगर जेल में कैदियों के मानवाधिकारों की अवहेलना नहीं होगी तो उनमें अपराध के दूरी बनने की संभावना अधिक होगी जो आवश्यक है।

**2-भीड़भाड़ में कमी:** जेलों में आवश्यकता से अधिक भीड़भाड़ होना, जिसको कम करना एक प्रमुख सुधार उपाय है । अधिकांश भारतीय जेलों में क्षमता से अधिक कैदी रखे जाते है, जिनसे उनकी रहने, भोजन, स्वच्छता और स्वास्थ्य जैसी सुविधाएं प्रभावित होती है । इस समस्या को कम करने के लिए अपराधों के लिए वैकल्पिक दंड, पैरोल, जमानत और तेज न्याय प्रक्रिया जैसे उपाय अपनाए जा सकते है जिससे जेल में भीड़भाड़ में कमी आए।

**3-पुनर्वास और शिक्षा:** पुनर्वास और शिक्षा जेल सुधार के महत्वपूर्ण साधन है । जिसका उद्देश्य अपराधियों को सुधारकर समाज में फिर से उपयोगी नागरिक का निर्माण करना है। जेलों में व्यावसायिक प्रशिक्षण देना, साक्षरता कार्यक्रम चलाना, नैतिक शिक्षा और परामर्श जैसे सेवाएँ दी जानी चाहिए, जिससे कैदी आत्मनिर्भर बन सकें और रिहाई के बाद सम्मानपूर्वक जीवन जी सकें।

**4-स्वास्थ्य सुविधाएँ:** जेल सुधार करने के लिए यह आवश्यक है कि वहाँ की स्वास्थ्य सुविधाएं उपयुक्त होनी चाहिए। जेलों अक्सर इससे भी इससे भ्रष्टाचार और दुरुपयोग बढ़वा मिलता है, और नागरिकों में असंतोष की भावना पनपती है। प्रत्येक जेल में योग्य चिकित्सक, दवाएँ, मानसिक स्वास्थ्य परामर्श, स्वच्छ भोजन और स्वच्छ जल की व्यवस्था सुनिश्चित की जानी चाहिए, ताकि कैदियों का शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य बना रहे।

**5-महिला कैदियों के लिए विशेष व्यवस्था:** महिला कैदियों की सुरक्षा की व्यवस्था, सम्मान और स्वास्थ्य के लिए अलग आवास, महिला कर्मियों की नियुक्ति, गर्भवती और मातृत्व देखभाल की सुविधा आवश्यक है। साथ ही उनके बच्चों की शिक्षा और देखभाल के लिए विशेष प्रावधान किए जाने चाहिए ताकि उनका विकास प्रभावित न हो।

पुलिस और जेल सुधार का विषय केवल प्रशासनिक आवश्यकता नहीं बल्कि मानव गरिमा और न्याय के सिद्धांन्तों को सशक्त करने का साधन भी है।यदि पुलिस निष्पक्षता के साथ, पारदर्शी और जनता के प्रति संवेदनशील बने और जेलें दंड या सजा के स्थान पर पुनर्वास के केंद्र बन जाएं तो भारत की न्याय प्रणाली और अधिक मानवीय,विश्वसनीय और प्रभावी बन सकती है।

**स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न :** 5-पुलिस सुधार हेतु कोई दो उपाय बताइए।

6-जेल सुधार के कोई दो उपाय बताइए।

## 12.6: सारांश

प्रस्तुत इकाई न्याय तथा मानवाधिकार, कानूनी सहायता,दंड प्रणाली तथा पुलिस और जेल सुधार पर केंद्रित है। संविधान प्रत्येक नागरिक को समानता, जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करती है। कानूनी सहायता का अधिकार (अनुच्छेद 39A) गरीब और वंचित वर्गों को न्याय तक पहुँच सुनिश्चित करता है। तथा दंड का उद्देश्य केवल सजा देना नहीं बल्कि अपराधी का सुधार और समाज की सुरक्षा है।मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति को जन्मसिद्ध रूप से प्राप्त है- जीवन, स्वतंत्रता, समानता और गरिमा इनमें प्रमुख है। भारत की दंड प्रणाली में जेलों में भीड़, पुलिस अत्याचार, न्याय में देरी और गरीबों की न्याय तक सीमित पहुँच जैसी समस्याएं है। इनके समाधान हेतु पुलिस को निष्पक्ष, पारदर्शी और तकनीकी रूप से सक्षम बनाना तथा जेलों को दंड के स्थान पर सुधार और पुनर्वास केन्द्र में बदलना आवश्यक है।

## 12.7: शब्दावली

1-न्यायिक समानता-न्याय के समक्ष सभी व्यक्तियों का समान दर्जा, जिसमें किसी भी प्रकार का भेदभाव न हो।

2-कानूनी सहायता-आर्थिक रूप से कमजोर व्यक्तियों को न्याय पाने हेतु मुफ्त या सस्ती कानूनी सेवाएँ जैसे वकील, परामर्श, दस्तावेज तैयार करना आदि।

3-. मानवाधिकार-वे अधिकार जो हर व्यक्ति को केवल मनुष्य होने के कारण प्राप्त होते हैं।

4- मानवाधिकार-वे अधिकार जो हर व्यक्ति को केवल मनुष्य होने के कारण प्राप्त होते हैं।

5-**विधिक सेवा प्राधिकरण**-गरीब और वंचित वर्ग को कानूनी सहायता उपलब्ध कराने वाली संस्था।

6-**अंडर-ट्रायल**-वह व्यक्ति जिसका मुकदमा अभी पूरा नहीं हुआ है, पर जेल में बंद है।

7-**सामुदायिक पुलिसिंग**-पुलिस और जनता के बीच विश्वास एवं सहयोग बढ़ाने की व्यवस्था।

8-**न्यायिक प्रक्रिया**-न्यायालय द्वारा आरोप, सुनवाई, साक्ष्य और निर्णय की प्रक्रिया।

## 12.8:अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1-आर्थिक रूप से कमजोर व्यक्तियों को न्याय हेतु मुफ्त या सस्ती कानूनी सहायता प्रदान करना।

2-प्रत्येक व्यक्ति को न्याय प्राप्त करने के समान अवसर देना तथा कमजोर व वंचित वर्ग को सहायता देना।

3-किसी गलती, अपराध या अनुशासनहीनता के बदले दी जाने वाली सज़ा या परिणाम।

4- ने 10 दिसम्बर 1948 को।

5-प्रशिक्षण और संवेदनशीलता का विकास तथा राजनीतिक हस्तक्षेप की कमी।

6-पुनर्वास और शिक्षा तथा मानवाधिकारों की रक्षा।

## 12.9: संदर्भ ग्रंथ सूची:

1- बाबा साहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर, *भारतीय संविधान*-संविधान, मौलिक अधिकार, न्याय एवं समानता पर आधारित मूल ग्रंथ।

2-डॉ. आर. के. राठौर, *भारतीय विधि एवं न्याय व्यवस्था*-भारतीय न्याय प्रणाली, विधिक सहायता और दंड व्यवस्था का विस्तृत वर्णन।

3- डॉ. एस. एन. दुबे, *मानवाधिकार : सिद्धांत और व्यवहार*-मानवाधिकारों का इतिहास, स्वरूप और भारतीय परिप्रेक्ष्य।

4- राम आहुजा, *भारतीय मानवाधिकार व्यवस्था*-पुलिस, जेल सुधार और मानवाधिकार उल्लंघन पर प्रामाणिक सामग्री।

5- प्रो. प्रशांत कुमार, पुलिस प्रशासन-भारतीय पुलिस व्यवस्था, समस्याएँ और सुधार उपाय।

6-रतनलाल एवं धीरेन दास, भारतीय दंड संहिता (IPC)-अपराध, दंड के प्रकार और कानूनी प्रक्रियाएँ।

**7**-राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (NALSA), वार्षिक रिपोर्टें-कानूनी सहायता, लोक अदालतें तथा विधिक सेवा कार्यक्रम।

8-D.D. Basu, Introduction to the Constitution of India- Fundamental Rights, Equality before Law, Legal Aid आदि पर प्रामाणिक अंग्रेज़ी स्रोत।

9- M. P. Jain, Indian Constitutional Law-भारतीय संविधान, न्यायिक समानता और विधिक प्रक्रियाओं की विस्तृत व्याख्या।

10-United Nations, Universal Declaration of Human Rights (1948)-मानवाधिकारों से संबंधित अंतरराष्ट्रीय घोषणा।

## 12.10:निबंधात्मक प्रश्न

1-न्यायिक समानता के अधिकार को विस्तारपूर्वक समझाइए।

2-दंड व मानवाधिकार से आप क्या समझते है? दंड व मानवाधिकार के मध्य संबंधों की व्याख्या कीजिए।

3-जेल सुधार की आवश्यकता को समझाइए तथा जेल सुधार के उपायों का वर्णन कीजिए।

# इकाई 13 प्रदूषण का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य: पर्यावरण और पृथ्वी के जीवन पर इसके प्रभाव


**13.1 परिचय**

**13.2 इकाई के उद्देश्य**

**13.3 प्रदूषण का अर्थ एवं अवधारणा**

**13.4 प्रदूषण का एतिहासिक परिपेक्ष्य**

**13.5 भारत में प्रदूषण का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य**

**अपनी प्रगति जानिये**

**13.6 पर्यावरण अवधारणा एवं अर्थ**

**13.7 प्रदूषण का पर्यावरण पर प्रभाव**

**13.8 प्रदूषण का जीवन पर प्रभाव**

**अपनी प्रगति जानिये**

**13.9 सारांश**

**13.10 मुख्य शब्द**

**13.11 अपनी प्रगति जानिये के उत्तर**

**13.12 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न**

**13.13 संदर्भ सूची**

## 13.1 परिचय

पृथ्वी के चारों ओर का वातावरण उसका पर्यावरण कहलाता है। पर्यावरण दो शब्दों से मिलकर बना है-

परि +आवरण , परि का अर्थ है- चारों ओर ,तथा आवरण का अर्थ है- ढकने वाली परत,

अर्थात पृथ्वी में कई परतें है जो इस ग्रह को विशिष्टता प्रदान करती हैं तथा इसमें जीवन की उपलब्धता एवं निरन्तरता को बनाये रखने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिसे पर्यावरण कहते है। पर्यावरण हमारे चारों और उपलब्ध जैविक एवं अजैविक घटकों का समुच्चय है। प्राकृतिक संसाधनों का अनियोजित एवं अनियंत्रित विदोहन पर्यावरणीय असंतुलन की स्तिथि उत्पन्न करता है। तथा प्रदूषण को बढ़ावा देता है। इसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि नदियों की सफाई करने के बजाय यह ज्यादा महत्वपूर्ण है कि नदियों को दूषित न किया जाये, उनमें मानवीय एवं ओदयोगिक अपशिस्ट न डालें जाये तो नदियां स्वाभाविक रूप से खुद को स्वच्छ कर लेती है।

पृथ्वी में जीवाश्म ईंधन और भूमि उपयोग से ग्रीनहाउस गैस (जीएचजी) उत्सर्जन 2019 में एक नए स्तर पर पहुंच गया है। 2015 में पेरिस समझौते ने वैश्विक तापमान वृद्धि को पूर्व-औद्योगिक स्तरों से 1.5 डिग्री सेल्सियस और 2 डिग्री सेल्सियस तक सीमित करने के लिए लक्ष्य निर्धारित किये गये थे। जिन्हें प्राप्त नहीं किया जा सका। सभी क्षेत्रों और वैश्विक क्षेत्रों में इन स्तिथियों से निपटने तथा समाधान रुझानों करने के लिए समय सीमा कम हो रही है। वैश्विक जीएचजी उत्सर्जन स्रोतों को आमतौर पर पांच व्यापक क्षेत्रों के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है, जो जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल (आईपीसीसी) वर्किंग ग्रुप III (डब्ल्यूजी 3) द्वारा ऊर्जा प्रणालियों, उद्योग, भवनों, परिवहन और एएफओएलयू (कृषि, वानिकी और अन्य भूमि उपयोग) के रूप में विशेषता है। ये क्षेत्र हैं

- ऊर्जा आपूर्ति
- ऊर्जा मांग
- गैर-ऊर्जा से संबंधित प्रक्रिया उत्सर्जन
- भूमि-आधारित उत्सर्जन
- निष्कासन

पर्यावरण प्रदूषण के नियंत्रण के प्रयासों के लिए इन क्षेत्रों का अध्ययन एवं विश्लेषण महत्वपूर्ण है। जलवायु योजना को लागू करने के लिए समय और संसाधनों दोनों की आवश्यकता है। विकासशील दुनिया को जीवाश्म ईंधन के निरंतर संक्रमणकालीन उपयोग की भी आवश्यकता हो सकती है, जबकि नीति निर्माताओं को नवीकरणीय ऊर्जा के मार्ग का प्रसस्त करना चाहिए। संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोपीय देशों और चीन जैसे अमीर और शक्तिशाली देशों में हरित भविष्य की ओर बढ़ने की क्षमता है, उन्हें अभी से ऐसा करना शुरू करना चाहिए। । 2015 के पेरिस समझौते ने एक जलवायु वित्त फ्रेमवर्क (सीएफएफ) का प्रस्ताव रखा और इस प्रणाली के प्रमुख तत्व हैं; 2020 तक प्रति वर्ष $ 100 बिलियन की प्रतिबद्धता जलवायु वित्त प्रणाली को बदलने में मदद कर सकती है। जलवायु कार्रवाई के लिए

अनुदान में $ 12 बिलियन से अधिक का वर्तमान आंकड़ा आवश्यकता से बहुत कम है। 2025 तक, इस आंकड़े को कम से कम दोगुना और आदर्श रूप से तीन गुना करने की आवश्यकता है। द्विपक्षीय जलवायु वित्त लगभग सभी रियायती जलवायु वित्त का स्रोत है और अखंडता, दृढ़ता और अखंडता को बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण है।

वैश्विक प्रतिबद्धताओं, घोषणाओं और प्रोटोकॉल के बावजूद वायुमंडलीय कार्बन डाई आक्साइड तथा अन्य प्रदूषकों का स्तर बढ़ता जा रहा है। प्रदूषकों के उत्सर्जन में बढ़ती प्रवृत्ति ने वैश्विक स्तर पर एक नया व्यापक विमर्श करने के लिए मजबूर किया है।

## 13.2 इकाई के उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप

- प्रदूषण की अवधारणा को समझ सकेंगे,
- प्रदूषण के एतिहासिक परिपेक्ष्य से परिचित हो सकेंगे,
- पर्यावरण में प्रदूषण के प्रभावों को स्पष्ट कर सकेंगे,
- प्रदूषण के प्रकारों को वर्गीकृत कर सकेंगे,
- पर्यावरण संरक्षण के महत्व को आत्मसात कर सकेंगे।

## 13.3 प्रदूषण का अर्थ एवं अवधारणा –

प्रदूषण का अर्थ है- पर्यावरण जिसमें मुख्य रूप से वायु, जल, मिट्टी आदि शामिल हैं,उनमें अवांछित और हानिकारक पदार्थों की मात्रा में बृद्धि होना शामिल है। जिससे जीव-जंतुओं और पारिस्थितिकी तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। प्रदूषण वह स्थिति है जब पर्यावरण में ऐसे पदार्थ प्रवेश करते हैं जो प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ते हैं और जीवों के लिए हानिकारक होते हैं। जैसे-

- वायु प्रदूषण
- जल प्रदूषण
- मृदा प्रदूषण

प्रदूषण की अवधारणा को इस प्रकार समझा जा सकता है कि यह पर्यावरण के दूषित होने अर्थात उसके जैविक एवं अजैविक घटकों के बीच असंतुलन की स्तिथि को दर्शाता है। यह तब होता है जब प्राकृतिक संसाधनों में ऐसे तत्व मिल जाते हैं जो पुनर्चक्रण (recycle) योग्य नहीं होते तथा प्राकृतिक संसाधनों का अनियोजित एवं अनियंत्रित विदोहन किया जाने लगता है जो जीव-जगत के अस्तित्व एवं निरन्तरता के लिए हानिकारक होता है। प्रदूषण से पारिस्थितिकी तंत्र असंतुलित हो जाता है और जीव-जंतुओं के

जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। औद्योगिक धुआँ, रासायनिक अपशिष्ट, प्लास्टिक, शोर और अन्य मानव-निर्मित अवशेष प्रदूषण के प्रमुख कारण हैं।

## 13.4 प्रदूषण का एतिहासिक परिपेक्ष्य-

मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ प्रदूषण भी निरंतर इसके साथ चलता रहा है। जैसे जैसे मानव पाषण युग से आगे के और बढ़ता रहा उसका प्रकृति पर नियंत्रण एवं विदोहन की प्रवृति बढ़ती रही। प्राचीन सभ्यताओं में भी प्रदूषण के संकेत मिलते हैं। जैसे -रोमन साम्राज्य में सीसे (Lead) का अत्यधिक उपयोग जल प्रदूषण और स्वास्थ्य समस्याओं का कारण बना। नगरों में कचरे और गंदगी के ढेर से बीमारियाँ फैलती थीं। जो बड़ी संख्या में जीवधारियों (मानव ,पशु पक्षी ,वनस्पति आदि ) को नुकसान पहुंचाती थी। तथा प्रदूषण को बढ़ती थी। औद्योगिक क्रांति (18वीं–19वीं शताब्दी) के दौरान कोयले का बड़े पैमाने पर उपयोग हुआ। जिससे पर्यावरण असंतुलन के साथ साथ प्रदूषण की समस्याएं उत्पन्न हुई। कारखानों से निकलने वाला धुआँ और रासायनिक अपशिष्ट वायु और जल प्रदूषण का मुख्य स्रोत बने। 19वीं शताब्दी में यूरोप और अमेरिका के औद्योगिक शहरों में धुंध और धुएँ की समस्या गंभीर हो गई। 20वीं शताब्दी में वाहनों के प्रसार और पेट्रोलियम आधारित ईंधन ने वायु प्रदूषण को बढ़ाया। रासायनिक उद्योगों के विकास से जल और मिट्टी प्रदूषण बढ़ा। 1952 में लंदन में "ग्रेट स्मॉग" (Great Smog) की घटना हुई, जिसमें हजारों लोगों की मृत्यु हुई। इसी समय से प्रदूषण को एक वैश्विक समस्या के रूप में देखा जाने लगा। आधुनिक काल में प्रदूषण केवल स्थानीय समस्या नहीं बल्कि वैश्विक संकट है। औद्योगिकरण, शहरीकरण, जनसंख्या वृद्धि और तकनीकी विकास ने प्रदूषण को कई रूपों में फैलाया है – वायु, जल, मिट्टी, ध्वनि और यहाँ तक कि प्रकाश प्रदूषण भी। वर्तमान में प्रदूषण की समस्या अब पर्यावरणीय अवनयन और जलवायु परिवर्तन से जुड़ चुकी है। प्रदूषण का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य यह दर्शाता है कि मानव सभ्यता के विकास के साथ प्रदूषण भी बढ़ता गया। प्राचीन काल में यह सीमित था,औद्योगिक क्रांति ने इसे व्यापक बनाया,20वीं शताब्दी में यह स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए गंभीर खतरा बन गया। तथा 21 वीं शताब्दी में यह जलवायु परिवर्तन और सतत विकास की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है।

## 13.4 भारत में प्रदूषण का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य-

प्राचीन भारतीय सभ्यताओं में प्रदूषण का स्तर अपेक्षाकृत कम था क्योंकि जीवनशैली प्रकृति आधारित थी। तथा स्थान एवं प्राकृतिक संसाधन अधिक उपलब्ध था। मानवों की संख्या कम थी। नगरों में कचरे और गंदगी की समस्या तो थी, लेकिन बड़े पैमाने पर औद्योगिक प्रदूषण नहीं था। जो धीरे धीरे पुनः चक्रित (recycle) हो जाता था। तथा मानव समूहों में प्रति स्थापन की अधिक प्रवर्तियाँ पायी जाती थी । वे एक स्थान को छोड़कर दुसरे स्थान पर जहां प्राकृतिक संसाधन अधिक होते थे ,वहाँ चले जाते थे । मानव के अंदर घुमंतू पृवर्ति अधिक थी। धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं में नदियों और वनों को पवित्र

माना जाता था, जिससे संरक्षण की भावना बनी रहती थी। भारत में प्रदूषण का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य यह दर्शाता है कि प्राचीन काल में प्रदूषण सीमित था। औद्योगिकरण और शहरीकरण ने इसे गंभीर बनाया। 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से यह स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए संकट बन गया। आज यह जलवायु परिवर्तन और सतत विकास की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है। जो गंभीर समस्याओं को जन्म दे रहा है।

**प्रदूषण का अर्थ एवं अवधारणा-** प्रदूषण केवल पर्यावरण को ही नहीं बल्कि मानव तथा अन्य जीवधारियों के स्वास्थ्य एवं सामाजिक जीवन और आर्थिक विकास को भी प्रभावित करता है। प्रदूषण से बचने के लिये प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित उपयोग और संरक्षण अत्यंत आवश्यक है। प्रदूषण के प्रति जागरूकता आज समय की आवश्यकता है। यह स्पष्ट करना महत्वपूर्ण है कि मानव और प्रकृति के बीच असंतुलित संबंध से पर्यावरण दूषित होता है, और इसे रोकने के लिए हमें सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण की दिशा में कदम उठाने चाहिए।

**प्रदूषण रोकने के प्रमुख उपाय-**वायु प्रदूषण को कम करने के लिये वाहनों में डीजल या पेट्रोल के बजाय स्वच्छ ईंधन (CNG, बिजली) का प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए बिजली से चलने वाले तथा प्राकृतिक गैस से चलने वाले वाहनों का प्रयोग उपयोगी है। आवागमन के लिए पब्लिक ट्रांसपोर्ट और साइकिल/पैदल चलने को बढ़ावा दिया जाना आवश्यक है। औद्योगिक इकाइयों में फिल्टर और स्क्रबर लगाना तथा रिहायशी एवं औद्योगिक क्षेत्र अलग अलग होने आवश्यक हैं। पेड़-पौधों की संख्या बढ़ाना अर्थात सतत वृक्षारोपण प्रदूषण को रोकने तथा पर्यावरण को सुरक्षित रखने हेतु आवश्यक हैं। जल प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए औद्योगिक अपशिष्ट को सीधे नदियों/तालाबों में न डालना, सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट का उपयोग,प्लास्टिक और रसायनों का कम प्रयोग,जल स्रोतों की नियमित सफाई, तथा लोगों को प्रदूषण के दुष्प्रभावों के प्रति जागरूक करना महत्वपूर्ण है। मृदा प्रदूषण को कम करने हेतु ,जैविक खाद और प्राकृतिक कीटनाशकों का प्रयोग करना तथा प्लास्टिक और गैर-अपघटनीय पदार्थों का कम उपयोग,औद्योगिक कचरे का सुरक्षित निपटान,भूमि संरक्षण और वृक्षारोपण लाभदायक हैं। ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम के लिए वाहनों में साइलेंसर का प्रयोग,लाउडस्पीकर और मशीनों का सीमित उपयोग, शोर-नियंत्रण कानूनों का पालन, शांत क्षेत्रों (जैसे अस्पताल, विद्यालय) में शोर पर प्रतिबंध की विशेष भूमिका है। किसी भी प्रकार के प्रदूषण के नियंत्रण के लिए निम्नलिखित उपाय उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं-

- ✓ शिक्षण के विभिन्न स्तरों के पाठ्यक्रमों में विषय को शामिल किया जाना
- ✓ शिक्षण संस्थानों तथा सामाजिक स्तर पर जागरूकता एवं संवेदीकरण अभियान चलाना
- ✓ पुनःचक्रण और पुनःउपयोग को बढ़ावा देना तथा लोगों को प्रेरित करना
- ✓ प्राकृतिक ऊर्जा स्रोतों जैसे -सौर एवं पवन ऊर्जा का अधिक प्रयोग करना
- ✓ पर्यावरणीय कानूनो को दृढ़ता से लागू करना

प्रदूषण की रोकथाम के लिए हमें व्यक्तिगत स्तर पर जिम्मेदारी सुनिश्चित कर ईमानदारी से उसे निभाना होगा और प्रदूषण नियंत्रण हेतु राष्ट्रीय एवं अंतराष्ट्रीय स्तर की नीतियों एवं अनुसंशाओ का पालन सुनिश्चित करना होगा। *सतत विकास (Sustainable Development)* ही प्रदूषण कम करने का सबसे प्रभावी मार्ग है।और यह हम सब के लिए महत्वपूर्ण है।

**अपनी प्रगति जानिए –**

1. प्रदूषण का अर्थ है- पर्यावरण जिसमें मुख्य रूप से वायु, जल, मिट्टी आदि शामिल हैं,उनमें अवांछित और हानिकारक पदार्थों की मात्रा में बृद्धि होना।

A. सत्य

B. असत्य

2. प्रदूषण की समस्या को बढ़ाया है

A. औद्योगीकरण

B. शहरीकरण

C. अनियंत्रित विकास

D. उपरोक्त सभी

## 13.5 पर्यावरण अर्थ एवं अवधारणा

हमारे चारों ओर मौजूद प्राकृतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ, जो हमारे जीवन को प्रभावित करती हैं, पर्यावरण कहलाती है। इसमें सजीव (मनुष्य, पशु, पौधे) और निर्जीव (जल, वायु, मिट्टी, जलवायु) सभी घटक शामिल होते हैं। पर्यावरण , वह समग्र परिवेश है जिसमें मनुष्य और अन्य जीव-जंतु रहते हैं और जो उनके जीवन, विकास और व्यवहार को प्रभावित करता है। इसमें प्राकृतिक संसाधन जैसे वायु, जल, भूमि, वनस्पति, जीव-जंतु और मानव निर्मित तत्व जैसे भवन, उद्योग, सामाजिक संस्थाएँ दोनों शामिल होते हैं।

**पर्यावरण के घटक**

- ✓ प्राकृतिक पर्यावरण
- ✓ मानव निर्मित पर्यावरण
- ✓ सामाजिक पर्यावरण
- ✓ सांस्कृतिक पर्यावरण

सामाजिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण का संबंध मुख्यतया मानवीय संबंधों ,मूल्यों ,मान्यताओं, नीतियों ,आदतों ,परंपराओं ,संस्कृति एवं सांस्कृतिक विरासत से है। सामाजिक पर्यावरण के प्रमुख घटक हैं -

व्यक्ति ,परिवार एवं समुदाय ,राज्य ,राष्ट्र एवं विश्व । इस पर्यावरण का संबंध व्यक्ति के सामाजिक ,आर्थिक ,सांस्कृतिक ,राजनैतिक ,एवं आध्यात्मिक जीवन से है। सामंजस्य ,सहयोग ,संचार ,पारस्परिक निर्भरता एवं जागरूकता से सामाजिक पर्यावरण समृद्ध होता है।

मेसलों के अनुसार ,विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति मानव के लिए एक अभिप्रेरक का कार्य करती है। मनुष्य ब्रह्मांड में बौधिक रूप सबसे उच्च स्थान रखता है उसकी आवश्यकता ,जिज्ञासा ,समस्या एवं चिंतन ने उसे वर्तमान तकनीकी युग तक पहुँचा दिया है। इस विकास यात्रा में मानव ने अपनी महत्वाकांछाओं एवं अधिक पाने की इच्छाओं के कारण प्रकृति का अनियंत्रित एवं अनियोजित विदोहन किया है। परिणामस्वरूप प्राकृतिक असंतुलन के कारण प्रदूषण तेजी से बढ़ने लगा है। जो मानव एवं समस्त जीवधारियों के लिये अनेक प्रकार की समस्यायें उत्पन्न कर रहा है। मानव अपनी उन्नति एवं विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों पर ही निर्भर है और मानव ही संसाधनों का अपनी आवश्यकता से अधिक विदोहन की प्रवृति रखता है। और मानव ही अपने ज्ञान ,आवश्यकता ,श्रम और नवाचार से उपलब्ध संसाधनों को बहुमूल्य बनाने का कार्य करता है। प्रकृति निरंतर परिवर्तनशील है। परिवर्तन नव सर्जन के लिये आवश्यक हैं। आज पर्यावरण के सभी घटक अत्यधिक मानवीय हस्तक्षेप से प्रतिकूल रूप से प्रभावित हैं।

आज वायुमंडल में कार्बन डाई आक्साइड ,कार्बन मोनो आक्साइड ,मीथेन ,क्लोरो फ़्लोरो कार्बनस् आदि हानिकारक गैसों के प्रभाव से पृथ्वी का तापक्रम तेजी से बढ़ रहा है। परिणामस्वरूप उत्तराखंड में भी ग्लेशियर सिकुड़ रहे है जिनका यहाँ के पर्यावरण में प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। तथा मौसम चक्र में परिवर्तन आने लगा है। यांग (2003),ने अपने अध्ययन में यह निष्कर्ष निकाल कि हिमवर्षण सीमा के घटने से हिमनदों के प्रवाह की निरन्तरता में भी कमी आती जा रही है। तथा हिमनद पोषित ग्रीष्मकालीन नदियों के जल स्तर में कमी के कारण विभिन्न जल विधुत परियोजनाओं के साथ ही पर्वतीय एवं मैदानी कृषि क्षेत्रों की सिंचित भूमि के लिए संकट उत्पन्न हो रहा है। रावत (2011) ने अपने शोध 'जलवायु परिवर्तन के कारणों के कुछ वैज्ञानिक पहलू' में स्पष्ट किया है कि वैज्ञानिक साक्ष्य यह प्रमाणित करते हैं की पृथ्वी के ज्ञात इतिहास में जलवायु परिवर्तन का यह पाँचवा वृहद दौर है। जिसके मुख्य कारण हैं-

- पृथ्वी के अक्ष के झुकाव में विचलन
- सूर्य से पृथ्वी की दूरी में विचलन
- पृथ्वी की विषम केंद्रिता
- सूर्य की चमक में अंतर
- ग्रीन हाउस गैसों के संघटन में परिवर्तन
- मानव जनित ग्रीन हाउस गैसें
- ज्वालामुखी उदगार
- समुद्री धाराओं के प्रवाह में व्यवधान

- भूकंप आदि

**पर्यावरण का महत्व-** हमारा पर्यावरण हमें बेहतर जीवन के लिए आवश्यक संसाधन जैसे -जल, वायु, भोजन,सूर्य का प्रकाश, आक्सिजन प्रदान करता है। जिसका हमारे स्वास्थ्य में जीवन की गुणवत्ता में सीधा प्रभाव पड़ता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जिसके लिए समाज एवं संस्कृति का विशेष महत्व है। जो उसे अन्य प्राणियों से अलग करती है। मानव के सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में पर्यावरण का महत्वपूर्ण योगदान होता है। जीवन की निरन्तरता एवं सतत विकास और जलवायु संतुलन के लिए पर्यावरण का संरक्षण आवश्यक है।

## 13.6 प्रदूषण का पर्यावरण पर प्रभाव-

प्रदूषण का पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह जीवन के लिए आवश्यक मूलभूत तत्वों वायु, जल, मिट्टी और वातावरण को दूषित करता है, जिससे प्राकृतिक असंतुलन पैदा होता है और मानव स्वास्थ्य व पारिस्थितिकी तंत्र पर गंभीर संकट उत्पन्न होने लगता है। जलवायु परिवर्तन मानव जनित प्रक्रियायें सबसे अधिक जिम्मेदार हैं। बड़े पैमाने में भूमि के उपयोग एवं अनियोजित विकास ,वनों के अंधा धुंद कटान के कारण पृथ्वी के तापमान में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। जिसके कारण प्राकृतिक आपदाओं की संख्या बढ़ती जा रही हैं। भू वैज्ञानिकों के अनुसार हिमालय का निर्माण यूरेशियन और एशियन प्लेटस की टक्कर का परिणाम है। विश्व के पर्वतों की तुलना में यह नवीनतम पर्वत श्रंखला है। और यह निरंतर आगे भी बढ़ता जा रहा है। तथा 2 सेमी प्रतिवर्ष की दर से चीन की तरफ धश रहा है। इस भूगर्भिय हलचल के कारण इस भू भाग में जबरदस्त तनाव है। इस तनाव को कम करने तथा संतुलन बनाने में भूकंप की विशेष भूमिका है। यहाँ बार बार रिक्टर स्केल में अधिकतम 6 तीव्रता के भूकंप आना आवश्यक है। इससे अधिक तीव्रता के भूकंप व्यापक रूप से जन-धन का नुकसान करेंगे। वर्तमान में उत्तराखंड बादल फटने की घटनाएं तेजी से बढ़ रही हैं। जिससे अपार जन-धन की हानि हो रही है। वनों के अंधा धुंध कटान एवं खनिजों के असीमित विदोहन के कारण ये घटनायें बढ़ रही हैं। विकास के लिए नियोजित एवं विशिष्ट प्रक्रिया के अनुरूप प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग आवश्यक है। हमारे देश में प्राचीन ऋषियों एवं मनीषियों ने सूर्य ,चंद्रमा ,पृथ्वी,जल ,वायु ,आकाश एवं समस्त पेड़ पोधों की आराधना की है। तथा जीवन में उनके महत्व को स्वीकार कर संरक्षण एवं संवर्धन को अपनाने के लिए प्रेरित किया है।

**वायु प्रदूषण के प्रभाव**

वायुमंडल में धुआँ, जहरीली गैसें और धूलकण से साँस की बीमारियाँ जैसे -अस्थमा, ब्रोंकाइटिस को बढाती हैं। जिस का प्रभाव मानव के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ता है। जो उसकी उन्नति में बाधक बनता है। ग्लोबल वार्मिंग और ओजोन परत का क्षरण होता है।जिसका मौसम चक्र पर प्रभाव पड़ता है तथा अत्यधिक वर्षा,अत्यधिक गर्मी ,अत्यधिक सर्दी जैसी दशायें उत्पन्न होती हैं। जो समस्त जीवधारियों के लिए जटिलतायें पैदा करती हैं। पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है और फसल उत्पादन घटता है। तथा मानव एवं अन्य जन्तुओं की पोषण संबंधी आवश्यकतायें पूर्ण न होने के कारण मानव

तथा अन्य जंतुओं के संघर्ष उत्पन्न होने लगता है। जो परितंत्र को कमजोर कर अनेक प्रकार की विषमताएं उत्पन्न करता हैं।

**जल प्रदूषण के प्रभाव**

नदियों, तालाबों और समुद्रों में रसायन व कचरा मिलने से जलीय जीवधारियों का जीवसंकटग्रस्त होने लगता है। जिससे जलीय पारिस्थितिकी असंतुलित होने लगती है। जलीय जीवों की मृत्यु तक होने लगती है और जैव विविधता कम होने के कारण अनेक जटिलतायें उत्पन्न होती है। तथा मनुष्यों में जलजनित रोग जैसे -कॉलरा, टाइफाइड फैलते हैं। तथा जीवन को प्रभावित करते हैं। पीने योग्य पानी की कमी बढ़ने के कारण सामाजिक, आर्थिक ,शारीरिक ,मानसिक संकट पैदा होने लगते है। जो जीवन की गुणवत्ता में नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।

**मृदा प्रदूषण के प्रभाव**

कीटनाशक और औद्योगिक अपशिष्ट से मिट्टी की गुणवत्ता एवं उपजाऊ शक्ति घटती है। तथा उत्पादन में कमी एवं पोषक तत्वों की गिरावट आने लगती है। फसलें दूषित होती हैं, जिससे खाद्य सुरक्षा प्रभावित होती है। प्रत्येक मानव एवं जीवधारी की पोषण आवश्यकताएं पूरी होना कठिन हो जाता है। भूमि का प्राकृतिक संतुलन बिगड़ता है।जो अनेक प्रकार के संकट पैदा करता है।

**ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव-**अत्यधिक शोर से मानसिक तनाव, नींद की समस्या और श्रवण शक्ति कमजोर होती है। जिससे उनका शारीरिक एवं मानसिक विकास प्रभावित होने लगता है। यह मनुष्यों के साथ-साथ अन्य प्राणियों को भी प्रभावित करती है। यह वन्य जीवों के प्राकृतिक व्यवहार में बाधा डालती है। तथा मानव एवं अन्य जीवों के बीच संघर्ष की स्तिथि उत्पन्न होने लगती है। प्रदूषण के प्रभाव से जलवायु परिवर्तन और असामान्य मौसम की घटनाएँ (बाढ़, सूखा, चक्रवात) बढ़ती हैं। जल ,थल एवं नभ में व्याप्त जैव विविधता का ह्रास होता है। पर्यावरण की गुणवत्ता घटने से जीवन स्तर प्रभावित होता है। प्रदूषण का पर्यावरण पर प्रभाव बहुआयामी

यह प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट करता है, स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाता है और पारिस्थितिकी तंत्र को असंतुलित करता है। यदि समय रहते कदम न उठाए जाएँ तो यह आने वाली पीढ़ियों के लिए गंभीर संकट बन सकता है।

**प्रदूषण का जीवन पर प्रभाव-** प्रदूषण का प्रभाव केवल पर्यावरण पर ही नहीं बल्कि सीधे मानव जीवन, पशु-पक्षियों और संपूर्ण जीव-जगत पर पड़ता है। वायु प्रदूषण के कारण अनेक प्रकार की स्वास्थ्य समस्याएँ जैसे -अस्थमा,ब्रोंकाइटिस, फेफड़ों का कैंसर जैसी बीमारियाँ तेजी से फैल रही हैं। मानसिक रुग्णता, थकान, चिड़चिड़ापन और कार्यक्षमता में कमी वायु प्रदूषण के कारण पैदा होती हैं। शुद्ध हवा की कमी के कारण जीवन प्रत्याशा घटती है। जल प्रदूषण के कारण जलजनित रोग- कॉलरा, टाइफाइड, डायरिया फैलने लगते है। पीने योग्य पानी की कमी से जीवन संकट। जलीय जीवों की मृत्यु से खाद्य श्रृंखला प्रभावित होती है। मृदा प्रदूषण के कारण दूषित फसलें तैयार हो रही रही हैं जिनके सेवन केंसर जैसी असाध्य बीमारियाँ तेजी से फैल रही हैं। तथा खाद्य विषाक्तता बढ़ रही है। मिट्टी की उर्वरा शक्ति

घटने से कृषि उत्पादन कम होता है।जिससे मांग एवं पूर्ति के समीकरण बिगड़ने लगते हैं। ग्रामीण जीवन और किसानों की आजीविका प्रभावित होती है। जिससे उत्पादकता पर प्रभाव पड़ता है। ध्वनि प्रदूषण मानसिक तनाव और नींद की समस्या का मुख्य कारण है। ध्वनि प्रदूषण से श्रवण शक्ति कमजोर होने लगती है तथा बच्चों और बुजुर्गों पर इसका विशेषतौर पर नकारात्मक असर पड़ता है। जलवायु परिवर्तन से बाढ़, सूखा, चक्रवात की घटनाएं बढ़ने के कारण जीवन में असुरक्षा बढ़ने लगती है। जैव विविधता का ह्रास होने से प्राकृतिक संसाधनों की कमी होने लगती है जो पारिस्थितिकी को असंतुलित करता है परिणाम स्वरूप जीवन संघर्ष बढ़ने लगते हैं। जीवन की गुणवत्ता घटती है और सामाजिक-आर्थिक विकास प्रभावित होता है। प्रदूषण का जीवन को अनेक प्रकार से प्रभावित करता है। यह स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाता है, विभिन्न रोगों का कारण बनता है, जीवन प्रत्याशा घटाता है, मानसिक विकास को अवरुद्ध करता है जो सामाजिक-आर्थिक विकास को बाधित करता है। जिससे व्यक्तिगत एवं समाज स्तर पर अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

**अपनी प्रगति जानिये –**

**3.** प्रदूषण ……..पैदा करता है,

A. अधिक उपज

B. प्राकृतिक असंतुलन

C. सामाजिक विकास

D. आर्थिक विकास

4. नीचे अभिकथन एवं तर्क दिये गए है इन्हें ध्यान से पढ़िए तथा सही विकल्प का चयन कीजिये-

अभिकथन ;जैव विविधता अच्छे पारिस्थितिक तंत्र के लिये आवश्यक है।

तर्क ; जैव विविधता का ह्रास जीवन संघर्ष को बढ़ाता है।

विकल्प;

A. अभिकथन एवं तर्क दोनों सत्य है ,तर्क अभिकथन की सही व्याख्या करता है,

B. अभिकथन एवं तर्क दोनों सत्य है ,तर्क अभिकथन की सही व्याख्या नहीं है,

C. अभिकथन सत्य है ,और तर्क असत्य,

D. अभिकथन और तर्क दोनों असत्य हैं।

## 13.7 सारांश –

पर्यावरण का हमारे जीवन के प्रत्येक पक्ष में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष से प्रभावित करता है। प्रकृति हमारी आवश्यकताओं को तो पूरा कर सकती है किन्तु लालच को नहीं। जब प्राकृतिक संसाधनों का

अनियोजित एवं अनियंत्रित विदोहन बढ़ने लगता है तो प्रदूषण की स्तिथियाँ उत्पन्न होती है। प्रदूषण जैव विविधता को प्रभावित करता है, परिणामस्वरूप जीवधारियों के मध्य जीवन संघर्ष बढ़ने लगता है। जिसका समस्त पारिस्थिकी तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। आज प्रदूषण एक वेश्वविक समस्या बन चुकी है । आवश्यकता है कि हम समय रहते इसकी भयवाहता को समझ सकें तथा समस्या के निदान के लिए अभी से अपने व्यवहार में परिवर्तन लायें। इस पृथ्वी पर हमारा और समस्त जीवधारियों का अधिकार बराबर का है। मानव होने के नाते हमारा उत्तरदायित्व है कि हम प्राकृतिक संसाधनों का सुनियोजित एवं नियंत्रित उपयोग कर जीवन की निरन्तरता को बनाये रखने में सहयोग करें।

## 13.8 मुख्य शब्द

**जैविक घटक** -वे सभी जीवित चीजें है जो हमारे चारों ओर पायी जाती है जैसे-इंसान, जानवर ,पेड़-पौंधे,जीव-जन्तु ,सूक्ष्म जीव आदि। ये घटक एक दूसरे को प्रभावित करते है तथा परस्पर निर्भर रहते हैं।

**अजैविक घटक** -हमारे चारों ओर व्याप्त वो चीजें जिनमें जीवन नहीं पाया जाता परंतु वे जीवन के लिये आवश्यक होती है,अजैविक घटक कहलाते हैं।

**जैव विविधता** -पृथ्वी पर मौजूद जीवित प्राणियों जैसे -मानव ,पेड़ पौधे ,विभिन्न जानवर ,सूक्ष्म जीवों के निवास स्थान आनुवंशिकता,प्रजातीतया, निवास स्थान में अंतर पाया जाता है जिसे जैव विविधता कहते है। यह प्रा कृतिक संतुलन बनाये रखने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

**पारिस्थिकी तंत्र**-यह किसी स्थान जैसे-जल ,थल ,नभ विशेष में सजीव एवं निर्जीव तत्वों के बीच आपसी संबंध एवं अन्तः क्रियाओं का समूह है। यह जीवों के भोजन श्रंखला का आधार है। यह प्रकृति में संतुलन एवं ऊर्जा प्रवाह के लिए महत्वपूर्ण है।

## 13.9 अपनी प्रगति जानिये के उत्तर –

1. A ,2. D, 3. B, 4. A

## 13.10 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

**1.** प्रदूषण के अर्थ एवं अवधारणा को स्पष्ट कीजिये. प्रदूषण जीवन को किस प्रकार प्रभावित करता है स्पष्ट कीजिये?

**2**. पर्यावरण से आप क्या समझते है. प्रदूषण किस प्रकार पर्यावरण से संबंधित है व्याख्या किजिये?

**3.** प्रदूषण किस प्रकार जैव विविधता को प्रभावित करता है स्पष्ट किजिये?

4. प्रदूषण के ऐतिहासिक परिपेक्ष्य से आप क्या समझते है। वर्णन किजिये?

## 13.11 संदर्भ सूची –


- लखेड़ा प्रकाश ,कल्पना (2011), इम्पावर्मेंट ऑफ़ रूलर वुमन ,मल्लिका बुक्स ,दिल्ली।
- धर्मेन्द्र कुमार, दुर्गा (2016), ग्लोबलाइज़ेशन। एनवायरनमेंट एण्ड वुमन,अंकित प्रकाशन,हल्द्वानी
- लखेड़ा प्रकाश ,कल्पना (2023),क्लायमेट चेंज मिटिगैशन, इंडियन पर्स्पेक्टिव चाणक्य पब्लिकैशन ,दिल्ली
- https://www.unesco.org/en/query-list/e/environment
- https://chatgpt.com/

# इकाई 14 भारत में पर्यावरणीय खतरे, वन अनाच्छादन और नदियों में प्रदूषण


**14.1 परिचय**

**14.2 इकाई के उद्देश्य**

**14.3 भारत में पर्यावरणीय खतरे**

**अपनी प्रगति जानिए 1.**

**14.4 वनाच्छादन का अर्थ एवं महत्व**

**14.5 नदियों में प्रदूषण**

**अपनी प्रगति जानिए 2.**

**14.6 सारांश**

**14.7 मुख्य शब्द**

**14.8 अपनी प्रगति जानिये के उत्तर**

**14.9 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न**

**14.10 संदर्भ सूची**


## 14.1 परिचय

पर्यावरण वह समग्र तंत्र है जिसमें सजीव एवं निर्जीव ,कार्बनिक एवं अकार्बनिक तत्व एक-दूसरे के साथ पारस्परिक अन्तःक्रिया करते हैं तथा एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। जिनमें हवा,पानी, मिट्टी, आग, पेड़-पौधे,जीव-जंतु, सूर्य का प्रकाश आदि सभी चीजें शामिल होती हैं। पर्यावरण के प्रमुख घटक:

1. भौतिक घटक -जल, वायु, मिट्टी, तापमान, सूर्य का प्रकाश आदि
2. जैविक घटक -पेड़-पौधे, जीव-जन्तु, जीवाणु ,विषाणु ,फँजाई आदि।
3. सामाजिक घटक- संस्कृति, सामाजिक संरचनाएँ,मान्यताएं ,परम्परायें आदि।

पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए पर्यावरण का विशेष महत्व है। पर्यावरण जीवन के लिए आवश्यक सभी संसाधन प्रदान करता है। तथा जलवायु और मौसम को नियंत्रित करता है। जैव विविधता को बनाए रखने में पर्यावरण की विशेष भूमिका है।

## 14.2 इकाई के उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप ;

- पर्यावरण के अर्थ एवं अवधारणा को समझ सकेंगे,
- भारत में पर्यावरणीय खतरों को स्पष्ट कर सकेंगे,
- वनाच्छादन के अर्थ को समझ सकेंगे,
- वनाच्छादन के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे,
- नदियों में प्रदूषण के प्रभाव का जान सकेंगे,
- नदियों को प्रदूषण मुक्त रखने के उपायों को आत्मसात कर सकेंगे।

## 14.3 भारत में पर्यावरणीय खतरे

शिक्षा जीवन जीने के तरीकों ,जीवन को समझने तथा जीवन दर्शन को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। बेहतर जीवन जीने तथा सतत विकास के लिए पर्यावरण शिक्षा आवश्यक है। पर्यावरण का हम पर सीधा प्रभाव पड़ता है। पर्यावरण के प्रति सजगता वर्तमान समय की अनिवार्य आवश्यकताओं में से एक है। पर्यावरण शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मानव को पर्यावरण के प्रति जागरूक बनाना तथा उसके संरक्षण और संवर्धन के लिए व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करना है। आज के समय में पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है, क्योंकि प्रदूषण, वनों की कटाई, जलवायु परिवर्तन, और प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन से जटिल समस्याएँ तेजी से बढ़ रही हैं। पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर आवश्यक है। पर्यावरण प्रदूषण की समस्या के समाधान एवं नियंत्रण के लिए शिक्षार्थियों को इनके कारणों और परिणामों की जानकारी होना आवश्यक है।जिससे कि वे दैनिक जीवन में अपने व्यवहार में इन बातों को ला सकें। तथा प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण एवं पृथ्वी के सीमित संसाधनों के प्रति जागरूक हो सकें। जल, वन, खनिज और ऊर्जा स्रोतों का संतुलित उपयोग तभी संभव है जब व्यक्ति इनके महत्व को समझे। आज के शिक्षार्थी ही भविष्य के निर्माता हैं अतः यह आवश्यक की उनके अंदर प्राकृतिक संसाधनों के महत्व को समझने तथा जीवन के प्राकृतिक संरक्षण के तरीकों का अपनाने की क्षमता का विकास हो। सतत विकास के लिए पर्यावरण शिक्षा आवश्यक है जो हमें सिखाती है कि वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधन सुरक्षित रखना वर्तमान पीढ़ी का उत्तरदायित्व है। सतत विकास की अनदेखी के दुष्परिणामों को व्यापक रूप में वैश्विक तथा स्थानीय स्तर देखा जा सकता है,तथा उनके दुष्परिणामों का प्रभाव सर्वत्र व्यापक रूप में दिखायी देने लगे हैं। आज पर्यावरणीय जागरूकता बढ़ाने के लिए व्यावहारिक प्रयास आवश्यक हैं।

पर्यावरण का संरक्षण केवल सरकार का नहीं, बल्कि हर नागरिक का कर्तव्य है।अतः शिक्षार्थियों के लिये पर्यावरण शिक्षा प्राथमिक से उच्च स्तर तक उपयोगी है। वन्यजीव और जैव विविधता की रक्षा के लिए व्यापक स्तर पर प्रयास आवश्यक हैं। प्रत्येक जीव-जंतु, जैविक एवं अजैविक घटक पारिस्थितिकी तंत्र का महत्वपूर्ण हिस्सा है और उनका अस्तित्व हमारे अस्तित्व से जुड़ा है। इसीलिए प्रत्येक जीव-जंतु, जैविक (biotic) एवं अजैविक (abiotic) घटक का संरक्षण आवश्यक है। स्वच्छ एवं संतुलित पर्यावरण मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत आवश्यक है। पर्यावरण शिक्षा हमें स्वच्छता, हरियाली और स्वस्थ जीवनशैली अपनाने के लिए प्रेरित करती है। पर्यावरण शिक्षा हमें न केवल पर्यावरणीय समस्याओं को समझने में मदद करती है, बल्कि उनके समाधान के लिए सक्रिय भूमिका निभाने के लिए भी तैयार करती है। हर व्यक्ति को पर्यावरण के प्रति जिम्मेदार बनना आवश्यक है, जिससे हम आने वाली पीढ़ियों को एक स्वच्छ, सुरक्षित और संतुलित पर्यावरण हस्तांतरित कर सकेंगे।

भारत एक विशाल और विविध प्राकृतिक संसाधनों वाला देश है, परंतु तेजी से बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण और संसाधनों के अत्यधिक दोहन के कारण आज हमारा देश अनेक प्रकार के पर्यावरणीय खतरों का सामना कर रहा है। ये खतरे न केवल प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ रहे हैं बल्कि मानव स्वास्थ्य और जीवन के लिए भी गंभीर चुनौती बन गए हैं। पर्यावरण प्रदूषण जीवन की गुणवत्ता के साथ ही सामाजिक एवं आर्थिक विकास को भी बाधा पहुंचाता है। यह केंसर जैसी गंभीर बीमारियों का भी कारण है। संसाधनों का अनियोजित एवं अनियंत्रित उपयोग गंभीर बीमारियों के साथ ही अनेक संघर्षो को बढ़ावा देता है। जिसका समग्र विकास में नकारात्मक प्रभाव पड़ता है

**मुख्य पर्यावरणीय खतरे**

- जलवायु परिवर्तन
- खतरनाक अपशिष्ट
- ओजोन परत का क्षरण
- ग्लोबल वार्मिंग
- जल प्रदूषण
- जैव विविधता का ह्रास
- अम्लीय वर्षा
- अधिक जनसंख्या वृद्धि
- प्राकृतिक संसाधनों का दोहन
- वनों की कटाई
- भूमि क्षरण
- मरुस्थल का फैलाव
- परमाणु अपशिष्ट
- विकिरण के दुष्प्रभाव

- इलेक्ट्रॉनिक कचरा
- प्लास्टिक कचरा

समताप मंडल में ओजोन परत हानिकारक सौर पराबैंगनी (ultra violet) किरणों के लिए एक प्रभावी फ़िल्टर के रूप में कार्य करती है। ओजोन वायुमंडल में स्वाभाविक रूप से उत्पन्न और नष्ट होने वाली गैस है ओजोन तब बनती है जब ऑक्सीजन अणु 240 नैनोमीटर से कम तरंग दैर्ध्य के साथ पराबैंगनी विकिरण को अवशोषित करते हैं और 290 नैनोमीटर से अधिक तरंग दैर्ध्य के साथपराबैंगनी विकिरण को अवशोषित करने पर नष्ट हो जाते हैं। ओजोन अत्यधिक क्रियाशील है और मानव निर्मित क्लोरीन और ब्रोमीन यौगिकों द्वारा आसानी से टूट जाती है। ओजोन क्षय प्रक्रिया तब शुरू होती है जब क्लोरो फ़्लोरो कार्बन और अन्य ओजोन-क्षयकारी पदार्थ वातावरण में उत्सर्जित होते हैं। ये ओजोन-क्षयकारी पदार्थ बारिश में घुलते नहीं हैं, बेहद स्थिर होते हैं, और इनका जीवनकाल लंबा होता है।

औद्योगिक क्रांति से पहले, मानव गतिविधियों ने वायुमंडल में बहुत कम गैसें उत्सर्जित की और सभी जलवायु परिवर्तन स्वाभाविक रूप से हुये तथा पर्यावरण को क्षति नहीं पहुची और परिवर्तनो के साथ आसानी से सामंजस्य हो गया। औद्योगिक क्रांति के बाद, जीवाश्म ईंधन के दहन, बदलती कृषि पद्धतियों और वनों की अत्यधिक कटाई के कारण ,वातावरण में गैसों की प्राकृतिक संरचना प्रभावित हो रही है और जलवायु और पर्यावरण में महत्वपूर्ण बदलाव होने लगा है। पिछले 100 वर्षों में, पृथ्वी गर्म और गर्म हो रही है। ग्लोबल वार्मिंग का कारण बनने वाली प्रमुख ग्रीनहाउस गैसें कार्बन डाइऑक्साइड वायुमंडल में सबसे प्रचलित ग्रीनहाउस गैसों के प्रमुख मानव-जनित स्रोत हैं: जीवाश्म ईंधन का दहन और भूमि उपयोग में परिवर्तन। माना जाता  जैव विविधता पृथ्वी पर जीवन की विविधता और इसकी जैविक विविधता को संदर्भित करती है। पौधों, जानवरों, सूक्ष्मजीवों की प्रजातियों की संख्या और इन प्रजातियों में जीन की विशाल विविधता, ग्रह पर विभिन्न पारिस्थितिक तंत्र, जैसे रेगिस्तान, वर्षावन और प्रवाल भित्तियाँ सभी जैविक रूप से विविध पृथ्वी का हिस्सा हैं। अनियोजित मानव गतिविधि जैव विविधता को बदल रही है और बड़े पैमाने पर जीव धारियों के विलुप्त होने का कारण बन रही है। जैव विविधता और जलवायु परिवर्तन के बीच एक संबंध है। पिछले एक दशक में जलवायु परिवर्तन तेजी से हो रहा है। इसके कारण मौसम में अनियमितताएं, बार-बार तूफान, ग्लेशियरों का पिघलना, समुद्र का बढ़ता स्तर आदि दिखायी दे रहा है। अगर हम प्राकृतिक संसाधनों का लगातार दोहन करते रहेंगे तो प्राकृतिक संसाधनों का संतुलन बिगड़ जायेगा।  खनन, कृषि, वन्य जीवों का शिकार ,मछली पकड़ने आदि, मानवीय गतिविधियों के परिणामस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों का भारी क्षरण हुआ है। मानव गतिविधियों और मरुस्थलीकरण के कारण वनस्पति के नुकसान के कारण मृदा प्रदूषण ने धरती की सतह को मानव एवं अन्य जीव धारियों के लिए अनुपयुक्त बना दिया है। मिट्टी के व्यापक अनियोजित उपयोग, बेतरतीब अपशिष्ट निपटान, बड़े पैमाने ऐसी अन्य मानवीय गतिविधियों जो प्रकृति के लिए हानिकारक हैं, हमारे प्राकृतिक परिवेश पर नकारात्मक प्रभाव डाल रही हैं। परमाणु अपशिष्ट और विकिरण का मुद्दा वर्तमान समय में बहुत बड़ी चुनौती है। परमाणु ऊर्जा उच्च क्षमता वाली होती हैं। परमाणु ऊर्जा से रेडियोधर्मी कचरे का निस्तारण एक प्रमुख समस्या है। चेरनोबिल त्रासदी इस बात का उदाहरण है कि परमाणु कचरा मानव जाति के लिए आपदा का कारण कैसे बन सकता है।

जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ती है उसके साथ-साथ प्रकृति के साथ मानवीय गतिविधियाँ तथा हस्तक्षेप भी बढ़ता है। तथा अपशिष्ट कचरे की मात्रा भी बढ़ने लगती है। इस कचरे में हानिकारक गैसें ,परमाणु

अपशिष्ट, ई-अपशिष्ट, चिकित्सा अपशिष्ट और घरों से निकलने वाला कचरा शामिल है। जिस दर से यह कचरा पैदा होता है, उस दर से उसका उपचार नहीं किया जा रहा है, जो अंततः पर्यावरण को प्रदूषित करता है। खतरनाक अपशिष्ट लगातार बढ़ रहे हैं। उद्योग,सरकारें और व्यक्ति इस प्रमुख पर्यावरणीय समस्या पर आवश्यक ध्यान नहीं दे रहे हैं। परिणामस्वरूप सरकारें और उद्योग खतरनाक प्रदूषकों को रोकने या इससे उत्पन्न होने वाले नकारात्मक प्रभावों को सीमित करने में विफल हो रहे हैं।
हम जो पानी पीते हैं वह हमारी अस्तित्व और स्वस्थ जीवन के लिए आवश्यक तत्व है। दुर्भाग्य से आज अधिकांश जनसंख्या प्रदूषित पानी और हवा का सेवन कर रही है। हर साल, 14 बिलियन पाउंड सीवेज, कीचड़ और कचरा दुनिया के महासागरों में फेंक दिया जाता है। लगभग 19 ट्रिलियन गैलन अन्य कचरा भी सालाना पानी में प्रवेश करता है। कई वर्षों तक, रसायनों को भी बिना किसी उचित निस्तारण के जल निकायों में डंप किया गया था। समुद्री प्रदूषण की समस्या दुनिया भर के हर देश को प्रभावित करती है। डब्ल्यूएचओ का कहना है कि दुनिया की आबादी के छठे हिस्से के लोगों के पास सुरक्षित पानी तक पहुंच नहीं है। औद्योगिक अपशिष्ट, सीवेज पानी, वर्षा जल प्रदूषण, पानी को प्रदूषित करने वाले मुख्य घटक हैं। अम्लीय वर्षा, वायुजनित अम्लीय प्रदूषकों के कारण होती है और इसके अत्यधिक विनाशकारी परिणाम होते हैं। अम्लीय वर्षा का कारण बनने वाली अदृश्य गैसें आमतौर पर ऑटोमोबाइल या कोयला जलाने वाले बिजली संयंत्रों से आती हैं। अम्लीय वर्षा का स्तर एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न होता है। जैसे-जैसे दुनिया की आबादी खतरनाक दर से बढ़ती जा रही है, ग्रह के संसाधनों पर दबाव बढ़ रहा है। अधिक जनसंख्या से जुड़ी समस्याएं भोजन और पानी के संकट से लेकर प्राकृतिक निस्तारण के लिए स्थान की कमी तक इसमें शामिल हैं। अधिक जनसंख्या भारत की एक मुख्य समस्या है।

**वायु प्रदूषण**-भारत के कई शहर जैसे दिल्ली, मुंबई, पटना और लखनऊ दुनिया के सबसे प्रदूषित शहरों में गिने जाते हैं। वाहनों का धुआँ, औद्योगिक गैसें, धूल, और पराली जलाने जैसी गतिविधियाँ वायु गुणवत्ता को अत्यधिक प्रभावित कर रही हैं। स्थानीय स्तर पर भी कई धार्मिक आयोजनों ,त्योहारों ,विवाह समारोहों के आयोजन ,जश्न मनाने की प्रवर्तियाँ वायु प्रदूषण का कारण बनती हैं। जो विभिन्न रोगों एवं विकृतियों को बढ़ाती हैं।

**जल प्रदूषण**-जल जीवन के लिए अति आवश्यक है। जल के बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। नदियों, झीलों और भूमिगत जल पीने के पानी के मुख्य स्रोत है। जिनका संरक्षण जीवन के लिए आवश्यक है। अनियोजित विकास एवं स्पष्ट योजनाओ के अभाव एवं व्यक्तिगत एवं प्रशासनिक उदासीनता के कारण औद्योगिक अपशिष्ट, घरेलू गंदा पानी और कृषि रसायनों आदि प्रदूषकों को सीधा जलस्रोतों में छोड़ दिया जा रहा है परिणामस्वरूप जल प्रदूषण तीव्र गति से बढ़ रहा है। गंगा और यमुना जैसी पवित्र नदियाँ भी गंभीर प्रदूषण की चपेट में हैं।

**वनों की कटाई** -कृषि भूमि बढ़ाने, खनन, और निर्माण कार्यों के लिए वनों की कटाई तेजी से हो रही है, जिससे जैव विविधता नष्ट हो रही है और वन्यजीवों का अस्तित्व खतरे में है। वन इस धरती को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक जीवन रक्षक आवरण है। वन लाखों जीव-जन्तुओ के लिए ऐसा शरण स्थल है जो उनकी भोजन एवं जीवन की अन्य आवश्यकताओ को उपलब्ध कराता है। तथा उन्हें संरक्षित एवं संवर्धित करता है। वनों में पायी जाने वाली विभिन्न प्रजातियाँ एक दूसरे को प्रभावित करती है तथा निर्भर रहती है। इसीलिए वहाँ पायी जाने वाली हर प्रजाति चाहे वह वनस्पति हो या जन्तु महत्वपूर्ण है। उनका

अस्तित्व एक दूसरे पर निर्भर है। विकास के लिये वनों की कटाई तो करनी ही पड़ती है परंतु आवश्यकता है यह कार्य नियोजित एवं नियंत्रित तरीकों से किया जाये। तथा वनों की कटाई के सापेक्ष वानाच्छादन की अनिवार्य रूप से किया जाये।

**मृदा प्रदूषण और भूमि क्षरण**- रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से मिट्टी की उर्वरता घट रही है। भूमि का क्षरण और मरुस्थलीकरण बढ़ रहा है। जो विभिन्न बीमारियों एवं विकृतियों को जन्म दे रहा है। भोजन की आवश्यकता को पूरा करने के लिए अधिक खाधन्न चाहिये जिसके लिए रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का उपयोग आवश्यक है किन्तु यह कई विषमताओ को उत्पन्न कर रहा है। अतः आवश्यक है इनका नियंत्रित प्रयोग किया जाये तथा संरक्षण एवं संवर्धन के प्राकृतिक तरीकों को बढ़ावा दिया जाये। **जलवायु परिवर्तन** - ग्लोबल वार्मिंग के कारण भारत में अनियमित वर्षा, तापमान में वृद्धि, सूखा और बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाएँ अधिक हो रही हैं। जो जन जीवन एवं सम्पूर्ण पारिस्थिकी तंत्र को नुकसान पहुँचा रही हैं। जिससे मौसम चक्र भी बदलने लगा है। गर्मियों में अत्यधिक गर्मी ,बरसात में अत्यधिक वर्षा तथा जाड़ों में कड़ाके की ठंड होने लगी है। बसंत एवं पतझड़ की ऋतु तेजी से कम हो रही है।

**प्लास्टिक प्रदूषण**-वर्तमान समय में प्लास्टिक हमारे दैनिक जीवन में प्रयुक्त चीजों में प्रयोग होने वाला पदार्थ है। जो अपनी विशिष्ट संरचना के कारण अत्यधिक टिकाऊ एवं मजबूत होता है। यह कई सालों तक अपघटित नहीं होता है। इसका बहुत सजगता से एवं नियंत्रित का उपयोय आवश्यक है। प्लास्टिक के अनियंत्रित उपयोग से नदियाँ, समुद्र और भूमि प्रदूषित हो रहे हैं, जिससे समुद्री जीवों और पर्यावरण दोनों पर बुरा असर पड़ रहा है।

**जनसंख्या विस्फोट**-बढ़ती जनसंख्या प्राकृतिक संसाधनों पर अत्यधिक दबाव डाल रही है, जिससे पर्यावरणीय संतुलन बिगड़ रहा है। जनसंख्या बृद्धि भोजन,आवास एवं वस्त्र के साथ ही विभिन्न संसाधनों के उपयोग में संघर्ष को बढ़ावा देती है। जो जीवन की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। भारत में पर्यावरणीय खतरे दिन-प्रतिदिन गंभीर होते जा रहे हैं। यदि समय रहते इन समस्याओं का समाधान नहीं किया गया, तो आने वाली पीढ़ियों को स्वच्छ वायु, जल और भूमि से वंचित होना पड़ेगा। इसलिए सरकार, समाज और प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य है कि वे पर्यावरण संरक्षण के प्रयासों में सक्रिय भूमिका निभाएँ — जैसे वृक्षारोपण, प्रदूषण नियंत्रण, और सतत विकास की दिशा में कार्य करना।

**अपनी प्रगति जानिये**

**1.** पर्यावरणीय खतरों का कारण है-

A. औद्योगिकीकरण,

B. शहरीकरण और

C. संसाधनों के अत्यधिक दोहन

D. उपरोक्त सभी

**2.** मुख्य पर्यावरणीय खतरें हैं

A. प्रदूषण

B. जनसंख्या विस्फोट

C. जलवायु परिवर्तन

D. उपरोक्त सभी

## 14.4 वनाच्छादन का अर्थ –

वनाच्छादन शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है —"वन" और "आच्छादन"। "वन" अर्थात जंगल या पेड़-पौधों का समूह, और "आच्छादन" से आशय है, आवरण या ढकाव। अतः कह सकते हैं कि वनाच्छादन का अर्थ है किसी क्षेत्र की भूमि पर पेड़ों या वनों की उपलब्धता होना। किसी देश, क्षेत्र या प्रदेश की कुल भौगोलिक भूमि का वह भाग जो वनों या पेड़-पौधों से ढका हुआ है, अर्थात "किसी क्षेत्र में कितनी भूमि पर जंगल फैले हुए हैं" उसे वनाच्छादन कहा जाता है। यदि किसी राज्य की 30% भूमि पर जंगल हैं, तो कहा जाएगा कि उस राज्य का वनाच्छादन 30% है।

**वनाच्छादन का महत्व:** वनाच्छादन पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायक होता है। वन अथवा जंगल जलवायु को नियंत्रित करते है और मृदा संरक्षण तथा उर्वरकता को बढाते है। भू-कटाव रोकते है। वन्यजीवों तथा अनेक प्रकार के जीवधारियों को आश्रय प्रदान करते है। ऑक्सीजन उत्पादन और कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषण के माध्यम से वायु को शुद्ध रखते है। तथा सभी जीवधारियों के लिए एक सशक्त खाद्य श्रंखला का निर्माण करते हैं। जो पारिस्थितिकी संतुलन के लिये महत्वपूर्ण है। वन निम्नलिखित प्रकार से प्रभावित करते है -

- ✓ मौसम परिवर्तन
- ✓ सतत वनीकरण
- ✓ हवा की गुणवत्ता
- ✓ जैव विविधता में बढ़ोतरी
- ✓ वन्य जीव संरक्षण
- ✓ वर्षा जल का संरक्षण
- ✓ पर्यावरणीय संवर्धन
- ✓ प्राकृतिक सौन्दर्य

पेड़ मिट्टी को पकड़कर रखते हैं और भू -कटाव रोकते हैं। समोच्च खेती से पानी का बहाव कम हो जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों में सीढ़ीनुमा खेत बनाने से मिट्टी बहने से बचती है। अलग-अलग मौसम में अलग फसलें उगाने से मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है। वन वर्षा जल संचयन में सहायक होते है वनों में बारिश का पानी जमीन में रिस -रिस कर मिट्टी में नमी बनाये रखता है। रासायनिक खादों के बजाय जैविक खाद का उपयोग, मिट्टी को स्वस्थ रखता है। मिट्टी की सतह पर पुआल या पत्तियाँ बिछाने से मिट्टी का कटाव और नमी कम नहीं होती ।वनों में यह प्रक्रिया स्वाभाविक रूप से होती रहती है। अतः वनों का संरक्षण वर्तमान समय की आवश्यकता है।

## 14.4 नदियों में प्रदूषण –

नदियों में प्रदूषण का अर्थ है-नदियों के जल का गंदा और दूषित होना। नदियों स्वयं को स्वाभाविक रूप से साफ रखती है बशर्ते उन पर गंदगी न डाली जाये। नदियों में प्रदूषण प्राकृतिक कारणों से कम और मानव गतिविधियों के कारण अधिक होता है। जब विभिन्न प्रकार के हानिकारक पदार्थ, रसायन, प्लास्टिक, औद्योगिक कचरा, घरेलू गंदा पानी आदि नदी में मिल जाते हैं, तो नदी का पानी दूषित हो जाता है। जो जीव-जंतुओं, पौधों और मनुष्यों के लिए असुरक्षित हो जाता है। नदियों में प्रदूषण एवं गंदगी के प्रमुख कारण है-औद्योगिक कचरा (industrial waste),फैक्ट्रियों से निकलने वाला रासायनिक कचरा जो बिना शोधन के नदियों में डाला जाता है,घरेलू सीवेज, शहरों का गंदा पानी, साबुन, डिटरजेंट आदि सीधे नालों के माध्यम से नदी में पहुँच जाते हैं। जो नदी के जल को अत्यधिक दूषित कर उसे जीवधारियों के लिये असुरक्षित तथा हानिकारक बना देते हैं। कृषि अपशिष्ट खेतों में उपयोग होने वाले रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक बारिश के साथ बहकर नदियों में मिल जाते हैं जो नदी के जल को दूषित करते है। धार्मिक व सांस्कृतिक गतिविधियाँ के अंतर्गत इस्तेमाल होने वाली पूजा सामग्री, फूल, मूर्तियाँ, व्रत सामग्री आदि नदियों में प्रवाहित करने से प्रदूषण बढ़ता है। प्लास्टिक और ठोस कचरा प्लास्टिक की थैलियाँ, बोतलें, व अन्य कचरा नदी में फेंकने से जल दूषित होता है।

नदियों में प्रदूषण के अनेक दुष्परिणाम हैं-

- पीने योग्य पानी की कमी
- जलीय जीवों की मृत्यु
- बीमारियों का फैलाव (जैसे टायफॉइड, हैजा, डायरिया)
- पारिस्थितिकी तंत्र का असंतुलन
- मछलियों और जैव विविधता पर विपरीत प्रभाव

**नदियों के प्रदूषण को रोकने के उपाय-**

✓ औद्योगिक कचरे का शोधन अनिवार्य बनाना
✓ कचरा शोधन के नियमों का दृढ़ता से पालन करना
✓ नियमों का पालन न करने पर कठोर दंड का प्रावधान
✓ सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट की संख्या बढ़ाना
✓ प्लास्टिक उपयोग कम करना और कचरा नदी में न फेंकना
✓ जैविक उर्वरक और प्राकृतिक कीटनाशकों का उपयोग
✓ जन-जागरूकता अभियान चलाना
✓ नदियों की नियमित सफाई और सरकार द्वारा कड़े नियम लागू करना

**अपनी प्रगति जानिए -2**

**3.** वन प्रभावित करते हैं

1) जलवायु
2) मौसम परिवर्तन
3) हवा की गुणवत्ता
4) जैव विविधता
5) वर्षा जल संरक्षण

सही विकल्प छाँटिए-

A. सभी 1,2,3,4,5
B. केवल 1,2,3
C. केवल 1,2
D. केवल 4,5

## 14.6 सारांश –

इस घरती पर जीवन के अस्तित्व के लिए वनों का विशेष महत्व है। वन स्थलीय जीव- जंतुओं ,पेड़ -पौधों, उत्पादकों ,उपभोक्ताओं ,अपघटकों सभी के लिये महत्वपूर्ण हैं। जल चक्र को नियोजित करने में भी वनों की निर्णायक भूमिका होती है। घरती की सुंदरता तथा जीवन के निरन्तरता के लिए वनों का संरक्षण आवश्यक है। वन खाद्य श्रंखला को मजबूत बनाते है तथा पारिस्थिकी तंत्र को स्थिरता प्रदान करते है। जंगल अथवा वन हमारे लिए बहुत उपयोगी है। वन अधिकांश जीव धारियों की पोषण संबंधी आवश्यकताओ को पूरा करते है। तथा लाखों जीवों की शरण स्थली होते है। मृदा संरक्षण,मृदा संवर्धन ,वर्षा होने ,जल संरक्षण एवं वायु संरक्षण ,प्रदूषण नियंत्रण में वन अत्यंत लाभदायक होते हैं। वनों के नियोजित एवं सतत उपयोग द्वारा ही उनका संरक्षण एवं संवर्धन किया जा सकता है। वन जल चक्र को संतुलित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जल समस्त जीवधारियों के लिए अत्यंत आवश्यक है साफ एवं स्वच्छ जल सभी जीव जंतुओं ,वनस्पतियों की मूलभूत आवश्यकता है। नदियां की निरन्तरता एवं उन्हें सदा नीरा बनाने में वन सहायक होते है। नदियां जीवधारियों के लिये पेय जल का मुख्य स्रोत है। अधिकांश नदियां आज प्रदूषण की जटिल समस्या से जूझ रही हैं। दूषित जल अनेक रोग एवं विकृतियाँ पैदा कर रहा है। नदियों को स्वच्छ रखना बहुत आवश्यक है। इसके लिये हमें जागरूक एवं संवेदीकृत होना आवश्यक है। नदी और नालों की सफाई,जल निकासी प्रणाली को सुधारना,वृक्षारोपण बढ़ाना,वर्षा पूर्व चेतावनी प्रणाली को मजबूत करना,जल संरक्षण तकनीकों का विकास,पहाड़ी क्षेत्रों में सीढ़ीनुमा खेती का संरक्षण एवं प्रोत्साहन पर्यावरण संरक्षण के लिए आवश्यक हैं।

पर्यावरण पृथ्वी पर पूरे जीवन और पारिस्थितिकी अंतरसंबंधों को शामिल करता है। यह जैविक घटकों को अजैविक घटकों से जोड़ता है।

वैश्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन समस्या का खतरा बढ़ रहा है और एक सतत और न्यायसंगत विकास के लिये क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय तंत्रों के माध्यम से राष्ट्रीय कार्रवाई की आवश्यकता है। ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि राष्ट्रीय लाभ अधिकतम हो।

## 14.7 मुख्य शब्द

**सतत विकास**- सतत विकास का अर्थ है — ऐसा विकास जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करे, लेकिन भविष्य की पीढ़ियों की जरूरतों और संसाधनों से समझौता न करे। अर्थात, विकास तो हो, लेकिन प्रकृति, पर्यावरण, समाज और अर्थव्यवस्था के बीच संतुलन बना रहे। सतत विकास के मुख्य स्तंभ-पर्यावरण संरक्षण ,जंगल, नदियाँ, हवा, मिट्टी और जैव विविधता की रक्षा। आर्थिक विकास, ऐसी अर्थव्यवस्था जो दीर्घकाल तक चल सके और सभी को लाभ पहुँचे।

**मृदा संरक्षण -** मृदा संरक्षण का अर्थ है-मिट्टी को कटाव, क्षरण, प्रदूषण और पोषक तत्वों की कमी से बचाना। मिट्टी पृथ्वी पर जीवन का आधार है क्योंकि यही फसलों, पौधों और खाद्य उत्पादन का मुख्य स्रोत है। इसलिए मिट्टी का संरक्षण बेहद आवश्यक है।

**अतिवृष्टि-** अतिवृष्टि का अर्थ है-अत्यधिक वर्षा का होना। जब कम समय में अत्यधिक बारिश हो जाती है, तो उसे अतिवृष्टि कहा जाता है। यह प्राकृतिक आपदा मानी जाती है क्योंकि इसके कारण कई समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। अतिवृष्टि के कारण बाढ़ आना, खेतों में पानी भर जाने से फसलों का नुकसान, भूस्खलन ,सड़क, पुल और घरों को नुकसान,पेयजल स्रोतों का दूषित होना,यातायात बाधित होना आदि।

**अनावृष्टि -** अनावृष्टि का सामान्य अर्थ है -वर्षा का अभाव । जो प्राकृतिक संतुलन बिगड़ने के कारण उत्पन्न होता है। प्रदूषण एवं ग्लोबल वार्मिंग के कारण पृथ्वी का तापक्रम बढ़ने के कारण वर्षा का होना एवं वितरण प्रभावित होने लगता है। अनावृष्टि की दशायें सुखा एवं अकाल को बढ़ाती हैं। जो जीव धारियों के मध्य संघर्ष बढ़ाती है। जीव जंतुओं एवं इंसानों के लिये खाध्य सामग्रियों का संकट उत्पन्न हो जाता है। तथा पेय जल एवं दैनिक आवश्यकताओ तथा फसलों के लिए पानी की कमी होने लगती है।

**ग्लोबल वार्मिंग-** ग्लोबल वार्मिंग का अर्थ है — पृथ्वी के औसत तापमान में लगातार बढ़ोतरी होना। यह वृद्धि मुख्य रूप से ग्रीनहाउस गैसों (कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड आदि) की अधिक मात्रा के कारण होती है, जो सूर्य की गर्मी को धरती पर रोक लेती हैं। ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव से जलवायु परिवर्तन,समुद्र स्तर में वृद्धि, बर्फ पिघलना (हिमनदों का घटाना), असामान्य मौसम सूखा, बाढ़, चक्रवात, जैव विविधता पर खतरा, मानव स्वास्थ्य पर बीमारियों का फैलाव आदि हैं।

### अपनी प्रगति जानिये के उत्तर

1 -A, 2-B, 3-A, 4- B

## 14.8 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

**1.** वनाच्छादन का अर्थ स्पष्ट किजिये? वनाच्छादन का क्या महत्व है?
**2.** भारत में नदियों में प्रदूषण के कारणों को स्पष्ट किजिये?
3. वनों की आवश्यकता का वर्णन किजिये?
**4.** नदियों को दूषित होने से किस प्रकार बचाया जा सकता है,स्पष्ट किजिये।
**5.** वर्तमान समय के मुख्य पर्यावरणीय खतरों का वर्णन किजिये?

## 14.10 संदर्भ सूची –


- सेनगुप्ता, आर.(2010), विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के लिए पर्यावरण के मुद्दे, मौलिक अर्थशास्त्र, खंड III
- लखेड़ा प्रकाश ,कल्पना (2011), इम्पावर्मेंट ऑफ़ रूलर वुमन ,मल्लिका बुक्स ,दिल्ली।
- सोवाकूल, बी,(2014),विकासशील एशिया में पर्यावरण के मुद्दे, जलवायु परिवर्तन और ऊर्जा सुरक्षा,संख्या 399, एडीबी अर्थशास्त्र वर्किंग पेपर श्रृंखला।
- डंथुलुरी, वी, (2015),पर्यावरणीय समस्या और सतत विकास: भारत के मुद्दों और चुनौतियों के लिए विशेष संदर्भ, पर्यावरण, सामाजिक विज्ञान और मानवता में अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन , सितंबर
- कुमार धर्मेन्द्र, दुर्गा (2016), ग्लोबलाइज़ेशन एनवायरनमेंट एण्ड वुमन,अंकित प्रकाशन,हल्द्वानी
- लखेड़ा प्रकाश ,कल्पना (2023),क्लायमेट चेंज मिटिगैशन, इंडियन पर्स्पेक्टिव चाणक्य पब्लिकैशन ,दिल्ली
- https://www.unesco.org/en/query-list/e/environmenthttps://chatgpt.com/

# UNIT-15 Globalisation of the right: The Planet Earth and Global common.

# अधिकार का वैश्वीकरण, पृथ्वी ग्रह और वैश्विक सामान्य

**15.1 प्रस्तावना**
**15.2 उद्देश्य**
**15.3 मानवाधिकार**
**15.4 अधिकार का वैश्वीकरण**
**15.5 पृथ्वी एक ग्रह के रूप में**
**15.6 वैश्विक स्तर पर सामान्य अधिकार**
**15.7 सारांश**
**15.8 संदर्भ ग्रन्थ**
**15.9 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न**

## 15.1 प्रस्तावना :

मानवधिकार पृथ्वी को एक सम्पूर्ण भू –भाग के रूप में देखता है जहाँ राष्ट्र की सीमाएं कोई मायने नहीं रखती क्योंकि पृथ्वी पर जहाँ-जहाँ मानव निवास करता है वहां-वहां उसके अधिकार भी हैं । और इन अधिकारों का एक सामान रूप से लागू करके मानव के सामान्य जीवन जीने की बात कही जाती है । वैश्विक स्तर पर अधिकारों का विस्तार हो रहा है और संसाधनों को भी एक दूसरे तक पहुँचाया जा रहा है । आज पृथ्वी पर उसके संसाधन वैश्विक सामान्य के रूप में मान्यता प्राप्त कर रहे हैं जिस पर सभी का साझा अधिकार है । उदहारण के लिए यदि पेय जल को ही लिया जाय तो इसकी आवश्यकता सभी को सामान रूप से है और वैश्विक स्तर पर सभी को शुद्द जल पीने का अधिकार है । इसी प्रकार स्वच्छ वातावरण एवं स्वच्छ पर्यावरण में रहने का सभी को समान अधिकार है । इसके लिए आवश्यकता है कि वैश्विक स्तर पर पृथ्वी को एकल भू –भाग अथवा एकीकृत रूप में देखा जाय जिससे कि संसाधनों का प्रबंधन वैश्विक रूप में हो सके । अधिकार का वैश्वीकरण का अर्थ यह भी है कि अधिकार अब केवल किसी राष्ट्र की सीमाओं तक सीमित नहीं हैं अपितु उसका विस्तार वैश्विक स्तर पर मानव समुदाय के सभी सदस्यों तक अपनी पहुँच बना सके इसके लिए यह अनिवार्य है कि हम पृथ्वी को एक इकाई के रूप में देखें । अधिकार का वैश्वीकरण वर्तमान की विश्व्यापी आवश्यकता है जिसके

अंतर्गत विभिन्न देशों और संस्कृतियों के बीच अधिकारों की समझ और क्रियान्वयन में एकरूपता बढ़ रही है। इसका सीधा सा अर्थ है कि वैश्विक स्तर पर जागरूकता बढ़ी है और यह प्रक्रिया मानवाधिकार जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों को मान्यता और सरंक्षण प्रदान कर रही है। यह एक ऐसी प्रणाली है जिसके द्वारा यह सुनिश्चित होता है कि वैश्विक स्तर पर किसी भी देश अथवा क्षेत्र में रहने वाला व्यक्ति को सम्मान, सुरक्षा और अवसर मिलें। वैश्वीकरण के दौर में आज मानवाधिकार और पर्यावरणीय समस्या किसी एक देश की समस्या न होकर सभी देशों की संयुक्त समस्या है जो की सयुंक्त प्रयास से ही हल हो सकते हैं। इसलिए पृथ्वी पर जीवन की रक्षा के लिए पर्यावरणीय अधिकार और सतत विकास को प्रत्येक क्षेत्र में पहचान देना आवश्यक हो गया है। वैश्विक सामान्य के रूप में अधिकारों की यह अवधारणा न केवल क़ानूनी और नैतिक दायित्वों को जोड़ती है अपितु सामाजिक और सांस्कृतिक सीमाओं को पार कर मानवता के साझा हितों को प्रथमिकता देती है। अत: अधिकारों का वैश्वीकरण न केवल एक कानूनी विचार धारा है, अपितु यह पृथ्वी के प्रत्येक नागरिक के लिए सामान अवसर, सुरक्षा और सम्मान की गारेंटी के रूप में प्रस्तुत हो रहा है।

## 15.2 उद्देश्य:

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप निम्नलिखित उद्देश्यों को प्राप्त कर सकेंगे–

- ✓ मानवाधिकार के प्रत्यय को समझ सकेंगे।
- ✓ मानवाधिकार के वैश्वीकरण को समझ सकेंगे ।
- ✓ पृथ्वी ग्रह में मानवाधिकार को समझ सकेंगे।
- ✓ वैश्विक स्तर पर मानवाधिकार को सामान्य रूप में समझ सकेंगे।
- ✓ मानवाधिकारों की आवश्यकता एवं प्रयोगों को समझ सकेंगे।

## 15.3 मानवाधिकार:

मानवाधिकार शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है मानव और अधिकार अर्थात जन्म लेते ही मनुष्य को इस भूलोक पर निवास करने के साथ-साथ कुछ अधिकार एवं स्वतंत्रताएं प्राप्त हैं ये अधिकार लिंग,रंग, जाति-धर्म, रंग या किसी अन्य स्थिति की परवाह किये बगैर सबके लिए एक सामान हैं। इनमें से मुख्यतया स्वतंत्रता का अधिकार, गुलामी एवं यातना से मुक्ति का अधिकार शिक्षा का अधिकार और स्वतंत्रता का अधिकार शमिल है।

मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (यूडीएचआर) एक ऐसा दस्तावेज़ है जो स्वतंत्रता और समानता के लिए एक वैश्विक रोडमैप की तरह काम करता है और प्रत्येक व्यक्ति की प्रत्येक स्थान पर अधिकारों की रक्षा करता है। यह पहली बार था जब देश उन स्वतंत्रताओं और अधिकारों पर सहमत हुए जो सार्वभौमिक संरक्षण के योग्य हैं ताकि प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र, समान और गरिमापूर्ण जीवन जी सके। यूडीएचआर(The Universal Declaration of Human Right) को नव स्थापित संयुक्त राष्ट्र द्वारा 10 दिसंबर 1948 को द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान "मानवता की अंतरात्मा को आहत करने वाले बर्बर

कृत्यों" के जवाब में अपनाया गया था। इसके अंगीकरण ने मानवाधिकारों को स्वतंत्रता, न्याय और शांति का आधार माना। इनको तीस अनुच्छेदों में वर्णित किया गया है।

मानवाधिकारों को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है पहला भाग में नागरिक और राजनीतिक है उदहारण के लिए जीवन जीने का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, यातना से मुक्ति का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार निष्पक्ष न्याय पाने का अधिकार, और मतदान का अधिकार। दुसरे भाग में आर्थिक, सामाजिक अधिकार,सांस्कृतिक अधिकार, सामाजिक सुरक्षा, शिक्षा का अधिकार एवं स्वास्थ्य का अधिकार जबकि तीसरे भाग में सामूहिक अधिकारों में पर्यावरण संरक्षण, शांति और विकास हैं।

मानव अधिकार सभी के लिए सामान होते है आप किस राज्य में अथवा गाँव में रहते हैं इससे कोई फ़र्क नहीं पढ़ता। मानवाधिकारों की रक्षा हेतु प्रत्येक राज्य में मानवाधिकार आयोग कार्य करता है क्योंकि मानवाधिकारों की रक्षा करना प्रत्येक राज्य के दायित्व के अंतर्गत आता है। हमारे देश में मानवाधिकारों की निगरानी हेतु राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग कार्य करता है।

मानवाधिकारों की आवश्यकता वर्तमान में सम्पूर्ण समाज की आवश्यकता है क्योंकि यह आधुनिक समाज के प्रगति की आधारशीला है । मानवाधिकार व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता और समानता को सुनिश्चित करने का अधिकार है। मानवाधिकार किसी भी राज्य या राष्ट्र की अनैतिक शक्ति की सीमिति करते हैं इसके साथ ही समाज के अंतर्गत अल्पसंख्यक एवं पिछड़े वर्ग की रक्षा करते हैं । मानवाधिकार सामजिक न्याय, लोकतंत्र और शांति को बढ़ावा देते हैं । इस प्रकार हम यह देखते हैं कि विकासशील देशों में मानवाधिकार के कारण शांति लाने में सहायता मिली है इसका कारण यह है कि विकासशील देशों में गरीबी एवं असमानता प्रबल है और मानवाधिकार, अधिकारों की समानता लाने का प्रयास करते हैं । मानवाधिकारों का उपयोग सामान्यतया न्यायालयों, नीतियों और आन्दोलनों में होता है इसके साथ ही ये आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करते हैं और सभी को समान अवसर देने की बात करते हैं। मानवाधिकारों का उपयोग सतत विकास लक्ष्यों से जुड़कर किसी भी राष्ट्र के भविष्य को सुरक्षित बनता है इसी कारण हम यह कह सकते हैं कि मानवाधिकार सभी मनुष्यों को एक जुट कर एक ऐसे विश्व नींव रखते हैं जहाँ सभी को न्याय मिल सके।

प्रस्तुत इकाई में हम अधिकार का वैश्वीकरण, पृथ्वी ग्रह और वैश्विक सामान्य को मानवाधिकार के सन्दर्भ में समझने का प्रयास करेंगे।

## 15.4 अधिकार का वैश्वीकरण

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज में रहते हुए उसे विभिन्न प्रकार के कार्यों में अपनी सहभागिता निभानी होती है। यदि समाज में किये जाने वाले क्रिया कलापों में कोई नियम अथवा क़ानून नहीं होंगे तो ऐसे में सामाजिक स्थिरता बनाना मुश्किल हो सकता है।इसलिए कानून बनाये जाते हैं और इन कानूनों के अनुपालन में व्यक्तियों को कुछ अधिकार भी दिए जाते हैं ये अधिकार मानवाधिकार के अंतर्गत आते हैं। मानवाधिकार व्यक्तियों को उन्हें उनके मौलिक अधिकारों के द्वारा सुरक्षा प्रदान करता है ।

भारत में अलग-अलग राज्यों में विविध प्रकार की भाषाएँ एवं बोलियाँ बोली जाती हैं तथा विविध प्रकार की वेशभूषाएं धारण की जाती हैं ऐसे में केवल भारत में ही मानवाधिकार के बहुत से मामले सामने आते रहते हैं। ऐसे में हम यदि वैश्विक स्तर की बात करें तो परिदृश्य और भी विविधतापूर्ण होगा ऐसे में एकसमान मानवाधिकारों को वैश्विक स्तर पर लागू करना कठिन है। आज विश्व में मानवाधिकारों की सुरक्षा और उनका संवर्धन एक वैश्विक मुद्दा बन गया है।आज वैश्वीकरण के कारण आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में विभिन्न देशों के मध्य सम्बन्ध स्थापित हुए हैं साथ ही मानवाधिकारों की रक्षा और प्रचार प्रसार के तरीके भी बदल चुके हैं। आज का युग सूचना-तकनीकी का युग है और ऐसे में विभिन्न देशों के बीच की भौतिक दूरियां कोई मायने नहीं रखती हैं। इसी कारण सूचना तकनिक ने मानवाधिकारों के मुद्दों को वैश्विक स्तर पर पहुँचाने में मदद की है। आज विअश्विक स्तर पर कहीं भी मानवाधिकार का उल्लंघन होता है तो वह शोसल मीडिया मिडिया एवं इन्टरनेट के माध्यम से तत्काल वैश्विक स्तर पर ट्रेंड करने लगती है। और इस कारण क़ानून व्यवस्था के जिम्मेदार लोगों पर त्वरित कार्यवाही हेतु दबाव बनने लगता है। तकनीकी क्रांति और वैश्विकरण के कारण अंतराष्ट्रीय मानवाधिकार संगठन मजबूत हुए हैं उदहारण के तौर पर संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग, एम्नेष्टि इंटरनेशनल और ह्यूमन राइट्स वाच आदि संगठन हैं जिन्होंने वैश्विक स्तर पर मानवीय अधिकारों के उल्लंघन पर नजर रखने और मदद पहुचाने का कार्य किया है। परिणामस्वरूप वैश्विक स्तर पर विभिन्न हिस्सों में मानवाधिकार उल्लंघन से सम्बंधित उत्पीडन, लैंगिक भेदभाव, जातिवाद एवं सामाजिक अन्याय के खिलाफ आवाज उठाई जाती है। एक ओर जहाँ वैश्विकरण के कारण विभिन्न देशों के बीच दूरियां कम हुई हैं वहीँ दूसरी ओर चुनौतियाँ भी बढ़ी हैं इसका कारण वैश्विक बाजार हैं जहाँ बहुराष्ट्रीय कंपनियों की आर्थिक गतिविधियों के कारण स्थानीय जनों के मानवाधिकारों का हनन होता है जैसे बाल मजदूरी, महिलाओं के साथ अत्याचार, गरीब एवं कमजोर वर्ग का शोषण आदि अत: हम सभी को यह मानना होगा कि वैश्वीकरण के साथ साथ मानवाधिकारों के अंतराष्ट्रीय मानकों का सम्मान किया जाय एवं कड़ाई से पालन किया जाय। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मानवाधिकार के सन्दर्भ में वैश्वीकरण ने सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलुओं को जन्म दिया है। जिसने वैश्विक स्तर पर विश्व समुदाय को एकजुट कर मानवाधिकारों की रक्षा हेतु प्रतिबद्द रहने का अवसर प्रदान किया है।

वैश्वीकरण ने एक ओर जहाँ आधुनिक युग में विभिन्न देशों की आर्थिक स्थिति को सुधारा है वहीँ दूसरी ओर मानवाधिकारों की प्रक्रिया को भी एक देश तक सीमित न रहकर विभिन्न देशों में पहुंचा दिया है।

## 15.5 पृथ्वी एक ग्रह के रूप में:

पृथ्वी एक ग्रह के रूप में एक अद्भुत और रहस्यमयी ग्रह है यह सौर मंडल का तीसरा ग्रह है इसका व्यास लगभग 12,742 किलोमीटर है और यह सूर्य से औसतन 14 9.6 मिलियन किलोमीटर दूर स्थित है यही कारण है की सूर्य से यही दूरी इसे जीवन के लिए आदर्श बनाता है। पृथ्वी पर जल और भूमि का अनुपात 71:29 है इसमें सात महाद्वीप और पांच महासागर हैं। पृथ्वी के वायु मंडल में 78% नाइट्रोजन, 21% आक्सीजन और शेष प्रतिशत अन्य गैसें हैं। पृथ्वी की आंतरिक संरचना में क्रस्ट,

मेंटल, बाहरी कोर और आंतरिक कोर शामिल हैं इन्ही के कारण भूकंप और ज्वालामुखी उत्पन्न होते हैं। जीव जगत की बात करें तो पृथ्वी पर 8.7 मिलियन से अधिक प्रजातियाँ हैं जिसमे से मनुष्य भी एक है।

हमारे ब्रह्मांड में बहुत से ग्रह हैं उनमें से अभी तक की जानकारी के अनुसार पृथ्वी के अतिरिक्त किसी भी अन्य पर जीवन संभव नहीं हुआ है। पृथ्वी ही एक ऐसा ग्रह है जिसमें मानव जीवन संभव हुआ है। इसलिए हम पृथ्वी को एक अनमोल ग्रह भी कह सकते हैं। मानवाधिकारों के सन्दर्भ पृथ्वी ग्रह को समझना आवश्यक है इसका कारण यह है कि मानवाधिकार का मूल अधिकार सुरक्षित वातावरण में जीवन जीने के अधिकार से है। हमारे प्राकृतिक संसाधन और जीवन जीने के लिए अनुकूल परिस्थितियों के बीच संतुलन ही मानव अधिकारों का मजबूत आधार है।

जैसा कि हम पढ़ते आये हैं कि पृथ्वी पर सब जीव जंतु एक दूसरे पर किसी न किसी रूप निर्भर रहते हैं परन्तु जीवों के इतर मानवों के अधिकार और कर्तव्य स्वयं मानवों द्वारा ही निर्धारित किये गए हैं । पृथ्वी पर निवास करने वाले सभी मनुष्यों को मानवाधिकार उचित जीवन का अधिकार देते हैं जिसके अंतर्गत स्वच्छ जल स्वच्छ वायु, पर्यावरण की सुरक्षा के साथ साथ प्राकृतिक संशाधन का मानकीकृत उपयोग आदि शामिल है। इसके विपरीत पृथ्वी पर अत्यधिक जनसँख्या, विभिन्न प्रकार के प्रदूषण, कृषि भूमि एवं वन भूमि में आई लगातार गिरावट एवं प्राकृतिक संशाधनों का अत्यधिक दोहन मानवाधिकारों के लिए खतरा बन गए। पर्यावरण के असंतुलित होने के कारण मानवोपयोगी संशाधनों में कमी एवं विभिन्न प्रकार की विमारियां जन्म लेने लगती हैं और इस कारण मानवाधिकार प्रभावित होते हैं। पृथ्वी को यदि विभिन्न देशों के संगठन के रूप में न देखकर एक ग्रह के रूप में देखा जाय तो यह माना जा सकता है कि मानवाधिकार वैश्विक स्तर पर सुरक्षित होने चाहिए। और एक ग्रह के रूप में मानने और समझने पर पृथ्वी की समस्याएं चाहे वह किसी भी कोने पर हों सबकी ही होगी उदहारण के लिए जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग जैसे वैश्विक संकट भी सम्पूर्ण पृथ्वी वासियों का अपना संकट होगा और इससे निपटने के लिए सब अपनी अपनी और सए प्रयास करेंगे। और इस भावना से हम आपस में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक दूसरे को सहयोग कर सकेंगे। आज के युग में विभिन्न देशों की लड़ाई उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों को लेकर है पृथ्वी को एक ग्रह के रूप में मानने पर हम उपलब्ध संसाधनों को एक दूसरे देशों के साथ साझा कर सकते हैं। मानवाधिकारों की बात तभी की जा सकती है जब पृथ्वी ग्रह सुरक्षित बचेगा इस लिए सर्वप्रथम हमको इस पृथ्वी ग्रह की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर इसकी देखभाल करनी होगी। तभी सभी लोगों को भविष्य में भी सामान रूप से जीवन के मौलिक अधिकार मिल सकेंगे। इस प्रकार यदि पृथ्वी को एक सम्पूर्ण इकाई मानकर उसके सरंक्षण को मानवाधिकारों का अभिन्न हिस्सा माना जाना चाहिए।

## 15.6 वैश्विक स्तर पर सामान्य अधिकार :

वैश्विक स्तर पर सामान्य एक व्यापक अवधारणा है जो कि विश्वव्यापी साझा मूल्यों, मानदंडों और न्यायपूर्ण व्यवस्था को संदर्भित करती है । इसका अर्थ यह है की जहाँ देश और सीमाओं के परे सभी मनुष्यों के लिए सामान अधिकार और कर्त्यव्य लागू होते हैं जो कि वैश्विक स्तर पर न्याय, नैतिकता, सार्वभौमिकता और सामूहिक जिम्म्मेदारी पर आधारित है । वैश्विक सामान्य का अर्थ एक ऐसी व्यवस्था से है जहाँ संसाधनों का उचित वितरण, और असमानताओं का न्यूनीकरण और अंतराष्ट्रीय

सहयोग के साथ-साथ सभी संस्कृतियों को सम्मान करने से है । प्रसिद्द दार्शनिक जॉन रॉल्स ने मानवाधिकारों को "लोगों का कानून" माना है इसके अनुस्सर मानवाधिकार के कारण राज्य स्वायत्तता, समझौतों का पालन और मानवीय गरिमा के सिद्दांतों से बंधे होते हैं ।

मनुष्य जबसे इस पृथ्वी पर जन्म लेता है तभी से उसे कुछ मूलभूत अधिकार मिल जाते हैं चाहे वह किसी भी राष्ट्र , लिंग,धर्म अथवा जाति में जन्म ले इन मूलभूत अधिकारों को ही हम मानवधिकार कह सकते हैं ।सयुंक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1948 में अपनाए गए मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा(UDHR) ने ही वैश्विक स्तर पर सामान्य अधिकारों की अवधारणा को जन्म दिया । इस घोषणा का मुख्य उद्देश्य दूसरे विश्व युद्द की विभीषिकाओं के पश्चात मानवता को पुनर्जीवित करने का प्रयास था । मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (UDHR) में कुल तीस अनुच्छेद हैं जो जीवन, स्वंत्रता, समानता और गरिमा जैसे सामान्य अधिकारों की वैश्विक स्तर पर रक्षा करने की बात करते हैं ।

वैश्विक स्तर पर सामान्य अधिकारों की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

i-**समानता और गरिमा का अधिकार**- इस अधिकार के अनुसार सभी मनुष्य जन्म से स्वतंत्र और समान हैं आपस में कोई भेदभाव नहीं है (अनु. 1-2 ) ।

**ii- जीवन और सुरक्षा का अधिकार** – प्रत्येक व्यक्ति को जीवन जीने का अधिकार है किसी भी व्यक्ति को गुलाम नहीं बनया जा सकता नहीं किसी प्रकार की यातना दी जा सकती है (अनु.3-5) ।

**iii-स्वतंत्रता और न्याय का अधिकार** –इसके अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति को निष्पक्ष सुनवाई, गिरफ़्तारी से सुरक्षा और स्वतंत्र आवागमन का अधिकार दिया गया है (अनु.9-13) ।

**iv-राजनीतिक और नागरिक अधिकार** – इस अधिकार के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, शांतिपूर्ण सभा और मतदान कर सकता है (अनु.19-21) ।

**v- आर्थिक सामजिक और सांस्कृतिक अधिकार**- इस अधिकार के तहत प्रत्येक व्यक्ति शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक जीवन आदि में अपनी भगीदारी निभा सकता है (अनु.22 -27) ।

मानवाधिकार के अंतर्गत उपरोक्त अधिकार सार्वभौमिक, अविभाज्य, अपरिवर्तनीय और परस्पर सम्बंधित हैं ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वैश्विक स्तर पर सामान्य अधिकार मानवता की एकता का प्रतीक हैं एक राष्ट्र के रूप में सभी देशों को मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (UDHR) पालन करना चाहिए । हम सभी को आपस में भी व्यक्तिगत रूप से जागरूक होना चाहिए और मानवाधिकारों के पक्ष में सक्रिय भागीदारी निभानी चाहिए । अन्तराष्ट्रीय कानूनों के साथ-साथ ये अधिकार हमारे नैतिक दवित्व भी हैं ।

## 15.7 सारांश:

प्रस्तुत इकाई में हमने जाना कि,अधिकार का वैश्वीकरण, पृथ्वी ग्रह और वैश्विक सामान्य एक प्रकार की एकीकृत अवधारणा है जो मानवाधिकारों को वैश्विक स्तर पर विस्तारित करने, पृथ्वी के संशाधनों की समान साझेदारी और वैश्विक शासन की समान्य संरचना पर केन्द्रित है । मानवाधिकार की

प्रक्रिया विभिन्न राष्ट्रों की सीमाओं को पार कर हम सभी के लिए एक सामान मानवाधिकारों की गारंटी सुज्निश्चित करती है जिसके अंतर्गत सामाजिक, आर्थिक , राजनैतिक और सांस्कृतिक पहलू शामिल हैं । संयुक्त राष्ट्र की सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणा (The Universal Declaration of Human Right) एवं आर्थिक-सामजिक- सांस्कृतिक अधिकार संधि (International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights) ICESCR के कारण ही हम सभी को मानवाधिकार का आधार प्रदान किया है ।वैश्विक स्तर पर हम पृथ्वी के अलग अलग हिस्सों में निवास करते हैं इस कारण हमारे आसपास की जलवायु एवं संसाधन दूसरे देशों की तुलना में भिन्न हैं मानवाधिकार पृथ्वी ग्रह के सन्दर्भ में जलवायु परिवर्तन एवं संसाधन वितरण जैसे मुद्दों पर सामान्य शासन की मांग करता है जहाँ विकसित राष्ट्र विकाशशील देशों के अधिकारों की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध हैं ।इसके साथ ही हम सब की भी जिम्मेदारी है कि हम मानवाधिकारों के प्रति जिम्मेदार रहें और मानवाधिकारों की वर्तमान में उपयोगिता को समझें ।वैश्विक सामान्य की बात करें तो यह एक दार्शनिक और कानूनी अवधारणा है जो विश्व स्तर पर साझा मूल्यों एवं मानदंडों और न्याय के सिद्दांतों को संदर्भित करती है और व्यक्तियों के बीच दूरियों को पृथ्वी एक ग्रह के रूप में समझकर कम करने का प्रयास करती है, जहाँ सभी मनुष्यों के लिए सामान अधिकार और कर्तव्य लागू होते हैं । मानवाधिकार कानूनी रूप से अन्तराष्ट्रीय कानून को मजबूत बनाता है । प्रस्तुत इकाई में हमने यह भी जाना कि मानवाधिकार वैश्विक स्तर पर सभी व्यक्तियों के लिए जन्मजात स्वतंत्रता, गरिमा और समानता सुनिश्चित करने वाले मौलिक अधिकार हैं। सयुंक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद् प्रत्येक चार वर्षों में सदस्य देशों की समीक्षा करती है।

## 15.8 संदर्भ ग्रन्थ:


- https://www.ijcrt.org/papers/IJCRT2406768.pdf
- https://nhrc.nic.in/press-release/national-seminar-globalization-poverty-and-human-rights
- http://weather.com
- www.jagran.com
- https://www.drishtijudiciary.com/hin/editorial/concept-of-h-umrights https://www.cheggindia.com/hi/manavadhikar/https://www.jagranjosh.com/general-knowledge/human-rights-and-its-types-1698239750-2https://www.drishtiias.com/hindi/to-the-points/paper2/human-rights-27


## 15.9 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1- मानवाधिकार के सन्दर्भ को ध्यान में रखते हुए मानवाधिकार और वैश्वीकरण को विस्तारपूर्वक लिखिए ।

2- पृथ्वी को विभिन्न राष्ट्रों का समूह न मानकर एक ग्रह के रूप में समझते हुए मानवाधिकारों की आवश्यकता एवं उपयोगिता को समझाइए।

3- मानवाधिकार के वैश्वीकरण को विस्तारपूर्वक समझाइए।

4- मानवाधिकारों के सन्दर्भ में वैश्विक सामान्य से क्या तात्पर्य है विस्तार से चर्चा कीजिए।

5-वर्तमान समय में मानवाधिकारों की आवश्यकता एवं प्रयोगों को विस्तार से समझाइए।

# Unit-16 Right to Clean Environment:Its Content and Scope: Right to Environment, Right to Development and Culprits and Victim स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार: इसकी विषयवस्तु और क्षेत्र : पर्यावरण का अधिकार, विकास का अधिकार और अपराधी एवं पीड़ित


**16.1 प्रस्तावना**

**16.2 उद्देश्य**

**16.3 स्वच्छ पर्यावरण**

**16.4 स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार**

**16.4.1 स्वच्छ पर्यावरण की विषयवस्तु**

**16.4.2 स्वच्छ पर्यावरण के क्षेत्र**

**16.5 स्वच्छ पर्यावरण के विकास का अधिकार**

**16.6 पर्यावरण के अपराधी**

**16.6.1 पर्यावरण पीड़ित**

**16.7 सारांश**

**16.8 सन्दर्भ ग्रन्थ**

**16.9 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न**


## 16.1 प्रस्तावना:

पर्यावरण शब्द से तात्पर्य हमारे चारों ओर के वातावरण से है, पर्यावरण वह प्राकृतिक परिवेश है जिसमें जीव, जंतु, वनस्पति, जल, वायु और मृदा एक संतुलित पारिस्थितिकी तंत्र बनाते हैं। पारिस्थतिकी मानव जीवन का आधार है जो प्राण वायु, जल और मानव शरीर को उर्जा प्रदान करने के

लिए विभिन्न प्रकार के भोजन प्रदान करता है। प्रकृति के सृजनकर्ता ने अत्यंत सावधानी बरतते हुए हमारी प्रकृति का सृजन किया, यही कारण है कि हमें हमारी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं हमारी प्रकृति ही कर देती है। हमारा पर्यावरण हमारे जीवन का आधार है हमें अपने पर्यावरण की रक्षा करनी चाहिए। सामान्य तौर पर हम पर्यावरण को दो घटकों में बाँट सकते हैं पहला जैविक घटक, जिसके अंतर्गत इसमें सभी प्रकार के जीवित तत्व जैसे मानव,जीव- जंतु पेड़- पौधे, सूक्ष्म जीव आदि शामिल हैं जबकि दूसरे घटक, के अंतर्गत इसमें निर्जीव तत्व जैसे कि वायु, जल, मृदा एवं सूर्य का प्रकाश और जलवायु शामिल है। पर्यावरण के लिए दोनों प्रकार के घटकों में संतुलन होना आवशयक है क्योंकि दूसरा घटक मानव जीवन के लिए संसाधनों के रूप में है और मनुष्य इन संसाधनों का अत्यंत दोहन कर पर्यावरण संतुलन को असंतुलित कर रहा है। संसाधनों की आवश्यकता हजारों वर्ष पहले भी थी आज भी है और भविष्य में भी अनंत वर्षो तक रहेगी। सामान्यतया देखा जाय तो मनुष्य के अतिरिक्त इस ब्रह्मांड में शायद ही कोई जीव हो जो पर्यावरण को नुकसान पहुंचा रहा हो। मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं की नहीं अपितु अपनी इच्छाओं की पूर्ति करनी होती है जिस कारण वह प्राकृतिक संसाधनों का अतिरिक्त दोहन कर रहा है। पर्यावरण संरक्षण का अर्थ प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा, प्रदूषण नियंत्रण और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखना है, ताकि भावी पीढ़ियां स्वच्छ पर्यावरण प्राप्त कर सकें।

प्रस्तुत इकाई में हम स्वच्छ पर्यावरण, स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार, स्वच्छ पर्यावरण के विकास का अधिकार, पर्यावरण के अपराधी एवं पर्यावरण पीड़ितों का अध्ययन करेंगे।

## 16.2 उद्देश्य:

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप

i- स्वच्छ पर्यावरण को जान पाएंगे ।

ii- स्वच्छ पर्यावरण के अधिकार को जान पायेंगे ।

iii- स्वच्छ पर्यावरण के क्षेत्र को जान सकेंगे ।

iv- स्वच्छ पर्यावरण के विकास के अधिकार को समझ पाएंगे ।

v- पर्यावरण के अपराधी एवं पीड़ितों को समझ पाएंगे ।

## 16.3 स्वच्छ पर्यावरण:

स्वच्छ पर्यावरण से तात्पर्य हमारे चारों ओर के उस परिवेश से है जो प्रदूषण, अपशिष्ट पदार्थों एवं हानिकारक रसायनों से मुक्त हो या हम कह सकते हैं कि, वह पर्यावरण जो विशुद्द रूप से प्रकृति से हमें मिला था, जिसमे हवा शुद्द थी, जल पीने योग्य और उपयोगी था और मृदा पेड़ पौधों को उगाने के अनुकूल थी ,मानव का शारीरिक स्वास्थ्य उत्तम था और हमारा पारिस्थितिकी तंत्र सुरक्षित । विश्व में आज बहुत कम स्थान ऐसे बचे हैं जो शत प्रतिशत स्वच्छ पर्यावरण के मानकों को पूर्ण करते हों। स्वच्छ पर्यावरण की कुछ प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित प्रकार की हो सकती हैं –

**प्रदूषण मुक्त वातावरण:** हमारे चारों ओर का वातावरण चाहे वह प्राण वायु के रूप में हो, पेय जल अथवा उपयोग किये जाने वाले जल के रूप में हो या मृदा के रूप में हो प्रदूषण से मुक्त होना चाहिए।

**अपशिष्ट प्रबंधन:** प्रदूषण का प्रमुख कारण अपशिष्ट का उचित प्रबंधन न होना है। अत: स्वच्छ पर्यावरण हेतु अपशिष्ट चाहे ठोस अवस्था में हो या द्रव या गैसीय अवस्था में हो उसके रिसाईकिलिंग का उचित प्रबंधन होना चाहिए।

**प्राकृतिक संतुलन का होना :** हमारी पृथ्वी में समस्त जीव-जंतुओं, सूक्ष्म जीवों एवं पेड़ पौधों का समान महत्व है। इसलिए स्वस्थ एवं स्वच्छ पर्यावरण हेतु इन सबका योगदान सामान है ।

मानव पर्यावरण का प्रमुख घटक है, जो अपने कार्यों द्वारा इसे परिवर्तित करता है तथा स्वंय भी प्रभावित होता है। स्पष्ट है कि पर्यावरण सदैव परिवर्तनशील रहता है, जिसमें मानवीय एवं प्राकृतिक दोनों शक्तियों की भूमिका रहती है। यह निर्धारित करना कठिन हैं कि पर्यावरण में होने वाला कोई भी परिर्वतन पूर्ण रूप से प्राकृतिक कारकों का परिणाम है, या मानवीय योगदान है। इस प्रकार पर्यावरण किसी स्वतन्त्र कारक का प्रभाव न होकर विभित्र कारकों (जैविक-अजैविक) का अन्तः क्रियात्मक प्रभावकारी योग है, जो स्वंय परिवर्तनशील रहते हुए प्रत्येक कारक को भी प्रभावित करता है। पर्यावरण के कारक विभिन्न श्रृंखलाओं (Chains) पारिस्थितिकीय चक्रों तथा तंत्रों (Systems) के द्वारा परस्पर एक-दूसरे से संयोजित रहते हुए सन्तुलन की दशा को बनाये रखते हैं।

पर्यावरण एक खुला तन्त्र है, जो सदैव परिवर्तनशील रहता है। इसके विभिन्न अजैविक घटकों के मध्य जीवों का परस्पर सहवास होता है, क्योंकि पर्यावरण तथा जीव एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। ये जीव पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रकृति अनुकूलन कर लेते हैं। जीव अनुकूलन करके ही पर्यावरण में अनुक्रिया करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप जीव मण्डलीय पारिस्थितिक तन्त्र इनसे प्रभावित होता है। पर्यावरण की प्रकृति विषय के विकास के साथ परिवर्तित होती रही। हैं। इसमें प्रारम्भ में केवल भौतिक संघटकों को ही सम्मिलित किया गया जिसका गाउडी ने पुरजोर समर्थन किया लेकिन बाद में जैविक संघटकों को भी सम्मिलित किया गया तथा इनमें मानव को केन्द्रीय स्थान दिया गया।

पर्यावरण और पारिस्थतिकीय परिभाषाएँ-

अंग्रेजी भाषा के Ecology शब्द की व्युत्पत्ति ग्रीक भाषा के Oikos तथा Logos दो शब्दों से हुई है। Oikos का अर्थ होता है- 'आवास का स्थान' (Habitation) तथा Logos का अर्थ होता है-अध्ययन (Study of)। इस प्रकार Ecology का शाब्दिक अर्थ-आवास के स्थान का अध्ययन या आवास का अध्ययन होता है।

जर्मन के जन्तु वैज्ञानिक होकेल (Haeckel) ने सर्वप्रथम सन् 1866 में पारिस्थितिकी की ज्ञान की पृथक शखा के रूप में पहचान की। हीकेल महोदय ने पारिस्थिको के लिये Oeckologic शब्द का प्रयोग प्राणियों के कार्बनिक व अकार्बनिक पर्यावरण के साथ सम्बन्धों से अर्थ में किया।

एनसाइक्लोपीडिया ऑफ एनवायर्नेमेण्टल साइंस के अनुसार "पारिस्थिति को मानव के अन्य प्राणियों तथा समस्त पर्यावरण के साथ सन्तुलन की एक आदर्श अवस्था है।"

ए.जी. टॉसले के अनुसार "पर्यावरण के जैविक एवं अजैविक तत्त्वों के सकल अन्तर्राभित स्वरूपों का ही परिणाम पारिस्थितिकी तंत्र है। वर्तमान में पारिस्थितिकी तंत्र पारिस्थितिकी विज्ञान के अध्ययन का महत्त्वपूर्ण पहलू भी है।"

जोर्स के अनुसार "किसी विशेष इकाई में घटित पर्यावरण के तत्वों एवं सम्पूर्ण जोवों के मध्य जटिल घटनाओं को पारिस्थितिको कहा जाता है।"

## 16.4 स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार:

स्वच्छ पर्यावरण हमें प्रकृति ने उपहार में दिया था जिसे हम सब ने मिलकर प्रदूषित कर दिया है। प्रदूषण के बहुत से कारण हैं जिसकी चर्चा हम दूसरी इकाइयों में करेंगे । आज हम प्रस्तुत इकाई में स्वच्छ पर्यावरण के अधिकार की चर्चा करेंगे स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार जीवन के मौलिक अधिकार का एक अभिन्न अंग है जो कि संविधान के अनुच्छेद -21 के अंतर्गत निहित है । अनुच्छेद -21 हमें स्वच्छ हवा, पानी और प्रदुषण मुक्त वातावरण में रहने का अधिकार देता है । और यह प्रदूषण मुक्त वातावरण सुनिश्चित करता है और एक नागरिक के रूप में स्वच्छ वातावरण हमें मिलना चाहिए जिसके रक्षा राज्य का दायित्व है इसी दायित्व के अंतर्गत हमें स्वच्छ पेय जल उपलब्ध कराया जाता है । सयुंक्त राज्य मानवाधिकार परिषद ने भी स्वच्छ पर्यावरण को सार्वभौमिक मानव अधिकार के रूप में अपनी मान्यता दी है। हमारे संविधान में समय समय पर आवश्यक संशोधन किये जाते हैं इसी क्रम में संविधान के 42 वें संशोधन जो कि सन 1976 में किया गया था द्वारा अनुच्छेद 48-ए जोड़ा गया जो कि राज्य को पर्यावरण की रक्षा और सुधार करने का निर्देश देता है । इसी के साथ अनुच्छेद 51-ए (छ) प्रत्येक भारतीय नागरिक को पर्यावरण के सरंक्षण का कर्तव्य सौंपता है ।

### 16.4.1 स्वच्छ पर्यावरण की विषयवस्तु एवं क्षेत्र :

पर्यावरण अध्ययन की विषय वस्तु में पर्यावरण एवं परिस्थितिकी के विविध घटकों, इनके पारिस्थितिकीय प्रभावों, मानव पर्यावरण अर्न्तसम्बन्धों आदि का अध्ययन सम्मिलित किया जाता है। साथ ही इसमें पर्यावरणीय अवनयन, प्रदूषण, जनसंख्या, नगरीयकरण, औद्योगीकरण तथा इनके पर्यावरण पर प्रभावों, संसाधन उपयोग एवं पर्यावरण संकट, पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन के विभिन्न पक्षों का भी अध्ययन किया जाता हैं।

वर्तमान में पर्यावरण अध्ययन का क्षेत्र व्यापक हो गया है जिसमें जीवमण्डलीय वृहद् पारिस्थितिक तन्त्र के तीनों परिमण्डलों, स्थलमण्डल एवं वायुमण्डल के संघटन एवं संरचना का अध्ययन सम्मिलित हैं। पर्यावरण में स्थल, जल, वायु एवं जीवमण्डल के अंतर्संबंधों का अध्ययन किया जाता है जिसमें सम्पूर्ण मानवीय क्रियाओं का निधार्रण होता है । इस प्रकार पर्यावरण भौतिक तत्त्वों का ऐसा समूह हैं जिसमें विशिष्ट भौतिक शक्तियाँ कार्य करती हैं एवं इनके प्रभाव दृश्य एवं अदृश्य रूप में परिलक्षित होते हैं।

20 वीं शताब्दी के अन्तिम दशकों में पर्यावरण की प्रकृति में पर्यावरण के भौतिक एवं जैविक घटकों को सम्मिलित रूप से अध्ययन किया जाने लगा तथा इनकी प्रभावकारी दशाओं का पारिस्थितिकीय

विश्लेषण भी आरम्भ हुआ। वर्तमान में पर्यावरण की प्रकृक्ति परिवर्तित स्वरूप में अग्रसर हो रही हैं तथा निम्नलिखित तथ्यों के अध्ययन को समावेशित किया जा सकता हैं:-

(1) स्थानिक प्रणाली- (Spatial System) एक प्रदेश का पर्यावरण दूसरे प्रदेश के भूगोल से प्रभावित होता है तथा उसे प्रभावित करता हैं । क्योंकि विभिन्न परस्पर स्थानिक सम्बन्ध रखते हैं।

(2) स्थानिक विश्लेषण (Spatial Analysis) स्थानिक विश्लेषण के द्वारा किसी भौगोलिक प्रदेश के पर्यावरण की अवस्थितिय भिन्नताओं को समझा जा सकता है।

(3) पारिस्थितिक प्रणाली- (Ecological System)- इसमें मानव एवं पर्यावरणके पारस्परिक प्रभावों के अध्ययन के साथ ही मानव द्वारा अपनाये अनुकूलन तथा रूपान्तरण का भी अध्ययन किया जाता है।

(4) पारिस्थितिकय विश्लेषण (Ecological Analysis)- इसमें किसी भौगोलिक प्रदेश के पर्यावरण के तत्वों और मनुष्य के मध्य जैविक एवं आर्थिक सम्बन्धों के समाकलिक अध्ययन का मूल्यांकन किया जाता है।

(5) प्राकृतिक आपदाओं का अध्ययन (Study of Natural Disasters) ज्वालामुखी, भूकम्प, बाढ़, सूखा, चक्रवातीय तूफान आदि को पर्यावरणीय अध्ययन में महत्व  मिला हैं।

(6) पर्यावरण में मानवकृत परिवर्तनों की भविष्यवाणी के लिए वैज्ञानिक (भौगोलिक) विकास (The Development of Scientific (Geographic) forecasts of Anthropogenic Changes in the environment)- को भी महत्त्व मिला हैं।

(7) प्रादेशिक समिश्र विश्लेषण (Regional Complexes Analysis)- इसके द्वारा किसी पर्यावरण की क्षेत्रिय भिन्नताओं की प्रादेशिक इकाइयों में पारिस्थिक विश्लेषण और स्थानिक विश्लेषण दोनों का समिश्र अध्ययन होता हैं।

(8) जैवमण्डल का अध्ययन (Study of Biosphere) वर्तमान समय में जैवमण्डलीय वृहद् पारिस्थिक तंत्र का पर्यावरण के अभिन्न घटक के रूप में अध्ययन किया जाता है ।

## 16.5 स्वच्छ पर्यावरण के विकास का अधिकार

## (Right to Development of a Clean Environment ):

स्वच्छ  पर्यावरण के विकास के अधिकार से तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को एक ऐसे वातावरण में रहने का  अधिकार है जो उसके स्वास्थ्य एवं कल्याण के लिए हानिकारक न हो  जिसके अंतर्गत उसे शुद्द हवा, पानी और सुरक्षित भूमि शामिल है ।  स्वच्छ पर्यावरण के विकास का अधिकार सामान्यत: सतत विकास के सिद्दांतों पर आधारित होता है  जहाँ मानवीय विकास तो होता ही है उसके साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण का भी धयान रखा जाता है । स्वच्छ पर्यावरण के विकास का आधिकार को हमारे देश में न्यायपालिका द्वारा मौलिक अधिकार ( अनुच्छेद -21)  के अंतर्गत माना है  वर्तमान की

परिस्थितयों को देखते हुए इसके लिए बहुत से कानून और नीतियाँ बनायी गई हैं इसका प्रमुख उदहारण पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 है। इसके अतिरिक्त वन्यजीव संरक्षण अधिनियम1972 एवं जलएवं वायु प्रदूषण नियंत्रण अधिनियम शामिल है ।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 में 26 धाराएँ हैं तथा 4 अध्याय हैं इस अधिनियम के लागू होने के पश्चात पर्यावरण सम्बन्धी पूर्व में बनाये गये कानूनों पर कोई प्रभाव नहीं होगा पूर्व में बनाये गये पर्यावरण सम्बंधित कानून याथावत हैं।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 की कुछ प्रमुख धारायें निम्नलिखित हैं –

**धारा 1-संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ**

(1) यह अधिनियम पर्यावरण (संरक्षण अधिनियम, 1986 कहलायेगा।

(2) इसका विस्तार सम्पूर्ण भारत पर है।

(3) यह ऐसी तिथि को प्रभावशाली होगा जिसे केन्द्रीय सरकार द्वारा शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत किया जाये, तथा इस अधिनियम के विभिन्न उपबन्धों को विभिन्न तिथियों से तथा देशों के लिए लागू किया जा सकेगा।

12 नवम्बर 1986 को लागू कर दिया गया था तथा इसका नाम पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 है

**धारा- 2** में विभिन्न मदों की परिभाषायें दी गई हैं। पर्यावरण अधिनियम में पर्यावरण को परिभाषा अत्यन्त व्यापक है जिसके अन्तर्गत पर्यावरण में जल, हवा और भूमि तथा मानवीय प्राणी अन्य जीवित प्राणी पौधे सूक्ष्म जीवाणु तथा सम्पत्ति में और उनके बीच विद्मान अंतर्संबंध सम्मिलित है।

**(धारा 3 से 6)**

अन्य अधिनियमों की भाँति पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के अध्याय 2 में भी केन्द्रीय सरकार को पर्यावरण संरक्षण में उचित कदम उठाने हेत कुछ साधारण शक्तियाँ प्रदत्त की गई हैं। अधिनियम की धारा 3 से 6 में उन शीक्तयों के प्रावधान उल्लेखित हैं-

**धारा 3**- केन्द्रीय सरकार की पर्यावरण के संक्षण और उसमें सुधार के लिए उपाय करने की शक्तियाँ (1) इस अधिनियम के उपबन्धों के अध्यधीन रहते हुए पर्यावरण की गुणवत्ता में सुधार लाने तथा उसके संरक्षण के लिए और पर्यावरणीय प्रदूषण के निवारण, नियन्त्रण तथा उपशमन के लिए केन्द्रीय सरकार को वे सारे उपाय करने की शक्ति होगी जो वह आवश्यक समझे।

(2) विशिष्टतयाँ और उपधारा (1) के उपबन्धों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऐसे उपायों के अन्तर्गत निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के संबंध में उपाय हो सकेंगे अर्थात् -

(i) राज्य सरकारों अधिकारियों और अन्य प्राधिकरणों की-

(क) इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के अधीन या

(ख) इस अधिनियम के उद्देश्यों से सम्बन्धित तत्समय प्रवृत किसी अन्य विधि के अधीन, कार्यवाहियों का समन्वय,

(ii) पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन के लिए राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम की योजना बनाना और उसको निष्पादित करना,

( iii ) पर्यावरण के विभिन्न आयामों के संबंध में उसकी क्वालिटी के लिए मानक अधिकथित करना,

(iv) विभिन्न स्रोतों से पर्यावरण प्रदूषकों के उत्सर्जन या निःस्सरण की क्वालिटी या सम्मिश्रण को ध्यान में रखते हुए भिन्न-भिन्न स्रोतों से उत्सर्जन या निःस्सरण के लिए इस खण्ड के अधीन भिन्न मानक अधिकथित किए जा सकेंगे,

(v) उन क्षेत्रों का निर्बन्धन जिनमें कोई उद्योग संक्रियाएँ या प्रसंस्करण या किसी वर्ग के उद्योग संक्रियाएँ नहीं चलाए जायेंगे या कुछ रक्षोपायों के अधीन रहते हुए चलाए जायेंगे,

(vi) परिसंकटमय पदार्थों को हथलाने के लिये प्रक्रिया और रक्षोपाय अधिकथित करना,

(vii) ऐसी दुर्घटनाओं के निवारण के लिए प्रक्रिया और रक्षोपाय अधिकथित करना जिनमें पर्यावरण प्रदूषण हो सकता है और ऐसी दुर्घटनाओं के लिए उपचारी उपाय अभिकथित करना,

viii) ऐसी विनिर्माण प्रक्रियाओं, सामग्री और पदार्थों की परीक्षा करना जिनसे पर्यावरण प्रदूषण होने की संभावना है,

(ix) किसी परिसर संयंत्र, उपस्कर, मशीनरी, विनिर्माण या अन्य प्रक्रिया सामग्री या पदार्थों का निरीक्षण करना और ऐसे प्राधिकरणों, अधिकारियों या व्यक्तयों को आदेश द्वारा ऐसे निर्देश देना जो वह पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण और उपशमन के लिए कार्यवाही करने के लिए आवश्यक समझे,

(x) पर्यावरण प्रदूषण की समस्याओं के संबंध में अन्वेषण और अनुसंधान करना और प्रयोजित करना।

(xi) इस अधिनियम के अधीन न्यस्त किये जाने वाले कृत्यों के पालन के लिए पर्यावरणीय प्रयोगशालाओं तथा संस्थानों की स्थापना करना अथवा मान्यता प्रदान करना,

पर्यावरणीय प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण तथा उपशमन से संबंधि नियम-पुस्तिकायें, संहितायें अथवा मार्ग दर्शिकायें तैयार करना,

(xiii) पर्यावरणीय प्रदूषण से जुड़े विषयों के संबंध में सूचनाएँ संग्रहित करना तथा उनका प्रचार-प्रसार करना,

(xiv) इस अधिनियम के उपबन्धों के प्रभावी क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने हेतु अन्य वे सारे विषय जिन्हें केन्द्रीय सरकार आवश्यक समझे।

पर्यावरण प्रदूषण का निवारण, नियंत्रण और उपशमन

**(धारा 7 से 17)**

पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 को पारित किये जाने का मुख्य उद्देश्य पर्यावरण प्रदूषण का निवारण, नियंत्रण और उसका उपशमन करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेत अधिनियम की धारा 7 से 17 तक में प्रावधान किये गये हैं। इन प्रावधानों के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार को पर्यावरण प्रदूषण का निवारण, नियंत्रण और उपशमन करने के लिए कार्य और उपाय करने की शक्तियां प्रदान की गई हैं।

**धारा 7**-उद्योग, संक्रिया आदि चलाने वाले व्यक्तियों को मानक से अधिक मात्रा में पर्यावरणीय प्रदूषणकारी के उत्सर्जन अथवा निस्सरण की अनुज्ञा नहीं होगी-कोई भी उद्योग संक्रिया या प्रक्रिया चलाने वाला व्यक्ति ऐसे मानक से अधिक मात्रा में जो विहित किये जाये पर्यावरणीय प्रदूषणकारी का न तो निःस्मरण कर सकेगा और न ही उत्सर्जन और न उसे ऐसा करने की अनुज्ञा दी जा सकेगी।

**धारा 8**-परिसंकटमय पदार्थों के व्यवहार करने वाले व्यक्ति द्वारा प्रक्रियात्मक रक्षोपायों का पालन किया जाना कोई भी व्यक्ति किसी परिसंकटमय पदार्थ के संबंध में विहित प्रक्रिया का अनुसरण और रक्षापायों का अनुपालन किये बिना व्यवहार नहीं करेगा।

**धारा 9-**कतिपय मामलों में प्राधिकारियों और अभिकरणों को जानकारी का दिया जाना- (1) जहाँ किसी घटना, दुर्घटना अथवा आकस्मिककृत्य के कारण विहित मानकों से अधिक मात्रा में पर्यावरणीय प्रदूषणकारी आ निस्सरण हुआ हो अथवा होने की आशंका हो, वहां ऐसे निस्सरण लिए उत्तरदायी व्यक्ति तथा उस स्थान का जहाँ ऐसे निस्सकरण हआ है अथवा होने की आशंका है. प्रभारी व्यक्त ऐसे निस्सरण के कारित पर्यावरणीय प्रदूषण को रोकने अथवा प्रशमित करने के लिए आबद्ध होगा, तथा इसके साथ ही वह विहित प्राधिकारी अथवा अभिकरण को-

(क) ऐसी घटना की सूचना देगा, तथा

(ख) मांग किये जाने पर उसे सभी प्रकार की सहायता देना।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट प्रकार की घटना की सूचना मिलने पर, चाड़े वह किसी भी प्रकार से मिले, बह प्राधिकारी अथवा अभिकरण ऐसे पर्यावरणीय प्रदूषण को रोकने के लिए यावत्साक्ष्य यथाशीघ्र वे सारे उपचार करेगा जो आवश्यक हो।

(3) उपधारा (2) में निर्दिष्ट उपचारात्मक कार्यों में यदि प्राधिकारी अथवा अभिकरण द्वारा कोई व्यय किया जाता है तो ऐसे व्यय की राशि मांग किये जाने की तिथि से संदत्त किये जाने की तिथि तक ऐसी दर से ब्याज सहित जो सरकार द्वारा नियत की जाये संबंधित व्यक्ति से भू राजस्व के बकाया की तरह वसूल की जा सकेगी।

**धारा 10**- प्रवेश और निरीक्षण की शक्तियां (1) इस धारा के उपबन्धों के अधीन रहते हुए केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त सशक्त किसी व्यक्ति को यह अधिकार होगा कि वह किसी भी समय ऐसी सहायता से, जो वह आवश्यक समझे, किसी स्थान में निम्नलिखित प्रयोजनों के लिए प्रवेश करें-

(क) उसे सौंपे गये केन्द्रीय सरकार के कृत्यों में से किसी का पालन करना,

(ख) यह अवधारित करने के प्रयोजन के लिए कि क्या और यदि हाँ तो किसी रीति से ऐस किन्हीं कृत्यों का पालन किया जाना है या क्या इस अधिनियम या तद्धीन बनाये गये नियमों के किन्हीं उपबन्धों का या इस अधिनियम के अधीन तालीम की गई सूचना के किये गये आदेश, दिये गये निर्देश अथवा अनुदत्त प्राधिकरण का पालन किया जा रहा है या किया गया है,

(ग) किसी संयंत्र अभिलेख, रजिस्टर, दस्तावेज या किसी अन्य सारवान् पदार्थ की परीक्षा करने के प्रयोजन से अथवा किसी ऐसे स्थान की तलाशी लेने के लिए जिसके संबंध में उसे यह विश्वास करने का

कारण हो कि उसके भीतर इस अधिनियम या तदधीन बनाये गये नियमों के अधीन कोई अपराध किया गया है या किया जा रहा है या किया जाने वाला है, तथा किसी ऐसे संयंत्र, अभिलेख, रजिस्टर, दस्तावेज या अन्य सारवान् पदार्थ का उस दशा में अभिग्रहण करने के लिये जब उसे यह विश्वास होने का कारण हो कि उससे इस अधिनियम या बनाये गये नियमों के अधीन दण्डनीय किसी अपराध के करने का साक्ष्य दिया जा सकेगा अथवा ऐसा अधिग्रहण पर्यावरणीय प्रदूषण के निवारण के लिए अथवा दूर करने के लिए आवश्यक है।

(2) किसी भी उद्योग, संक्रिया या प्रक्रिया को चलाने वाले अथवा किसी परिसंकटमय पदार्थ से व्यवहार करने वाले व्यक्ति का यह कर्तव्य होगा कि वह (1) के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा सशकत किये गये व्यक्ति को उक्त उपधारा के अधीन कृत्यों के निर्वहन में सीधे आवश्यक सहायता उपलब्ध कराये और यदि यह ऐसा करने में बिना किसी युक्तियुक्त कारण के असफल रहता है तो वह इस अधिनियम के अधीन अपराध का दोषी होगा।

(3) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (1) के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा सशक्त किसी व्यक्ति को, उसके कृत्यों के निर्वहन में जानबूझकर विलम्ब करेगा या बाधा पहुँबायेगा तो वह इस अधिनियम के अधीन अपराध का दोष होगा।

(4) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 के उपबन्ध या जम्मू कश्मीर राज्य किसी ऐसे क्षेत्र में जिसमें वह संहिता प्रवृत नहीं है उस राज्य क्षेत्र में प्रवृत किसी तत्स्थानीय विधि के उपबन्ध जहाँ तक हो सके, इस धारा के अधीन किसी तलाशी या अभिग्रहण को वैसे ही लागू होंगे जैसे वे यथास्थिति उक्त संहिता की धारा 94 के अधीन जारी किए गए वारण्ट के प्राधिकार के अधीन की गई किसी तलाशी या अभिग्रहण को लागू होते हैं।

**धारा 11**-नमूना लेने की शक्ति और उसके संबंध में अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया (1) केन्द्रीय सरकार या उसके द्वारा इस निमित सशक्त किसी अधिकारी को यह शक्ति होगी कि वह विश्लेषण के प्रयोजन के लिए किसी कारखाने, परिसर अथवा अन्य स्थान से वायु जल-मिट्टी या अन्य पदार्थ का उस रीति से जैसे विहित की जाये नमूना ले।

(2) उपधारा (1) के अधीन लिए गए किसी नमूने के किसी विश्लेषण का परिणाम किसी विधिक कार्यवाही में साक्ष्य में तब तक ग्राह्य नहीं होगा जब तक कि उपधारा (3) और (4) के उपबन्धों का पालन न कर दिया जाये।

(3) उपधारा (4) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए उपधारा (1) के अधीन नमूना लेने वाला व्यक्ति -

(क) उस स्थान के अधिष्ठाता व्यक्ति को अथवा ऐस अधिष्ठाता के कसी अभिकर्ता को वही तत्काल उसके विश्लेषण करने में अपने किसी आशय की सूचना को तामिल ऐसे प्रारूप में करेगा जो विहित किया जाये,

(ख) अधिष्ठाता या अधिष्ठाता के अभिकर्त्ता या किसी व्यक्ति की उपस्थिति में विश्लेषण के लिए नमूना संग्रहित करेगा,

(ग) ऐसे नमूने को एक आधान में रखवायेगा जिसे चिन्हत और सील बन्द कर दिया जायेगा और नमूना लेने वाले व्यक्ति और अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता अथवा किसी अन्य व्यक्ति और अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता अथवा किसी अन्य व्यक्ति दोनों द्वारा हस्ताक्षरित भी किया जायेगा,

(घ) ऐसा आधान या ऐसे आधानों को बिना किसी विलम्ब के धारा 12 के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित अथवा मान्यता प्राप्त प्रयोगशाला को भेजेगा।

(4) जब उपधारा (1) के अधीन विश्लेषण के लिए कोई, नमूना लिया जाता है और नमूना लेने वाला व्यक्ति अधिष्ठाता या उसके अभिकर्त्ता या व्यक्ति का उपधारा (3) के खण्ड (क) के अधीन सूचना की तामील करता है तब-

(क) ऐसे मामले में जहां अधिष्ठाता उसका अभिकर्ता या व्यक्ति जानबूझकर अनुपस्थित रहता है वहां नमूना लेने वाला व्यक्ति विश्लेषण के लिए नमूना आधान या आधानों के रखवाने के लिएलेगा, जिसे चिन्हित और सीलबन्द किया जाएगा और नमूना लेने बाला व्यक्ति भी उस पर हस्ताक्षर करेगा, और

(ख) ऐसे मामले में जहाँ नमूना लिए जाने के समय अधिष्ठाता या उसका अभिकर्ता या व्यक्ति उपस्थित रहता है किन्तु उपधारा (3) के खण्ड (ग) के अधीन अपेक्षित रूप से नमूने के चिन्हित और सीलबन्द आधान या आधानों पर हस्ताक्षर करने से इंकार करता है वहां चिन्हित और सीलबन्द आधान या आधानों पर नमूना लेने वाला व्यक्ति आधान और आधानों को धारा 12 के अधीन स्थापित या मान्यता और ऐसा व्यक्ति धारा 13 के अधन नियुक्त या मान्यता प्राप्त सरकारी विश्लेषक को अधिष्ठाता या उसके अभिकर्ता या व्यक्ति के यथास्थिति जानबूकर अनुपस्थित रहने वाला आधान या आधानों पर हस्ताक्षर करने से इंकार करने के बारे में लिखित जानकारी देगा।

**धारा 12**-पर्यावरणीय प्रयोगशालायें (1) केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा

(क) एक अथवा एक से अधिक पर्यावरणीय प्रयोगशाला स्थापित कर सकेगी,

(ख) इस अधिनियम के अधीन पर्यावरणीय प्रयोगशाला को सौंपे गये कृत्य करने के लिए किसी एक अथवा अधिक प्रयोगशाला या संस्था को पर्यावरणीय प्रयोगशाला के रूप में मान्यता प्रदान कर सकेगी-

(2) केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा निम्नलिखित को विनिर्दिष्ट करने के लिए नियम बना सकेगी।

(क) पर्यावरण प्रयोगशाला के कृत्य,

(ख) हवा, जल मिटूटी अथवा अन्य पदार्थ के नमूने विश्लेषण या परीक्षण के लिए उक्त प्रयोगशाला को भेजने के लिए प्रक्रिया उस पर प्रयोगशाला की रिर्पोट का प्रारूप और ऐसी रिपोर्ट के लिए संदेय फीस,

(ग) ऐसे अन्य विषय जो उस प्रयोगशाला को अपने कृत्य करने के लिए समर्थ करने की दृष्टि से आवश्यक या समीचीन हो।

**धारा 13**-सरकारी विश्लेषक केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिक द्वारा ऐसे व्यक्तियों को जिन्हें वह ठीक समझे और जो विहित अर्हतायें रखते धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन स्थापित या मान्यता प्राप्त

पर्यावरणीय प्रयोगशाला को विश्लेषण के लिए भेजे गये वायु, जल, मिट्टी या अन्य किसी पदार्थ के नमूनों के विश्लेषण के प्रयोजन के लिए सरकारी विश्लेषक नियुक्त कर सकेगी या मान्यता दे सकेगी।

**धारा 14**-सरकारी विश्लेषकों की रिपोर्ट-कोई दस्तावेज जिसका विश्लेषक द्वारा हस्ताक्षरित रिपोर्ट होना तात्पर्यत है इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में उसमें कथित तथ्यों के साक्ष्य के रूप में उपयोग किया जा सकेगा।

**धारा 15**-अधिनियम के उपबन्धों, नियमों, आदेशों और निदेशों के उल्लंघन के लिए शास्ति (1) जो कोई इस अधिनियम के उपबन्धों अथवा उसके अधीन बनाये गये नियमों अथ्वा जारी किये गये आदेशों या निदेशों का उल्लंघन करेगा अथवा उनका पालन करने में असफल रहेगा, ऐसे प्रत्यय उल्लंघन या असफलता के लिए ऐसी अवधि के कारावास से जो पांच वर्ष तक की हो सकेगी अथवा ऐसे जुमनि से जो एक लाख रुपये तक का हो सकेगा अथवा दोनों से दंडित किया जा सकेगा और यदि ऐसा जुमाने से जो प्रथम सफलता के दोषसिद्ध किये जाने के पश्चात् ऐसे प्रत्येक दिन के लिये जिसके दौरान ऐसी सफलता जारी रहती है, पांच हजार रुपये तक के जुर्माने से दण्डनीय होगा।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट असफलता अथवा उल्लंघन यदि दोषसिद्धी की तिथि से एक वर्ष के पश्चात् भी जारी रहता है तो अपराधी दोषसिद्धी पर कारावास से जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, दण्डीनय होगा।

**धारा 16-कम्पनियों द्वारा अपराध** (1) जहां इस अधियिम के अधीनअपराध किसी कम्पनी द्वारा किया गया है वहां प्रत्येक व्यक्ति जो उस अपराध के किए जाने के समय उस कम्पनी के कारोबार के संचालन के लिए उस कम्पनी का सीधे भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और साथ ही वह कम्पनी भी ऐसे अपराध के दोषी समझे जायेंगे और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दण्डित किए जाने के भागी होंगे, परन्तु इस उपधारा की कोई बात किसी ऐसे व्यक्ति को इस अधिनियम के उपबन्धित दंड का भागी नहीं बनाएगी, यदि वह यह साबित कर देता है उसकी जानकारी के बिना कया गया था या उसने ऐसे अपराध किए का निवारण करने के लिए सब सम्यक् तत्परता बरती थी।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी जहां इस अधिनियम के अपराध किसी कम्पनी द्वारा किया गया है और यह साबित हो जाता है कि वह अपराध कम्पनी के किसी निदेशक प्रबंधक सचिव या अन्य अधिकारी सहमति या मौनानुकूलता से किया गया है या उस अपराध का किया जाना उनकी किसी उपेक्षा के कारण माना जा सकता है वहां ऐसा निदेशक, प्रबंधक, प्रति वा अन्य अधिकारी भी उस अपराध का दोषी समझा जाएगा और तदनुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दण्डित किए जाने का भागी होगा।

**धारा 17-सरकारी विभागों द्वारा अपराध** (1) जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी सरकारी विभाग द्वारा किया गया है वहां विभागाध्यक्ष को अपराध का दोषी समझा जायेगा और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किये जाने और दण्डित किये जाने का भागी होगा,

परन्तु इस धारा की कोई बात किसी विभागाध्यक्ष को किसी दण्ड का भागी नहीं बनायेगी यदि वह यह साबित कर दे कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे अपराध के किये जाने का निवारण करने में सब सम्यक् तत्परता बरती थी।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी विभागाध्यक्ष द्वारा किया गया हो और यह साबित हो कि वह अपराध विभागाध्यक्ष से भिन्न किसी अधिकारी की सहमति या मौनानुकूला से किया गया है या अपराध का किया जाना उसकी किसी उपेक्षा के कारण हुआ माना जा सकता है जहाँ ऐसा अधिकारी भी उस अपराध का दोष समझा जायेगा और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किये जाने और दण्डित किये जाने का भागी होगा।

## 16.6 पर्यावरण के अपराधी:

प्रकृति के प्राकृतिक सौन्दर्य को जो व्यक्ति, समूह अथवा संगठन अपनी अवैध गतिविधियों से गंभीर नुक्सान पहुंचाते हैं वे पर्यावरण के अपराधियों की श्रेणी में आते हैं। उदहारण के लिए अवैध रूप से वनों की कटाई करना, वन्यजीवों की तस्करी करना, किसी भी प्रकार का प्रदूषण फैलाना, खतरनाक कचरे का अवैध निपटान करना( ई- कचरा, औद्योगिक अपशिष्ट), प्राकृतिक संसाधनों का अवैध रूप से शोधन करना, मृदा गुणवत्ता को नुक्सान पहुंचाना एवं ओजोन परत को नुकसान पहुँचाने वाले पदार्थों का अवैध व्यापार करना आदि कृत्य। इस प्रकार में लिप्त अपराधी आपराधिक समूहों में संगठित रहते हैं और अतात्कालिक आर्थिक लाभ हेतु ये कार्य करते हैं । इस प्रकार के अपराधियों का संगठन देश की सीमाओं के अंदर तो रहता ही है साथ ही अंतराष्ट्रीय सीमाओं का उलंघन कर हथियार, नशीले पदार्थ और मानव तस्करी जैसे अपराधों से जुड़े रहते हैं । भारत में हर साल पर्यावरण से जुड़े हज़ारों मामले दर्ज होते हैं, जिनमें वन्यजीवों और कचरे से संबंधित अपराध प्रमुख हैं।

### 16.6.1 पर्यावरण पीड़ित:

पर्यावरण पीड़ित व्यक्तियों का सम्बन्ध उन व्यक्तियों, परिवारों अथवा समूहों से है जो प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन, प्रदुषण, प्राकृतिक आपदा एवं जलवायु परिवर्तन आदि के कारण नकारात्मक ररूप से प्रभावित होते हैं जिनके कारण उनके जीवन में स्वास्थ्य सम्बन्धी,आजीविका से सम्बन्धी समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं और उन्हें पलायन करने पर मजबूर होना पडता है। दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि पर्यावरण पीड़ित व्यक्ति अथवा समुदाय वह है जो मानवीय गतिविधियों एवं पर्यावरणीय गिरावट के कारण निम्न स्तर के जीवन भोगने पर मजबूर होता है इसमें मनुष्य ही नहीं वन्य जीव भी शामिल हैं क्योंकि उनके प्राकृतिक आवाश समाप्त हो रहे हैं।

## 16.7 सारांश:

प्रस्तुत इकाई में हमने अपने पर्यावरण को जाना हमने यह भी जाना की स्वच्छ पर्यावरण किसे कहते हैं पर्यावरण की विषय वस्तु क्या है? पर्यावरण के क्षेत्र कौन कौन से हैं ? स्वच्छ पर्यावरण के के अधिकार क्या हैं? स्वच्छ पर्यावरण और विकास का अधिकार क्या है? पर्यावरण के अपराधी कौन कौन हैं एवं पर्यावरण से पीड़ित कौन हैं आदि प्रमुख बिन्दुओं को हमने जानने का प्रयास किया। इसके अतिरिक्त हमें पर्यावरण संरक्षण से सम्बंधित नियम एवं अधिनियमों को समझने का प्रयास किया। पर्यावरण के संरक्षण हेतु हम सभी को स्वयं के प्रयास करने चाहिए एक मनुष्य के रूप में हम सभी इस पारिस्थितिकी तंत्र के अहम हिस्सा हैं इस कारण हमारी जिम्मेदारी भी सबसे अधिक है यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने आस-पास के पर्यावरण को दूषित न करे और दूसरों को भी पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रेरित करे तो हमारी पृथ्वी हमें इस कार्य हेतु धन्वाद देगी और हमारा जीवन भी स्वस्थ एवं सुखमय होगा।

## 16.8 सन्दर्भ ग्रन्थ:


- भटनागर ए.बी.(2008) पर्यावरण शिक्षा, आर.लाल पुब्लिकेशन मेरठ।
- शर्मा.रमा, मिश्रा.एम्.के.(2009) पर्यावरण शिक्षण, अर्जुन पब्लिशिंग हॉउस नई दिल्ली ।
- शर्मा आर.ए.,चतुर्वेदीशिखा.(2009) पर्यावरण शिक्षा, आर.लाल पुब्लिकेशन मेरठ शर्मा,बी.डी. (2010) पर्यावरण शिक्षा, ओमेगा पब्लिकेशन नई दिल्ली ।
- https://hi.wikipedia.org/wiki
- https://www.eenorthcarolina.org/about/what-environmental-education
- https://iosrjournals.org/iosr-jhss/papers/Vol.28-Issue12/Ser-1/M2812018995.pdf
- https://www.unep.org/explore-topics/environmental-rights-and-governance/what-we-do/advancing-environmental-rights/what


## 16.9 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न:

1-पर्यावरण को परिभाषित कीजिए स्वच्छ पर्यावरण की विस्तार पूर्वक व्याख्या कीजिए ।

2- स्वच्छ पर्यावरण के अधिकार को विस्तार पूर्वक लिखिए ।

3- स्वच्छ पर्यावरण के विकास का अधिकार क्या है स्पष्ट कीजिए ।

4-पर्यावरण के अपराधी कौन हो सकते हैं स्पष्ट कीजिए ।

5- पर्यावरण के अपराधी ही नहीं हैं अपितु पर्यावरण पीड़ित भी हैं इस कथन को विस्तार से समझाइए ।